2024 | अंक 30

आशिमका

राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा प्रसारित पत्रिका

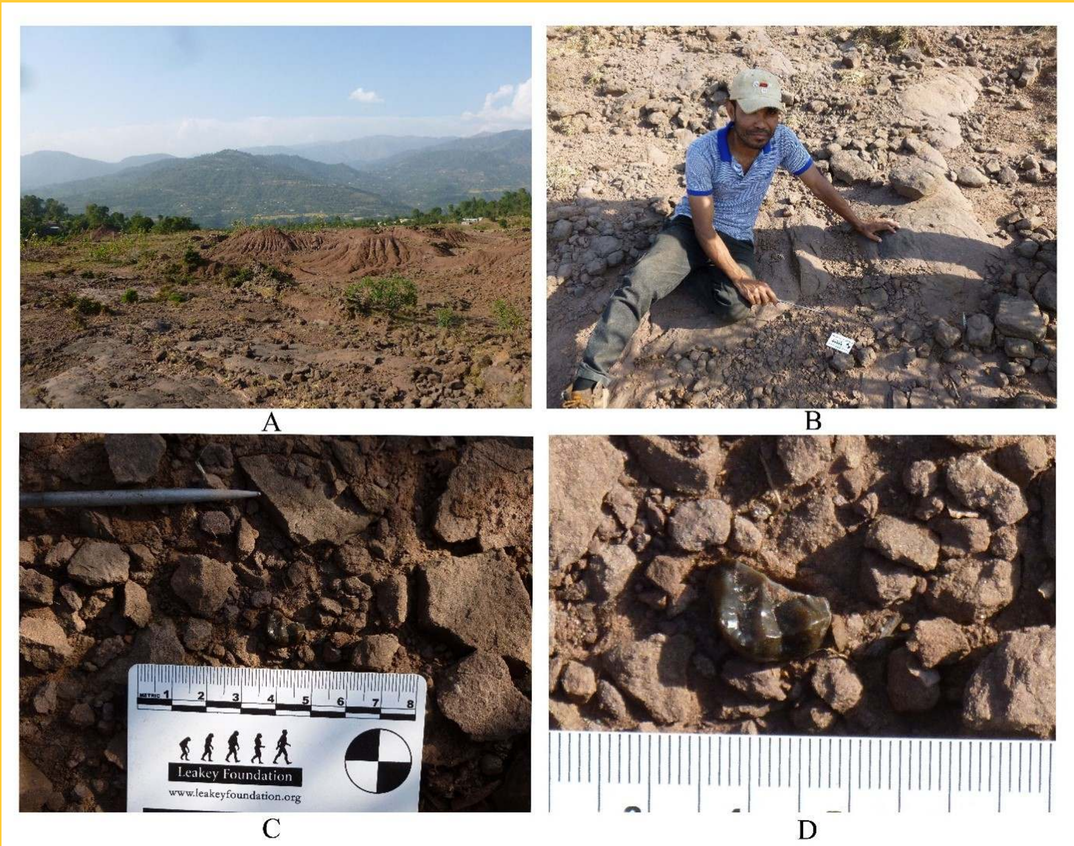

वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान

देहरादून–248001

2024 | अंक 30

अशिमका

राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा प्रसारित पत्रिका

संपादक
डॉ. गौतम रावत

सहायक संपादक
डॉ. छवि पंत पांडेय
श्री यशपाल बिष्ट

प्रकाशन प्रबंधन
श्री ज्ञान प्रकाश

प्रकाशक
राजभाषा कार्यान्वयन समिति
वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान
देहरादून–248001

आवरण चित्र
निचले शिवालिक निक्षेपों से होमिनाइड जीवाश्म

छायाकार
डॉ. एन. प्रेमजित सिंह

पार्श्व आवरण पृष्ठ छायाकार
श्री पवन पाटीदार

मुद्रण स्थल
एलाइड प्रिन्टर्स
84, नहर वाली गली, देहरादून
फोन : 0135–2654505

पत्रिका में प्रस्तुत विचार लेखकों के स्वयं अपने हैं। संपादक मंडल/विभाग/प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नही है।

विषय सूची

	निदेशक की लेखनी से		i
	संपादकीय		ii
1.	ऐतिहासिक शहर जोशीमठ में भूधँसाव – एक परिप्रेक्ष्य	मनीष मेहता	1
2.	उत्तम कार्य	रमेश चंद्र	6
3.	सूक्ष्म परन्तु अति महत्वपूर्ण (भाग प्रथम)	बरुण कुमार मुखर्जी	8
4.	हिमालय में शोधकार्य : चुनौती या अवसर	पवन पाटीदार और अमित कुमार	11
5.	पृथ्वी का चुंबकीय क्षेत्र	महेश रामराव कापावार	15
6.	झीलों का महत्व और संरक्षण की आवश्यकता	सोमदत्त	18
7.	हिन्दूकुश–हिमालय हुआ अधीर	रणधीर संजीवनी	22
8.	पृथ्वी पर जीवन के विकास से जुड़ी परिकल्पना	संजय गोस्वामी	26
9.	अमर शहीदों के चारण श्रीकृष्ण सरल का औपन्यासिक शिल्प	स्वाति चढ्ढा	31
10.	प्रदूषण से बचने का नया उपाय है हरित भवन	गोमती गोस्वामी	35
11.	जल की गुणवत्ता पर उत्पत्ति स्थल, प्रवाह दिशा व ऋतु का प्रभाव	दया शंकर त्रिपाठी	39
12.	परम्पराओं में अन्तर्निहित वैज्ञानिक सोच	सुमन रैना	43
13.	पर्यावरण के प्रति हमारे कर्तव्य एवं हमारे वर्तमान प्रयास	योगेश्वर वत्स	46
14.	उत्तराखंड में बढ़ता नमी प्रवाहः अतिवृष्टि की तीव्रता एवं आवृत्ति बढ़ने के संकेत	अमरजीत विद्यार्थी	49
15.	सेमीकंडक्टर और भारत में इसकी वर्तमान स्थिति	प्रवीण कुमार	51
16.	विज्ञान शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थी में नवाचार शिक्षा	सरोज शुक्ला	53
17.	स्वास्थ्य की नई दिशा : कंप्यूटर असिस्टेड सिस्टम और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस से ग्रीवा कैंसर की पहचान	सौरभ सैनी	56
18.	भारी धातु प्रदूषित मिट्टी और पानी का फाइटोरेमेडिएशन : प्रगति और परिप्रेक्ष्य	रिंकी यादव, मंजू देवी	58
19.	शहरी विकास और पर्यावरण संरक्षण का अंतर्संबंध और राकेश कुमार बछेती	दीप्ति सिंह वशिष्ठ, अर्चना बछेती	61
20.	कृत्रिम बुद्धिमत्ता : आधुनिक युग के विज्ञान और प्रौद्योगिकी का एक नया अध्याय	सूर्यांश बछेती और अर्चना बछेती	64
21.	अंतर्राष्ट्रीय व्यापार–अर्थ, महत्व और इसके स्वरूप	श्वेता त्यागी	67
22.	पाचन स्वास्थ्य और नींद की गुणवत्ता के सुधार में योग चिकित्सा की भूमिका	पूनम पांचाल	69
23.	रोबोट को विकसित करने के तकनीकी तरीके	संजय गोस्वामी	71

24.	बेबस पहाड़	चित्रलेखा मेहता	76
25.	क्या बचा रह जायेगा (पत्नी)	चित्रलेखा मेहता	76
26.	पिता की दुविधा	ऋचा कुमारी	77
27.	अभी बूट हैंग नहीं किए हैं!	रणधीर संजीवनी	78
28.	कुमांऊनी लोक त्यौहार : हरेला की वर्तमान परिदृश्य में यथार्थता	छवि पंत पांडेय	83
29.	भारतीय शास्त्रों में जल के महत्व का वर्णन	भवतोष शर्मा	86
30.	गणितज्ञ नील्स हेनरिक एबेल	सुभाष चंद्र लखेड़ा	88
31.	संस्थान समाचार		92

निदेशक की लेखनी से

अत्यन्त हर्ष व गौरव का विषय है कि इस वर्ष संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति, संस्थान की गृह पत्रिका "अश्मिका" का तीसवाँ अंक प्रकाशित कर रही है। इस वर्ष मार्च माह में "अश्मिका" ने विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा आयोजित प्रथम अखिल भारतीय वैज्ञानिक और तकनीकी राजभाषा सम्मेलन में मंत्रालय के सभी स्वायत्त शासी संस्थानों की हिन्दी पत्रिकाओं के मध्य तृतीय स्थान प्राप्त किया है। यह एक सराहनीय उपलब्धि है।

राजभाषा में कार्य करना हमारा संवैधानिक दायित्व तो है ही यह नैतिक दायित्व भी है कि हम स्वयं तो राजभाषा में कार्य करें ही तथा सभी को राजभाषा में कार्य करने के लिये प्रेरित व प्रोत्साहित भी करें। राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा राजभाषा के प्रयोग को सुगम बनाने के लिये कई संसाधनों का विकास किया गया है। जैसे "कंठस्थ" स्मृति आधारित अनुवाद का सॉफ्टवेयर हो या हिन्दी शब्द सिंधु शब्दकोश। दोनो आईटी उत्पाद सभी के लिये उपयोगी हैं। हिन्दी के उपयोग में तकनीकी अड़चनें समाप्त हो चुकी हैं अब जो अड़चन है वो केवल इच्छाशक्ति की है। प्रसन्नता का विषय है कि हमारे संस्थान में इच्छाशक्ति की अड़चन नहीं है और सभी अपने प्रशासनिक कार्यों में राजभाषा का प्रयोग निरन्तर रुप से कर रहें हैं व कार्य की प्रतिशतता को बढ़ाने के लिये भी उत्साहित हैं। सभी केन्द्रीय विभागों के कामकाज की भाषा राजभाषा हिन्दी हो तो इसका सहज व सीधा लाभ आम जनमानस को है। हम सभी का दायित्व है कि हम अपने अपने कार्यक्षेत्रों में अपने दैनिक कार्यों में राजभाषा का अधिकाधिक प्रयोग करें। संस्थान की गृहपत्रिका "अश्मिका" के द्वारा हमारा यही प्रयास है।

"अश्मिका" निरन्तर प्रगति पथ पर अग्रसर रहे व इसकी गुणवत्ता में निरन्तर वृद्धि होती रहे। यही कामना है तथा यही विश्वास है। "अश्मिका" के लिये मेरी अनन्त शुभकामनायें।

डॉ. विनीत कु. गहलौत
निदेशक

संपादकीय....

'अश्मिका' एक बार फिर नये लेखों, नये विचारों के साथ आपके सामने है। वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति के तत्वाधान में 'अश्मिका' का यह तीसवां सोपान है। अपने प्रथम अंक से ही संस्थान की यह गृह पत्रिका उत्तरोत्तर राजभाषा के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये प्रयासरत है। शोध संस्थान में विज्ञान ही प्रमुख कार्य है। अतः हमारा प्रयास सदैव इस दिशा में रहा कि हम अपने प्रशासनिक कार्यों को राजभाषा में तो करें ही परन्तु हम विज्ञान विषयक सामग्री भी सहज सरल व आमजन की भाषा में उपलब्ध करवाने का प्रयास करें। विगत वर्षों में विज्ञान के विविध विषयों पर प्रचुर मात्रा में मिले लेखों ने विश्वास दिलाया है कि हमारा विचार व प्रयास सही दिशा में है। वो समय भी दूर नहीं है जब जटिल से जटिल विषयों पर भी अध्ययन सामग्री आमजन की भाषा में सरलता से उपलब्ध होगी। भाषायी विविधता हमारे लिये संघर्ष का विषय न होकर हमारे सामर्थ्य का, हमारे गौरव का कारण बनेगा।

यह अंक जहां हमें पर्यावरण, प्रदूषण, आपदा से संबधित विभिन्न आयामों के साथ नवीन तकनीकी प्रगति से तो अवगत कराता है वहीं 'श्रीकृष्ण सरल' जैसे गुमनाम क्रान्तिकारी साहित्यकार से भी परिचय कराने के साथ ही उनको जानने की उत्कण्ठा भी उत्पन्न करता है। साथ ही सवाल पैदा करता है कि स्वतंत्रता संग्राम काल के कितने ऐसे व्यक्तित्वों को इतिहास में क्यों गुमनाम कर दिया गया ?

अश्मिका का यह अंक एक बार फिर अपने संक्षिप्त प्रयासों के साथ रोचक व उपयोगी विषयों पर सरल लेखों के साथ उपस्थित है। यह अंक कैसा लगा ? इस विषय पर अपने विचारों से हमें ashmika@wihg.res.in पर अवश्य अवगत करायें।

ऐतिहासिक शहर जोशीमठ में भूधँसाव – एक परिप्रेक्ष्य

मनीष मेहता
वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान, देहरादून

विगत कुछ समय से जोशीमठ शहर भूधँसाव के कारण चर्चा का विषय बना हुआ है। यह शहर हमारी साँस्कृतिक और आध्यात्मिकता का प्रतीक ही नही बल्कि हमारी सामरिक सुरक्षा की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। जोशीमठ में वर्तमान भूधंसाव एक चिंता का विषय है और इस शहर के भविष्य की अनिश्चितता का संकेतसूचक भी है। आज जोशीमठ में मकान, होटल जमींदोज होने लगे हैं। ऐतिहासिक नृसिंह मंदिर और अन्य 678 मकानों में दरारें आ चुकी हैं। इस संदर्भ में कई वैज्ञानिक, शैक्षणिक, गैरसरकारी संगठन, राजनैतिक, प्रशासनिक, मीडिया, आदि कई संस्थाएं अपनी रिपोर्टें प्रस्तुत कर चुकी हैं। स्वर्ग का द्वार कहे जाने वाले जोशीमठ के पहाड़ अगर दरक जाते हैं तो बद्रीनाथ धाम का रास्ता बंद हो सकता है। आखिर जोशीमठ की भौगोलिक परिस्थिति के अनुरूप इस हालत का ज़िम्मेदार कौन है? इस परिप्रेक्ष्य में पब्लिक डोमेन में उपलब्ध सूचना और अपने क्षेत्र भ्रमण के आधार पर, मैंने इस लेख द्वारा अपने विचार रखने का प्रयास किया है।

जोशीमठ उत्तराखण्ड के चमोली जिले में 30° 32′44″– 30° 33′27.67″ उ0 और 79° 32′ 46″– 79° 34′ 37″ पू0 के मध्य में स्थित है। आदि शंकराचार्य से भी शताब्दियों पहले से पौराणिक कथाओं में जोशीमठ का उल्लेख मिलता है। विदित है कि भगवान विष्णु के नरसिंह अवतार द्वारा हिरण्य कश्यप का वध करने के बाद भक्त प्रह्लाद ने जप करके उनका गुस्सा शांत किया। इस प्रकार भगवान नरसिंह इस रूप में जोशीमठ में विराजमान हुए। सर्दियों में बद्रीनाथ धाम के कपाट बंद होने पर, बद्रीनाथ जी जोशीमठ के इसी मंदिर में ही निवास करते हैं। आठवीं सदी में शंकराचार्य जी ने जोशीमठ में तपस्या की थी और भारत के चार मठों में से सबसे पहला मठ उन्होंने यहीं स्थापित किया था। इस जगह को तब ज्योतिर्मठ कहा जाता था, जो बाद में जोशीमठ कहलाया।

मंदिर के बारे में कहा जाता है कि यहां पर विराजमान भगवान नरसिंह की दाहिनी भुजा पतली होती जा रही है और स्कंद पुराण के केदारखंड में लिखा है कि जब ये भुजा टूटकर गिर जाएगी तब नर और नारायण पर्वत आपस में मिल जाएंगे तथा बद्रीनाथ जाने का रास्ता बंद हो जाएगा। जिसके बाद बद्रीनाथ भविष्य बद्री में पूजे जाएंगे। भविष्य बद्री जोशीमठ से 19 किलोमीटर दूर तपोवन में है और यहां पर बद्रीनाथ जी की मूर्ति एक विशाल शिला से अवतरित हो रही है। जोशीमठ का संबंध सातवीं से ग्यारहवीं शताब्दी के बीच कुमाऊं और गढ़वाल क्षेत्र पर शासन करने वाले कत्यूरी राजवंश से भी बताया जाता है। कहा जाता है कि कत्यूरी शासन में जोशीमठ का नाम कीर्तिपुर था, जो उनकी राजधानी थी। कत्यूरी शासक ललितशूर के ताम्रपत्र में इसे कीर्तिपुर और कहीं–कहीं पर कार्तिकेयपुर नाम दिया गया है। माना जाता है कि कत्यूरी राजवंश के संस्थापक कंटुरा वासुदेव ने यहां अपना शासन स्थापित किया था। इस राजवंश के राजाओं ने यहां हर तरफ मंदिरों की स्थापना करवाई। कीर्तिपुर को ही बाद में जोशीमठ कहा गया। जोशीमठ को स्वर्ग का द्वार कहा जाता है क्योंकि पाण्डव इसी रास्ते स्वर्ग यात्रा पर गये थे।

जोशीमठ शहर हिमालय की तलहटी में ऋषिकेश–बद्रीनाथ राष्ट्रीय राजमार्ग पर बसा है। शहर त्रिशूल पर्वत (7250 मीटर) की उतरती ढलान पर अलकनंदा के बाएं किनारे पर समुद्र तल से लगभग 800 मीटर की ऊंचाई पर स्थित है। इसके उत्तर–पश्चिम में बद्री पर्वत (7100 मीटर) और उत्तर में कामेट पर्वत (7750 मीटर) हैं। जोशीमठ उत्तर दिशा की ओर अलकनंदा के साथ क्रमशः पश्चिम और पूर्व में गोंखग देरा और एटी कंपनी नाला से घिरी पहाड़ी के मध्य ढलानों में स्थित है। कई बस्तियाँ 30°–40°की निचले और मध्य ढलानों में स्थित हैं। शहर के आसपास की जमीन की उपरी मोटी परत मिश्रित है जिसमें मिट्टी के अतिरिक्त निसेस के बड़े बोल्डर, ग्रे–रंग के शिस्टोज़ चट्टानें और सिल्टी– रेतीले मैट्रिक्स देखे गए हैं। चिंता वाली बात ये है कि जोशीमठ भूकंप जोखिम वर्गीकरण में ज़ोन–5 में आता है।

सामरिक दृष्टि से भी यह क्षेत्र बड़ा महत्वपूर्ण है। नीती और माणा गांवों तथा इनके आगे चीन बॉर्डर तक का रास्ता जोशीमठ से ही होकर गुज़रता है तथा बार्डर से लगी वास्तविक नियंत्रण रेखा की निगरानी हेतु थल–सेना जोशीमठ कैंप से ही प्रबंधन करती है। परिस्थितियों को मध्य नजर रखते हुए, दैनिक व सामाजिक गतिविधियों के त्वरित व सटीक प्रबंधन हेतु आपस के क्षेत्रों में बड़ी संख्या में सड़कों और रेल लाइन का नेटवर्क का कार्य निर्माणाधीन है।

हिमालय को पृथ्वी पर सबसे कम उम्र की पर्वत श्रृंखला माना जाता है और यह विवर्तनिक रूप से बहुत सक्रिय है। विवर्तनिक गतिविधि, खड़ी ढलानों, ऊंचाई की एक बड़ी श्रृंखला और अनिश्चित जलवायु परिस्थितियों के कारण, क्षेत्र स्वाभाविक रूप से कई प्राकृतिक खतरों के प्रति संवेदनशील है। भूकंप, भूस्खलन, मलबे का बहाव और अत्यधिक वर्षा की घटनाएं आम खतरे हैं जो हिमालय में मानव जीवन और बुनियादी ढांचे को बहुत नुकसान पहुंचाते हैं। जलवायु, स्थलाकृति और भूकंपीयता के प्रतिकूल प्रभाव के कारण हिमालयी क्षेत्र में भूस्खलन और मलबे का प्रवाह जैसी आपदाएं आम घटनाएं हैं। भू–उपयोग परिवर्तन, शहरीकरण, और भूस्खलन प्रभावित क्षेत्रों में जनसंख्या वृद्धि सहित मानव जनित गतिविधियों से आपदा की प्राकृतिक प्रवृत्ति अधिक बढ़ जाती है।

दिसंबर 2022 में, जोशीमठ के एक बड़े क्षेत्र में धंसने की दर में वृद्धि हुई। कुछ घरों में दरारें दिखाई दी तथा मलबे के प्रवाह में वृद्धि के कारण कुछ घरों में दरारें चौड़ी हो गईं। इस विषय पर पुराने अध्ययन और शोध कार्य को एक बार फिर याद किया गया। हालांकि, वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान के अध्ययन ने भी संकेत दिया था कि जोशीमठ ग्लेशियर द्वारा जमा किए गए बड़े मलबे के ऊपर स्थित है, जो कभी औली क्षेत्र के ऊपर बर्फ का आवरण था और गुरुत्वाकर्षण के कारण धीरे धीरे नीचे खिसकता चला गया। जोशीमठ के चारों ओर बिखरे हुए बड़े–बड़े बोल्डर जो मलबे के ऊपर बैठे हैं, यह दर्शाते है कि ग्लेशियरों ने इन्हें घाटी की ढलान पर जमा किया होगा।

मलबे का विशाल द्रव्यमान लगभग 12 किमी^{2} क्षेत्र में औली तक फैला है। जिसमें से 3.2 किमी^{2} (27%) वन क्षेत्र, 2.2 किमी^{2} (18%) उच्च ऊंचाई वाली चारागाह भूमि, 2.3 किमी^{2} (19%) खेती योग्य भूमि, 1.2 किमी^{2} (10%) बंजर भूमि और कुल आबादी क्षेत्र 3.1 किमी^{2} (26%) को कवर करती है। प्रमुख जल निकासी ए.टी. कंपनी नाला (3.5 किमी), दंडो–नोगग डेरा (3.7 किमी) और सिंहधार नाला (3.2 किमी) के उत्तरी बहने वाले डेंड्रिटिक नेटवर्क हैं और ये सभी बारहमासी धाराएं हैं जो औली बुग्याल से निकलती हैं और अलकनंदा में मिलती हैं। मारवाड़ी क्षेत्र के पास डेन्ड्रिटिक पैटर्न ढलानों पर असमेकित मलबे की उपस्थिति को इंगित करता है। मानसून के दौरान बढ़ते पानी के दबाव के साथ–साथ चल रहे सड़क चौड़ीकरण के कारण विशेष रूप से रविग्राम और परसारी के बीच लगातार ढलान अस्थिर हो गई है (चित्र–1)।

आखिर जोशीमठ में भू–धंसाव के बारे में कहा जाता है कि भू–गर्भ वैज्ञानिकों आरनोल्ड हेम और ऑगस्ट गैनसर ने सबसे पहले सन् 1939 में अपनी किताब केंद्रीय हिमालय में बताया था कि जोशीमठ एक बड़े लैंड स्लाइड जमाव पर बसा हुआ है। जोशीमठ और उसके आस पास के क्षेत्र के बारे में इतिहासकार शिव प्रसाद डबराल जी भी अपनी किताब में लिख चुके हैं कि जोशीमठ में लगभग 1000 साल पहले एक बड़ा भूस्खलन आया था जिसकी वजह कत्यूर राजाओं को अपनी राजधानी जोशीमठ से स्थानतरित करनी पड़ी थी। लेकिन पिछले 50 सालों की बात करें तो, 1976 के आस–पास जोशीमठ में काफी संख्या में भूस्खलन हुए थे, जिसकी जांच के लिए तत्कालीन गढ़वाल कमिश्नर महेश चंद्र मिश्रा की अध्यक्षता में एक कमेटी बनाई थी।

मिश्रा कमेटी की रिपोर्ट में साफ कहा गया था कि जोशीमठ भूस्खलन के मोटे आवरण या ऊपरी इलाकों से हिमनद द्वारा जमा हुए मलबे पर स्थित है। अर्थात जोशीमठ किसी ठोस चट्टान पर नहीं बल्कि पहाड़ों के अस्थिर मलबे पर बना है और यह क्षेत्र लंबे समय से धीरे–धीरे खिसक रहा है और अगर जोशीमठ को बचाना है तो यहां पर निर्माण कार्यों को सीमित करने की ज़रूरत है। कोई भी जरूरी निर्माण कार्य गहन जांच के बाद ही शुरू किया जाना चाहिये और बड़े निर्माण कार्यों को पूरी तरह बंद किया जाना चाहिये। जोशीमठ के आस पास के अनियमित बोल्डर्स यानी की बड़ी चट्टानी पत्थरों को बिल्कुल न छेड़ा जाए और ब्लास्टिंग पर पूरी तरह से रोक लगा दी जाए। जोशीमठ के

चित्र–1: जोशीमठ शहर का विहंगम दृश्य व भू–धंसाव दिखाती तस्वीरें

आस पास के क्षेत्र में पेड़ लगाने की बात भी कही गई थी ताकि ज़मीन की पकड़ बनी रहे और पानी की निकासी के लिए पक्के निकास बनाने की सलाह भी दी गई थी। लेकिन वर्तमान परिस्थितियों के मध्य नजर ऐसा लगता है कि इन सिफारिशों पर आवश्यकतानुसार अमल नहीं हुआ।

जोशीमठ में भू–धंसाव को समझने के लिए एक विशेष घटना पर ध्यान देना होगा। दिसंबर, 2009 को, एचआरटी की खुदाई के समय टनल बोरिंग मशीन (टी.बी.एम) ने सेलंग गांव से 3019 मीटर और औली से सतह से लगभग एक किलोमीटर नीचे पानी वाले स्तर को पंचर कर दिया। विषम दोष क्षेत्र के कारण टी.बी़.एम. का अगला भाग फंस गया था और टेलिस्कोपिक शील्ड प्रमुख वेज स्लाइड्स के द्वारा जाम हो गई थीं। परिणामस्वरूप, पानी धारण करने वाला क्षितिज जो संभवतः कई गाँवों के पीने योग्य पानी देता था, बाधित हो गया। शुरू में पानी साफ था लेकिन बाद में यह मटमैला हो गया। तीन महीने बाद भी पानी के असर वाले क्षितिज से डिस्चार्ज कथित तौर पर 600–700 लीटर प्रति सेकंड के बीच था। जलभृत से प्रतिदिन लगभग 5–6 मिलियन लीटर पानी बह रहा था जिससे इस क्षेत्र की अच्छी–खासी आबादी की पूर्ति हो सकती थी। जोशीमठ के आसपास के कुछ झरनों (खनोटीनाला, गौंखग ढ़ेरा और तहसील नाला) ने पहले से ही निर्वहन में कमी का संकेत देना शुरू कर दिया है। यह भी आशंका जताई गई है कि बड़े पैमाने पर जल–निकासी से क्षेत्र में संभावित रूप से जमीन का धंसना शुरू हो सकता है। सबसे हैरान करने वाली बात है कि इतने कमजोर क्षेत्र में इतने बड़े बड़े निर्माण करने के दौरान धरती के अंदर पानी की स्थिति को पता करने हेतु किसी तरह का हाइड्रोलोजिकल शोध तक नहीं किया गया।

दिसंबर 2022 के महीने में यह मास मूवमेंट की दहलीज पर पहुंच गया और धंसने लगा। जिसका कारण जलभृत से पानी के अचानक बह जाने से कई तरह के प्रभाव पड़े, जिससे अचानक और बड़े पैमाने पर जलस्तर में कमी से क्षेत्र में जमीनी धंसाव शुरू होने लगा, जिससे क्षेत्र में रहने वाले लोगों की समस्याएं बढ़ने लगी। इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि सुरंग के माध्यम से पानी की निकासी से क्षेत्र के चारों ओर के झरने सूख गए या जमीन के अंदर चले गये जिसने सॉलिफ्लक्शन को बढ़ाया और जमींन धंसने लगी। साथ ही शहर में उचित जल निकासी व्यवस्था और सीवर प्रबंधन न होना भी भू–धंसाव का एक मुख्य कारण रहा है। यहाँ पर यात्रा के दौरान हर साल लगभग 5 लाख यात्री रुकते है, जिसके कारण ये समस्या और भी जटिल हो गई।

आज सबसे बड़ा सवाल यह है कि आखिर जोशीमठ धंस क्यों रहा है? वैज्ञानिकों के अनुसार इस भू–धंसाव के कुल पांच कारण हैं।

1. **तपोवन–विष्णुगाड़ परियोजना की टनल का निर्माणः** जुलाई 2022 को भू–विज्ञानियों प्रो एसपी सती, डॉ नवीन जुयाल, प्रो वाईपी सुंदरियाल और डॉ शुभ्रा शर्मा का एक शोध पत्र "टुवर्डस् अंडरस्टेंडिंग द कॉज ऑफ सॉइल क्रीप एंड लेंड सबसिडेन्स अराउन्ड हिस्टोरिकल जोशीमठ टाऊन" जारी किया था। इसमें उन्होंने कहा था कि यहां पहाड़ी ढलानों को काटकर बहुमंजिला इमारतें खड़ी कर दी गई। तपोवन विष्णुगाड़ परियोजना की टनल जोशीमठ के नीचे करीब एक किमी गहराई में गुजर रही है और यह इस क्षेत्र के लिए कभी भी मुश्किलें पैदा कर सकती है। करेंट साइंस शोध पत्रिका में प्रकाशित गढ़वाल विवि के प्रो महेन्द्र प्रताप सिंह बिष्ट व डॉ. पीयूष रौतेला ने भी स्पष्ट कहा है कि परियोजना में टीबीएम की वजह से पानी का रिसाव बढ़ रहा है जो कि खतरे का संकेत है।
2. **ड्रेनेज व सीवेज अव्यवस्थाः** पिछले साल अगस्त में राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण की टीम ने जोशीमठ का सर्वेक्षण के बाद माना कि जोशीमठ के नीचे अलकनंदा में कटाव के साथ ही सीवेज और ड्रेनेज की उचित व्यवस्था न होने से पानी जमीन में समा रहा है। जिससे जमीन धंस रही है।
3. **भूस्खलन क्षेत्र में बसा शहरः** वर्ष 1976 में तत्कालीन गढ़वाल आयुक्त श्री महेश चन्द्र मिश्रा की अध्यक्षता में वैज्ञानिकों की 18 सदस्यीय कमेटी ने अपनी रिपोर्ट में स्पष्ट रूप में माना कि जोशीमठ ग्लेशियर और भू–स्खलन प्रभावित क्षेत्र वाली जगह पर बसा है। इसके ढलानों से किसी तरह की छेड़छाड़ नहीं की जानी चाहिए। भूस्खलन इलाकों में पेड़ न काटे जाएं, पहाड़ी ढलानों पर पौधरोपण किया जाए। पांच किमी के दायरे में किसी प्रकार का खनन न किया जाए।
4. **अनियंत्रित निर्माण कार्यों का बोझः** सुप्रीम कोर्ट की एक विशेषज्ञ समिति की अप्रैल 2014 की रिपोर्ट के अनुसार 'मेन सेंट्रल थ्रस्ट (एमसीटी) से ऊपर के क्षेत्रों को बांध परियोजनाओं से मुक्त रखने, पहाड़ों में वन–कटान, सुरंग निर्माण आदि के मद्देनजर क्षेत्र में हाइड्रो–जियोलाजिकल प्रभावों का अध्ययन करने की सिफारिश की गई थी। इसके बाद वर्ष 2014 में उत्तराखंड सरकार ने अपना 'क्लाइमेट चेंज एक्शन प्लान' जारी किया। जियोलॉजिक सर्वे ऑफ इंडिया के अनुसार जोशीमठ में निर्धारित क्षमता से अधिक बहुमंजिला इमारतें और आवासीय एवं व्यावसायिक भवनों के अंधाधुंध निर्माण से प्रति वर्गमीटर जमीन पर दबाव बढ़ गया है, जिससे भू धंसाव को बढ़ावा मिल रहा है।
5. **अलकनंदा नदी में हो रहा भू–कटावः** पिछले साल विशेषज्ञ समिति की रिपोर्ट में यह तथ्य भी सामने आया था कि जोशीमठ के नीचे अलकनंदा नदी में हो रहा कटाव भी खतरनाक साबित हो सकता है। वाडिया संस्थान की भूस्खलन वैज्ञानिक डॉ. स्वप्नामिता चौधरी के अनुसार और धौलीगंगा के संगम स्थल विष्णुप्रयाग में दोनों नदियां लगातार टो कटिंग कर रही हैं। विष्णुप्रयाग से ही जोशीमठ शहर का ढलान शुरू होता है। नीचे हो रहे कटाव के चलते जोशीमठ क्षेत्र का पूरा दबाव नीचे की तरफ हो रहा है। इसके चलते भू–धंसाव में बढ़ोतरी हुई है।

ऐसा प्रतीत होता है कि पिछले कुछ दशकों में जोशीमठ में वो सब निर्माण कार्य हुये जो कि मिश्रा रिपोर्ट मिश्रा समिति की सिफारिशों के विपरीत है। बड़े–बड़े होटलों, मकान, आर्मी और भा.ति.सी.पु. के आधारभूत निर्माण, औली

में कंस्ट्रक्शन, तपोवन–विष्णुगाड विद्युत परियोजना, आदि के रूप में बड़ी संख्या में निर्माण कार्य हुआ। जिससे जोशीमठ की ढलानों से काफी छेड़छाड़ हुई। साथ ही, अलकनंदा द्वारा भूकटाव, सीवेज तथा ड्रेनेज निकास की कोई उचित व्यवस्था न होने की वजह से होटलों और घरों से निकलने वाले पानी ने ढलानों को खोखला कर दिया जिसके परिणामस्वरूप जोशीमठ एक भू–धंसाव केंद्र के रूप में परिवर्तित हो गया। भूवैज्ञानिकों की माने तो जोशीमठ की भौगोलिक स्थिति के मुताबिक इसे एक गांव ही रहने देना चाहिए था लेकिन शहरीकरण और व्यापार के चलते इस इलाके पर इमारतों का बोझ बढ़ता गया जिसका परिणाम आज हम भुगत रहे हैं। यही नहीं भू–वैज्ञानिकों की मानें तो जो जोशीमठ के नीचे अलकनंदा नदी बह रही है वो भी लगातार पहाड़ की स्लोप की जड़ को काट रही है। लेकिन क्या जोशीमठ को बचाया जा सकता है? इस पर भूवैज्ञानिक प्रो एसपी सती का कहना है कि अब साइंस का कोई रोल नहीं रह गया है तथा अब तो सिर्फ लोगों को बचाने पर काम करना चाहिए क्योंकि जो नुकसान हो चुका है उसे अब ठीक नहीं किया जा सकता। फिर भी एक आशावादी नागरिक के रूप में और आज के समय में जो भी वैज्ञानिक संसाधनों की उपलब्धता, जनता और शासन की भागेदारी से स्थिति को नियंत्रण करने में सफलता मिलने की अपेक्षा रहेगी।

उत्तम कार्य

रमेश चंद्र
पंचकुला

1. **लेमॉन्टः** न्यूयॉर्क नगर के उत्तर में कुछ किलोमीटर की दूरी पर हडसन नदी के किनारे पेलीसेड्स नाम का एक छोटा सा नगर है। इस नगर मेंलेमॉन्ट नामक एक सम्पन्न नागरिक रहते थे । वे एक भव्य निवास, विस्तृत उद्यान तथा निकट के वन के एक भाग के मालिक थे। उन्होंने अपनी सम्पूर्ण संपत्ति को न्यूयॉर्क के विख्यात कोलम्बिया विश्वविद्यालय को दान कर दिया था। इस संपत्ति पर प्रो. मोरिस यूइंग नेवर्ष 1949 में लेमॉन्ट–डोहरटी भू–वैज्ञानिक वैधशाला की स्थापना की। यह वेधशाला भू–वैज्ञानिकों में लेमॉन्ट नाम से अधिक प्रसिद्ध है।

2. **समुद्री क्षेत्रों का सर्वेक्षणः** यूइंग ने समुद्री क्षेत्र में भूवैज्ञानिक तथा भूभौतिक सर्वेक्षणों के लिये 'वीमा' नामक जहाज़ पर उपयुक्त यंत्र लगाए तथा इनकी सहायता से 1950 के दशक में विश्व के विभिन्न महासागरों का सर्वेक्षण किया। इस सर्वेक्षण से प्राप्त आंकड़ों से सी–फ्लोर स्प्रेडिंग हाइपाथिसिस तथा प्लेट–टेक्टानिक्स सिद्धान्त को विशेष बल मिला। लेमॉन्ट के ब्रूस हीज़न तथा मेरी थोर्प ने सी–फ्लोर के मानचित्र बनाए जिनसे डाईवरजेंट तथा कॉनवरजेंट प्लेट मार्जिनस की रूप रेखा स्पष्ट हुईं। यह भी स्पष्ट हुआ कि हर डाईवरजेंट प्लेट बॉउन्ड्री पर एक मिड–ओशन रिज (मोर) होती है जो अनेक भागों में बंटी होती है। मोर के दो पड़ोसी भागों के शिखर स्ट्राइक–स्लिप ढंग से परस्पर खिसके हुए दिखते हैं।

3 **मिड–ओशन रिज पर भूकंपः** यूइंग ने लेमॉन्ट में यह प्रथा चलाई थी कि जिस स्रोत से भी भूविज्ञान सम्बन्धी डाटा मिलें उन्हें लेमॉन्ट में एकत्र कर लिया जाये। इस आशय के अनुसार, इन्टर–नेशनल जिओफ़िज़ीकल वर्ष के अंतर्गत विश्व भर में रिकार्ड हो रहे सिस-मोग्राम्स लेमॉन्ट में एकत्र होने लगे थे। इन से लेमॉन्ट में कार्यरत भूवैज्ञानिक लिन साइक्स ने मिड–ओशन रिज पर होने वाले भूकंपों के एपीसेंटर तथा फॉल्ट–प्लेन सोलुयशंस निकाले तथा यह सिद्ध किया कि रिज क्रेस्ट पर एक रिफ्ट वेली होती है जहां नॉर्मल फाल्ट श्रेणी के भूकंप होते हैं, तथा जहां रिज क्रेस्ट में ऑफ़सेट होता है वहाँ ऑफ़सेट पर स्ट्राइक–स्लिप श्रेणी के भूकंप होते हैं।

4. **जे टूज़ो विल्सन का सुझावः** टोरोन्टो विश्वविद्यालय के जे टूज़ो विल्सन ने वर्ष 1964 मे सुझाव दिया कि जहां मोर के रिज क्रेस्ट में ऑफसेट होता हैं वहाँ ट्रांस्फ़ार्म श्रेणी की स्ट्राइक–स्लिप फॉल्ट होती है। यदि रिजक्रेस्ट में लेफ्ट–लेट्रल ऑफसेट है तो उस ऑफसेट पर राइट–लेट्रल स्ट्राइक–स्लिप श्रेणी के भूकंप होंगे। इस घोषणा के एक वर्ष के अंदर ही लेमॉन्ट में उपलब्ध डाटा से लिन साइक्स ने इस विचार के पक्ष में अनेक उदाहरण प्रस्तुत कर दिये ।

5. **दक्षिण प्रशांत महासागर में भूकम्पमापी यंत्र लगा कर डाटा एकत्र करनाः** लगभग इसी समय लेमॉन्ट के जैक ओलीवर तथा ब्रायन आईज़ेकस ने टोंगा–कर्माडेक ट्रेंच के निकट टापुओं में लगभग तीन वर्ष तक भूकम्पमापी यंत्र लगा कर वहाँ होने वाले भूकंप रिकॉर्ड किये तथा सिद्ध किया कि टोंगा कर्माडेक ट्रेंच के नीचे लिथोस्फेरिक प्लेट लगभग 700 किलोमीटर तक मेंटल में धँसी हुई है।

6. **एन.जी.टी.:** वर्ष 1968 में जैक ओलीवर, ब्रायन आईज़ेकस तथा लिन साइक्स ने 'साईसमोलोजी एण्ड न्यू–ग्लोबल टेक्टोनिक्स' शीर्षक का लेख लिखा। इस लेख में उन्हों ने प्लेट–टेक्टानिक्स थिओरी का एक विहंगम चित्र प्रस्तुत किया। न्यू–ग्लोबल टेक्टोनिक्स (एन.जी.टी.) के आगमन से भू–विज्ञान के इतिहास में एक नया युग आरंभ हुआ है.

7. **उत्तम कार्य**: उत्तम कार्यों के विषय में सोचते हुए मैंने एक बार एक विद्वान से अनुरोध किया कि वे अपने सुझाव दें। उन्होंने उत्तर दिया: 'जहां पथिक विश्राम के लिये रुकते हों वहाँ कुआं खुदवाएं, फलों के पेड़ लगवाएं'.

भूविज्ञान के क्षेत्र में लेमॉन्ट की स्थापना करना प्रो मोरिस यूइंग का एक उत्तम कार्य था.

नोट्स:

1. वीमा का नाम अब R/V Maurice Ewing है।
2. एक बार समुद्र की एक लहर वीमा के डेक से मोरिस यूइंग को बहा कर ले गयी। परन्तु उन्हें बचा लिया गया।
3. वर्ष 1962 से 1970 तक लेमॉन्ट में मैं पी.एच.डी. की उपाधि के लिये प्रो जैक ऑलिवर का शिष्य था। इस लेख में दी गई अधिकांश जानकारी मुझे लेमॉन्ट में उन दिनों प्राप्त हुई थी ।

संदर्भ: विकिपिडिया।

सूक्ष्म परन्तु अति महत्वपूर्ण (भाग प्रथम)

बरुण कुमार मुखर्जी
वाडिया हिमालयन भूविज्ञान संस्थान, देहरादून

प्रिय भाईयों, बहनों, वरिष्ठजनों और मेरे दोस्तों, मैं अपना परिचय देते हुए खुद को गौरवान्वित महसूस कर रहा हूं 'मैं जिरकोन! मेरा यह नाम फ़ारसी ज़ारगुन से लिया गया है, जिसका अर्थ है 'सोने जैसा'। इस शब्द को 'जरगून' में बदल दिया गया है। अंग्रेजी शब्द 'जिरकोन' जिरकोन से लिया गया है, जो इस शब्द का जर्मन रूपांतरण है। पीले, नारंगी और लाल जिरकोन को 'हायसिन्थ' के रूप में भी जाना जाता है, यह नाम प्राचीन ग्रीक मूल का है। मैं एक ऑर्थोसिलिकेट हूं जिसमें SiO_4 को पृथक किया जाता है। टेट्राहेड्रा कोनों और किनारों को साझा करता हूँ। ZrO_8 डोडेकाहेड्रा-ZrO_8 डोडेकाहेड्रा समानांतर श्रृंखला बनाने के लिए किनारों को एक दूसरे के साथ साझा करता हूँ, मैं चतुष्कोणीय और समूह I41 में क्रिस्टलीकृत होता हूँ प्रत्येक O परमाणु 1.62 Å पर एक Si परमाणु और 2.13 और 2.27 Å पर दो Zr परमाणुओं से बंधा होता हूँ, ताकि प्रत्येक Zr परमाणु 2.13 Å पर चार O परमाणुओं से और 2.27 Å पर अन्य चार परमाणुओं से बंधा हो।

मैं जिरकोन ऑर्थोसिलिकेट के समूह से संबंधित एक खनिज हूं और धातु जिरकोनियम का एक स्रोत हूँ। मेरा रासायनिक नाम ज़िरकोनियम सिलिकेट है, और इसका रासायनिक सूत्र $ZrSiO_4$ है। जिरकोन में प्रतिस्थापन की कुछ सीमा दिखाने वाला एक अनुभवजन्य सूत्र हूँ। मेरा सिलिकेट पिघलने से अवक्षेपित होता है और इसमें उच्च क्षेत्र शक्ति असंगत तत्वों की अपेक्षाकृत उच्च सांद्रता होती है। जैसे हेफ़नियम लगभग हमेशा 1 से 4% तक की मात्रा में मौजूद होता है। मेरी क्रिस्टल संरचना चतुष्कोणीय क्रिस्टल प्रणाली की है। मेरा प्राकृतिक रंग रंगहीन, पीला–सुनहरा, लाल, भूरा, नीला और हरा होता है।

मेरा रासायनिक और भौतिक गुण और इसकी ट्रेस (trace elements) को शामिल करने और बनाए रखने की क्षमता काफी हद तक इसकी क्रिस्टल संरचना से निर्धारित होते हैं। मैं, काफी हद तक यौगिक और कई भौतिक गुणों को साझा और साथ ही परिवर्तनशील प्रदर्शन भी करते हैं। अंतिम सदस्यों के बीच ठोस समाधान की डिग्री क्योंकि कई जिरकोन–समूह खनिज आमतौर पर रेडियोधर्मी U और Th होते हैं, प्राकृतिक क्रिस्टल आमतौर पर पर्याप्त विकिरण क्षति का सामना करते हैं, और अधिकांश सटीक संरचना निर्धारण करते हैं। मैं अधिकांश आग्नेय और रूपांतरित चट्टानों में Zr के साथ मुख्य खनिज होता हूं। और क्रस्ट और लिथोस्फेरिक मेंटल दोनों के अस्थायी विकास की जांच में विशेष रूप से ट्रेस–तत्वों की संरचना में रुचि और सीटू माइक्रोप्रोब–अधिग्रहीत समस्थानिक युगों को बेहतर ढंग से नियंत्रित करने के प्रयास से प्रेरित किया गया हूँ। हम एकल जिरकोन क्रिस्टल में कई भूगर्भिक घटनाओं का रिकॉर्ड होता हूँ। ऐसी घटनाएँ या तो ख़तरनाक हो सकती हैं या जिरकोन–निर्माण और समय के साथ लाखों या अरबों वर्षों तक अलग हो सकते हैं। हम बाहरी आकारिकी और आंतरिक दोनों ही दृष्टि से अत्यंत परिवर्तनशील होता हूँ। बनावट। ये विशेषताएं खनिज के भूगर्भिक इतिहास को दर्शाता है। विशेषकर प्रासंगिक प्रकरणों को। मैग्मैटिक या मेटामॉर्फिक क्रिस्टलीकरण (और पुनः क्रिस्टलीकरण) का, तनाव बाहरी द्वारा लगाया जाता हूँ बल और मेटामिक्टाइजेशन और रासायनिक परिवर्तन के कारण होने वाले आंतरिक आयतन विस्तार क्षमता को दर्शाता हूं।

चित्र 1: यूरेहेड्रल आकार में विकसित जिरकोन क्रिस्टल (क्रिस्टल की लम्बाई 3 माइक्रोमीटर) का एक सुक्ष्म दृश्य, जिसमें खनिज समावेशन शामिल है।

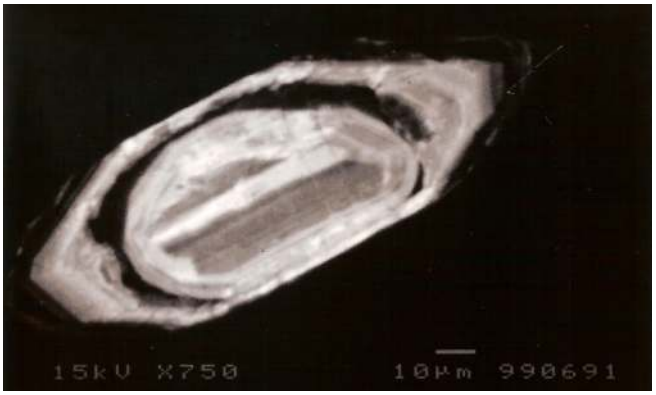

चित्र 2: आग्नेय, कायांतरण और हाइड्रोथर्मल जिरकोन की विशिष्ट विशेषताओं के साथ जिरकोन सीएल छवि आग्नेय वृद्धि क्षेत्र सेक्टर ज़ोनिंग के साथ एक आग्नेय जिरकोन

सामान्य चट्टानों में मेरा आकार लगभग 20 से 200 माइक्रोमीटर तक होता है। बड़े जिरकोन दाने, कई सेमी तक चौड़ा उदाहरणों के लिए 30 सेमी तक लंबे, ग्रेनाइटिक पेगमाटाइट्स, सिएनाइट्स में पाया जा सकता हूँ। किम्बरलाइट्स और कार्बोनाइट्स, जबकि एफ़ानिटिक ज्वालामुखी में बहुत छोटे जिरकोन दाने में पाया जा सकता हूं। मेरा बाहरी व आंतरिक अवलोकन एक्स–रे व इलेक्ट्रॉन के माध्यम से होता है। मैं चतुष्कोणीय हूँ और आमतौर पर प्रिज्मीय क्रिस्टल के रूप में बढ़ता हूँ। बढ़ाव (लंबाई–से–चौड़ाई) का अनुपात 1 से 5 तक हो सकता है। जहां तक मेरे बाहरी आकारिकी का सवाल है, यह रूपांतरित रूप से विकसित, या रूपांतरित रूप से संशोधित होता है। आमतौर पर भूमिगत और अत्यधिक पुनर्शोषित आकृतियों की विशेषता रखता हूँ लेकिन युरहेड्रल आकार (चित्र 1) भी संभव होता हूं विशेष रूप से बहुत तरल–समृद्ध में प्रणालियाँ जैसे कि एम्फिबोलाइट फेशियल अभ्रक शिस्ट या माइग्माटाइट्स में आम हूँ।

कैथोडोल्यूमिनसेंस (सीएल) या बैक–स्कैटरड इलेक्ट्रॉन (बीएसई) इमेजिंग जिरकोन की आंतरिक (ज़ोनेशन) संरचनाओं की पूरी तरह से जांच करने के लिए अधिक व्यापक रूप से उपयोग की जाने वाली विधियां दर्शाता हूँ, इस प्रकार जियोक्रोनोलॉजिकल और आइसोटोपिक विश्लेषण से पहले जिरकोन प्रकारों को वर्गीकृत किया जाता है।

ज़ोनेशन संरचना की एक स्पष्ट छवि जिरकोन की उचित डेटिंग के लिए महत्वपूर्ण है। इस ज़ोनेशन को नियमित स्कैनिंग इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोपी (एसईएम) में नहीं देखा जा सकता है, लेकिन सीएल में इसे छोटे रासायनिक परिवर्तनों और क्रिस्टल दोष संरचना में परिवर्तन के प्रति संवेदनशीलता के कारण स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

सीएल सिस्टम जिरकोन में ज़ोनेशन पैटर्न को जल्दी और कुशलता से प्रकट करने के लिए उत्कृष्ट मंच प्रदान करते हैं और जैसे कि मास स्पेक्ट्रोमेट्री और परमाणु जांच टोमोग्राफी जैसी उन्नत भूवैज्ञानिक लक्षण वर्णन तकनीकों के लिए एक प्रभावी स्क्रीनिंग टूल के रूप में नियोजित किया जा सकता है। विशिष्ट आग्नेय जिरकोन कण 4:1 से 2:1 की लंबाई–से–चौड़ाई अनुपात के साथ यूहेड्रल क्रिस्टल के अधीन होते हैं। तेजी से क्रिस्टलीकरण वाले जिरकोन के लिए बड़े लंबाई–से–चौड़ाई अनुपात मौजूद होते हैं जिनमें प्रिज्मीय और एसिक्यूलर आदतें होती हैं। आग्नेय जिरकोन की विशिष्ट आंतरिक विशेषता अच्छी तरह से विकसित ज़ोनिंग बनावट की उपस्थिति है जो तत्वों के विषम वितरण को दर्शाती है आग्नेय वृद्धि ज़ोनिंग, या ऑसिलेटरी ज़ोनिंग, आग्नेय जिरकोन की एक प्रमुख बनावट है, जो चमक भिन्नता के साथ एक संकेंद्रित विशेषता है। आग्नेय विकास ज़ोनिंग के अलावा, गतिज कारकों और क्रिस्टल विकास के तेजी से पर्यावरणीय परिवर्तनों के लिए जिम्मेदार सेक्टर ज़ोनिंग मौजूद हो सकती है, और यह ज्वालामुखीय जिरकोन के लिए विशिष्ट है, लेकिन प्लूटोनिक जिरकोन के लिए भी आम है।

आग्नेय और हाइड्रोथर्मल जिरकोन सामान्य जिरकोन प्रकार हैं, और इन प्रकारों का वर्गीकरण आगे के भू–कालानुक्रमिक और भू–रासायनिक विश्लेषण के लिए एक पूर्व अपेक्षित कदम है। क्योंकि आग्नेय और कायापलट जिरकोन कणों से प्राप्त आयु क्रमशः मैग्मा क्रिस्टलीकरण और कायापलट के समय को दर्शाती है। विशिष्ट भूवैज्ञानिक गतिविधियों के लिए सटीक आयु प्राप्त करने के लिए जिरकोन प्रकारों की जांच आवश्यक है। इसके अलावा, हाइड्रोथर्मल जिरकोन अनाज को आग्नेय और रूपांतरित जिरकोन से अलग करना भी महत्वपूर्ण है। सबसे पहले,

हाइड्रोथर्मल जिरकोन की सापेक्ष प्रचुरता हाइड्रोथर्मल घटनाओं की गतिविधि को दर्शाती है।

मैं शायद आधुनिक भूविज्ञानी के लिए उपलब्ध सबसे बहुमुखी क्रोनोमीटर है। निर्माण के दौरान, जिरकोन अपनी क्रिस्टल संरचना में मामूली मात्रा में यूरेनियम और थोरियम को शामिल करता है, लेकिन सीसा को शामिल नहीं करता है। हालांकि, समय के साथ, यूरेनियम और थोरियम के लगातार क्षय से रेडियोजेनिक Pb का संचय करता है, जो जिरकोन की समस्थानिक आयु के सटीक निर्धारण के लिए आधार प्रदान करता है। जियोक्रोनोमीटर के बीच जिरकोन को अद्वितीय बनाने वाली बात इसकी मजबूती है में एक कठोर, दुर्दम्य खनिज हूँ जो बरकरार रह सकता हूँ, भले ही इसकी मेजबान चट्टान कायांतरण हो, पिघल जाए या यंत्रवत् नष्ट हो जाए। इसके अलावा, कई तत्वों के लिए मेरे भीतर प्रसार दर बेहद कम है, इसलिए मैं आमतौर पर मैग्मैटिक तापमान के संपर्क में आने पर भी उम्र और अन्य समस्थानिक जानकारी बरकरार रखता हूँ। मुझे पता है कि यह बहुत अधिक आत्म–मूल्यांकन है और आप मेरे महत्व के बारे में आगे पढ़ने में रुचि खो रहे होंगे, लेकिन मैं कसम खाता हूं कि मेरे पास यह कहने की कोई तीव्र इच्छा नहीं है कि केवल मेरे पास ही सब कुछ है, केवल अपने बारे में विस्तार से बता रहा हूँ, यदि आप मुझे अनुमति दें तो मैं अपनी कहानी का दूसरा भाग लेकर आ सकूं।

अंत में इस मंच को छोड़ने से पहले मैं सिर्फ इतना कहना चाहता हूँ पृथ्वी पर सबसे पुरानी चट्टानें कौन सी हैं और उनका निर्माण कैसे हुआ? वह सामग्री जो इन मूलभूत प्रश्नों में सबसे बड़ी अंतर्दृष्टि रखती है, क्योंकि इसमें पृथ्वी के कुछ शुरुआती इतिहास का रिकॉर्ड हो सकता है, एक छोटे टाइम कैप्सूल की तरह, जिरकोन इन घटनाओं को रिकॉर्ड करता है और मैं शायद विस्तार से बता सकता हूँ।

आपका धन्यवाद

भवदीय
आपका
जिरकोन

हिमालय में शोधकार्यः चुनौती या अवसर

पवन पाटीदार और अमित कुमार
वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान, देहरादून

हिमालय, अर्थात हिम का निवास जो की दुनिया के सबसे प्रतिष्ठित एवं खुबसूरत पर्वत श्रृंखलाओं में से एक है। हिमालय में दुनिया के कई सबसे ऊँचे शिखर हैं। इन्हीं शिखरों में पृथ्वी का सबसे ऊँचा पर्वत माउंट एवरेस्ट शामिल है। अन्य उल्लेखनीय शिखरों में के2, कंचनजंगा, ल्होत्से, मकालू, चो ओयू, धौलागिरी, मनास्लु, और नंगा पर्वत शामिल हैं। उत्तराखंड के प्रमुख शिखरों में नंदा देवी, द्रोणगिरि, भागीरथी, त्रिशूल, शिवलिंग इत्यादि शामिल है, जिनका आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक महत्त्व पुराणों एवं महाकाव्यों मे वर्णित है। हिमालय के इन्ही पर्वतों से ग्लेशियरों की उत्पत्ति होती है। ध्रुवीय क्षेत्रों के बाहर ग्लेशियरों की सबसे बड़ी सघनता भी शोधकर्ताओं को आकर्षित करती है जिसके कारण हिमालय को तीसरा ध्रुव भी कहा जाता है। हिमालय, आसपास के क्षेत्रों की जलवायु को प्रभावित करता है, मानसून के पैटर्न को प्रभावित करता है, और कई नदियों के लिए जल स्रोत प्रदान करता है, जिनमें गंगा, सिंधु, और ब्रह्मपुत्र शामिल हैं। यहाँ जलवायु की एक श्रृंखला है, आधार पर उष्णकटिबंधीय से लेकर ऊँचाई पर अल्पाइन तक, और यह जैवविविधता में समृद्ध है। हिमालय का सांस्कृतिक और धार्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान है। यह श्रृंखला कई धर्मों के लिए पवित्र है, जिसमें हिंदू धर्म, सिख तथा बौद्ध धर्म शामिल हैं। हिमालय में कई मंदिर, मठ, और पवित्र स्थल हैं, जहाँ प्रतिवर्ष लाखों श्रद्धालु एकत्रित होते हैं।

चित्र 1: द्रोणागिरी पर्वत का एक दृश्य, चमोली जिला, उत्तराखंड

हिमालयी क्षेत्र में अनुसंधान एक अद्वितीय अवसर प्रस्तुत करता है क्योंकि यह अपने समृद्ध जैव विविधता, भूवैज्ञानिक महत्व और सांस्कृतिक विविधता के कारण विशेष है। यह जलवायु परिवर्तन, हिमनदविज्ञान, जैव विविधता संरक्षण और पर्यावरण के अध्ययन के लिये आदर्श स्थल है। इसके अतिरिक्त, हिमालय का अध्ययन आपदा प्रबंधन और प्राकृतिक जोखिमों के प्रति संवेदनशील समुदायों के लिए आवश्यक रणनीतियां बनाने में योगदान कर सकता है। वैज्ञानिक दृष्टि से हिमालय की जटिल टेक्टोनिक, भूकंपीयता, जलवायु विज्ञान के बारे में सीमित समझ और समग्रता की कमी यहाँ कार्य करने के लिए अद्वितीय अवसर प्रदान करती है परिणामस्वरुप हिमालय में अंतरराष्ट्रीय वैज्ञानिकों एवं संगठनो का विज्ञान के प्रति आकर्षण यहां की महत्ता को दर्शाता है ।

हिमालय में फील्डवर्क करना शोधकर्ताओं के लिए एक चुनौतीपूर्ण और पुरस्कृत अनुभव है। हिमालय नूतन फोल्ड पर्वत हैं, जिसका अर्थ है कि वे अभी भी उठ रहे हैं और टेक्टोनिक गतिविधियाँ अनवरत जारी हैं। यह क्षेत्र भूकंप, भूस्खलन, बर्फबारी जैसी प्राकृतिक आपदाओं के लिए उत्तरदायी है। पिछले कुछ वर्षों में हिमालय कई प्रकार की आपदाओं का सामना कर चुका है जिससे बड़ी संख्या में लोग प्रभावित हुए एवं लाखों करोडों सम्पत्ति का नुकसान हुआ है जैसे हिमनद झील विस्फोट बाढ़, सिक्किम; चमोली फ्लैश फ्लड, 2021; केदारनाथ आपदा, 2013; लेह फ्लैश फ्लड, 2010; काठमांडू भूकम्प आपदा 2015, आदि ।

क्षेत्र की अनूठी भौगोलिक, जलवायु, और विविध स्थलाकृतियां विभिन्न प्रकार की चुनौतियां उत्पन्न करती हैं। हिमालय में विभिन्न क्षेत्रों में जलवायु विविधता है जैसे लद्दाख का ठंडा, सूखा एवं शुष्क क्षेत्र जहाँ जुलाई अगस्त में बारिश नहीं होती है। यही वह समय है जब शोधकर्ता शोध कार्य के लिये यहां विचरण कर सकते हैं क्योंकि इस समय यहाँ तापमान कार्य करने के लिए अनुकूल रहता है। हिमालय में शोधकार्य के लिए शोधकर्ता समान्यतः अनुकूल मौसम ही चुनते हैं जो कि मई–जून एवं सितंबर–अक्टूबर का महीना होता है जब तापमान ज्यादा ठंडा नहीं रहता, वर्षा एवं बर्फवारी की संभावना कम होती है, फिर भी यहां कुछ सामान्य चुनौतियां हैं जो शोधकर्ताओं को हिमालय में फील्डवर्क के दौरान सामना करनी पड़ती हैं। जो कि निम्न हैः

1. **ऊंचाई एवं खुरदरा भूभागः** हिमालय अपने खड़ी ढलानों, गहरे घाटियों और ऊंचे शिखरों के लिए जाना जाता है। इस भूभाग में विचरण करने के लिए शारीरिक फिटनेस और विशेष उपकरणों की आवश्यकता होती है। ऊंची ढलानों, अस्थिर जमीन, और अप्रत्याशित मौसम के साथ उच्च–जोखिम वाले क्षेत्रों में काम करने से दुर्घटनाओं और चोटों की संभावना बढ़ जाती है। ऊंचाई वाले स्थल पर वायुमंडल में ऑक्सीजन की कमी रहती है जिससे श्वसन प्रक्रिया में बाधा पहुंचती है जो कि सिरदर्द, उल्टी, चक्कर आना, और यहां तक कि गंभीर स्थितियों जैसे फुफ्फुसीय या मस्तिष्कीय एडिमा का कारण बन सकता है। अनुकूलन और स्वास्थ्य की सावधानीपूर्वक निगरानी महत्वपूर्ण है। गिरने, भूस्खलन और अन्य दुर्घटनाओं का जोखिम उच्च होता है। ऐसे क्षेत्रों में सर्वेक्षण करना या जानकारी उपलब्ध करना अति कठिन कार्य है।

2. **अप्रत्याशित और चरम मौसमः** हिमालय में चरम मौसम की स्थितियां होती हैं, जिसमें भारी बारिश, बर्फबारी, और अचानक तापमान परिवर्तन शामिल हैं। हिमालय के कठिन मौसम में शोधकर्ताओं को तेज हवाओं, चट्टानों के ढेर, खतरनाक जलवायु और संभावित भूस्खलनों का सामना भी करना पड़ता है। ये स्थितियां फील्डवर्क को खतरनाक बना सकती हैं और योजनाओं को बाधित कर सकती हैं। इस वजह से उपकरण को क्षति पहुंचती है जिसे उनका कार्य प्रभावित होता है। अत्याधिक बर्फबारी से कई बार काम छोड़ना भी पड़ जाता है।

3. **प्राकृतिक आपदाः** हिमालय में भूकंप, भूस्खलन, बर्फबारी जैसी प्राकृतिक आपदाओं का डर हमेशा बना रहता है। यहाँ की संवेदनाशील चट्टानें, भारी बारिश, खड़ी ढलान इन आपदाओ को बढ़ावा देती है।

4. **दूरस्थ स्थान एवं सीमित आधारभूत संरचनाः** कई फील्ड साइट्स दूरस्थ क्षेत्रों में हैं जहां सड़कों, संचार, और चिकित्सा सुविधाओं की उपलब्धता सीमित होती है

अथवा नही होती है। जिसके कारण आपातकालीन परिस्थितियों से बाहर निकलना कठिन हो सकता है। शोधकर्ताओं को अक्सर अपने उपकरण और आपूर्तियों को खुद लाना पड़ता है, क्योंकि स्थानीय आधारभूत संरचना की कमी होती है। जिसके कारण भारी उपकरण को लेकर जाना संभव नहीं हो पाता। यहां सावधानीपूर्वक योजनाबद्ध तरीके से कार्य करने की आवश्यकता होती है।

5. **नेविगेशन एवं संचार चुनौतियाँ:** खुरदरे भूभाग और घनी वनस्पति के कारण नेविगेशन कठिन हो सकता है, जिससे शोधकर्ताओं को यह सुनिश्चित करने के लिए उन्नत मैपिंग और जीपीएस कौशल की आवश्यकता होती है कि वे सही रास्ते पर रहें। फील्ड साइटों की दूरस्थता के कारण, बाहरी दुनिया के साथ संचार सीमित हो सकता है, जिससे समन्वय करने और आपातकालीन स्थिति में संचार करना मुश्किल हो जाता है।

6. **राजनैतिक और कानूनी चुनौतियां:** हिमालय कई देशों में फैला हुआ है जिनके विभिन्न राजनीतिक माहौल और नियम हैं। शोधकर्ताओं को जटिल परमिटिंग प्रक्रियाओं, सीमा प्रतिबंधों, और सुरक्षा चिंताओं का भी सामना करना पड़ सकता है। विभिन्न देशों में परमिट प्राप्त करना और नियमों का पालन करना जटिल और समय लेने वाला हो सकता है। शोधकर्ताओं को विभिन्न नियमों से अवगत होना चाहिए और कानूनी समस्याओं से बचने के लिए नियमों व कानुनों का अनुपालन सुनिश्चित करना चाहिए।

7. **पर्यावरणीय संरक्षण:** हिमालय विविध पारिस्थितिक तंत्रों और लुप्तप्राय प्रजातियों का घर है। शोधकर्ताओं को अपने शोध को पर्यावरणीय संरक्षण और स्थानीय नियमों और रीति–रिवाजों के प्रति सम्मान के साथ संतुलित रहना चाहिए, अपने व्यक्तिगत लाभ के लिये प्राकृतिक संवेदना के साथ समझौता नहीं करना चाहिए।

चित्र 2: जटिल स्थानों पर कार्यरत वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान की टीम

8. **सांस्कृतिक संवेदनशीलता:** फील्डवर्क में अक्सर स्थानीय समुदायों के साथ बातचीत शामिल होती है। शोधकर्ताओं को सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील होना चाहिए और स्थानीय रीति–रिवाजों और परंपराओं का सम्मान करना चाहिए ताकि निवासियों के साथ अच्छे संबंध बनाए जा सकें एवं सांस्कृतिक गलतफहमी या संघर्ष से बचा जा सके।

9. **वन्यजीव और प्राकृतिक खतरे:** हिमालय विभिन्न प्रकार के वन्यजीवों का घर है, जिसमें भालू और तेंदुए शामिल हैं, जो फील्ड में काम करने वालों के लिए जोखिम पैदा कर सकते हैं। इसके अलावा, हिमस्खलन और भूकंप जैसे प्राकृतिक खतरे इस क्षेत्र में अधिक संभावित हैं।

10. **प्रवाहित नदियाँ:** हिमालय में प्रवाहित नदियां तेजी के साथ प्रवाहित होती हैं उनका माप लेना नमूना (सैम्पलिंग) चयन करना अत्याधिक चुनौतिपूर्ण एवं साहस के कार्य है । बारिश के मौसम में इनका बहाव और तेज हो जाता है, जिससे यह कार्य अत्यन्त दुष्कर हो जाता है।

शोधकर्ताओं को इन चुनौतियों को सावधानीपूर्वक सामना करना चाहिए, जैसे कि गहन अनुसंधान करना, आवश्यक परमिट प्राप्त करना, एक अच्छी तरह से सुसज्जित टीम बनाना, और आपातकालीन परिस्थितियों के लिये योजना बनाना। सफल फील्डवर्क अनुभव के लिए सुरक्षा प्रोटोकॉल और सांस्कृतिक जागरूकता महत्वपूर्ण हैं। हिमालय जैसे कठिन क्षेत्र में जीवन व्यतीत करना युद्ध में विजय प्राप्त करने के समान है, जहां पर्वतीय जलवायु और जंगली जीवन हर पल आपकी परीक्षा लेते हैं। दुरस्थ स्थानों पर बसे गांव और वहां रहने वाले लोग आज की 21वीं सदी में भी बुनियादी सुविधाओं से वंचित हैं, लेकिन उनमें अपनापन और उत्साह दिखाई देता है। हिमालय में शोधकार्य एक अद्वितीय अवसर है, जहां प्राकृतिक सौंदर्यता, शुद्ध हवा, और जल का अनुभव किया जा सकता है, और इसलिए लाखों लोगों को इसका आनंद उठाने का अवसर मिलता है। जो लोग ऐसे क्षेत्रों में काम कर रहे हैं या करते आ रहे हैं, उनके लिए सदैव आदर की भावना होती है और मेरे लिए वे प्रेरणा स्रोत हैं। उन्हें सलाम।

पृथ्वी का चुंबकीय क्षेत्र

महेश रामराव कापावार
वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान, देहरादून

गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र की तरह चुंबकीय क्षेत्र को देखा या छुआ नहीं जा सकता। हम अपने और अपने आस–पास की वस्तुओं पर पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र के खिंचाव को महसूस कर सकते हैं, लेकिन हम चुंबकीय क्षेत्र को इतने प्रत्यक्ष तरीके से अनुभव नहीं कर पाते हैं। हम चुंबकीय क्षेत्र के अस्तित्व के बारे में धातु के चुंबकीय टुकड़ों जैसी वस्तुओं पर इसके प्रभाव से जानते हैं। चुंबकीय क्षेत्र एक कम्पास सुई द्वारा प्रकट होता है जो हमेशा लगभग उत्तर की ओर इशारा करती है। किसी दिए गए बिंदु पर और एक निश्चित समय पर, जब पृथ्वी के चुंबकीय क्षेत्र का माप किया जाता है, तो यह मापा हुआ मूल्य विभिन्न स्रोतों के योगदान से उत्पन्न होता है।

- मुख्य क्षेत्र, स्वयं–मौजूदा जियोडायनेमो तंत्र द्वारा पृथ्वी के तरल बाहरी कोर में उत्पन्न होता है;
- पृथ्वी की पपड़ी में चुंबकीय चट्टानों द्वारा उत्पन्न क्रस्टल (पर्पटी) क्षेत्र;
- बाहरी क्षेत्र, पृथ्वी के चुंबकीय क्षेत्र का सौर विद्युत चुम्बकीय विकिरणों और सौर हवा के साथ संपर्क के कारण आयनमंडल और मैग्नेटोस्फीयर में बहने वाली विद्युत धाराओं द्वारा निर्मित होता है।

पृथ्वी का चुंबकीय क्षेत्र न केवल एक स्थानिक संरचना को दर्शाता है, जो मुख्य रूप से उपरोक्त योगदानों द्वारा निर्धारित होता है, बल्कि इसमें निरंतर समयबद्ध बदलाव भी होते हैं। इन विविधताओं को, जिनकी उत्पत्ति अलग–अलग हो सकती है, दो व्यापक वर्गों में विभाजित किया जा सकता हैः दीर्घकालिक और अल्पकालिक विविधताएँ। दीर्घकालिक विविधताओं का कारण मुख्यतयाः आंतरिक होता है जबकि अल्पकालिक विविधताओं के लिए पृथ्वी की बाहरी प्रक्रियाओं को जिम्मेदार ठहराया जाता है ।

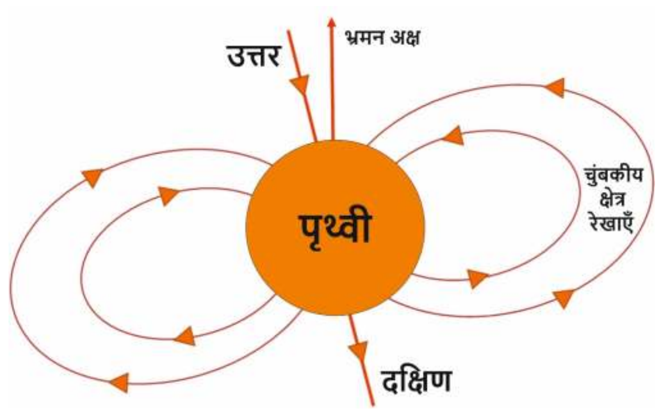

चित्र 1: पृथ्वी के साथ पृथ्वी की चुंबकीय क्षेत्र रेखाओं को सामान्यीकृत प्रकार से दर्शाया गया है। उत्तर और दक्षिण दो चुंबकीय ध्रुव के स्थान हैं।

यहाँ मै अनुसंधान के उस अध्ययन क्षेत्र की चर्चा करुंगा जो कि सूक्ष्म कण चुंबकत्व से जुड़ा हुआ है, लेकिन मुख्य रूप से प्राकृतिक उत्पत्ति और कम तीव्रता में होने वाली चुंबकीय सामग्री का अध्ययन करता है। इस क्षेत्र में, अध्ययन के लिये प्रायोगिक आँकड़े मूल रूप से चट्टानों, मिट्टी, धूल आदि जैसी प्राकृतिक सामग्रियों से प्राप्त किये जाते हैं। प्राकृतिक चुंबकीय खनिजों को चट्टान में होने वाली प्रक्रियाओं को समझने के लिए बेहतर माना जाता है। प्राकृतिक चुंबकीय खनिज मुख्य रूप से लोहे के ऑक्साइड और सल्फाइड से बने होते हैं। धात्विक लोहा भू–पर्पटी (क्रस्टल) की और ऊपरी–मेंटल की चट्टानों में अत्यंत दुर्लभ है। सबसे महत्वपूर्ण स्थलीय चुंबकीय खनिज मैग्नेटाइट (Fe_3O_4) है। परमाणु स्तर पर देखा जाये तो चुंबकत्व एक नाभिक के चारों ओर परिक्रमा करने वाले सबसे बाहरी इलेक्ट्रॉनों के अयुग्मित स्पिन क्षण से उत्पन्न होता है। इस अध्ययन की सफलता के लिए, प्रकृति में उपलब्ध सर्वोत्तम संक्रमण तत्व लोहा है।

केवल सामूहिक क्रमिकता वाले वे खनिज, जिनमें फैरो–, फैरी– या एंटीफैरोमैग्नेटिक संरचना होती है, उनमें अवशेष चुंबकत्व (चित्र 2) हो सकता है और वे चट्टानें चुंबकीय अनुसंधान के लिए उपयुक्त सामग्री हैं। चुंबकीय क्रमिकता एक निश्चित तापमान तक ही बना रहती है। जिसे उस सामग्री के लिए क्यूरी तापमान के रूप में जाना जाता है। इस तापमान से उपर होने पर सामूहिक चुंबकीय क्रमिकता ताप ऊर्जा से बिखर जाती है और खनिज अनुचुंबकीय हो जाता है। मैग्नेटाइट (चुंबकीय खनिजों में से एक) का क्यूरी तापमान~578 डिग्री सेल्सियस है, जिसके ऊपर इसमें अवशेष चुंबकत्व मौजूद नहीं हो सकता है। अधिकांश प्राकृतिक चुंबकीय खनिज फेरीमैग्नेटिक या एंटीफेरोमैग्नेटिक हैं; केवल धात्विक लोहा लौहचुंबकीय होता है।

पृथ्वी का चुंबकीय क्षेत्र कैसे उत्पन्न होता है?

पृथ्वी का चुंबकीय क्षेत्र, जिसे भू–चुंबकीय क्षेत्र के रूप में भी जाना जाता है, वह चुंबकीय क्षेत्र है जो पृथ्वी के आंतरिक भाग से लेकर अंतरिक्ष तक फैला हुआ है, जहां यह सौर हवा, सूर्य से निकलने वाले आवेशित कणों के साथ संपर्क करता है। चुंबकीय क्षेत्र पृथ्वी के अन्दर स्थित बाहरी कोर में

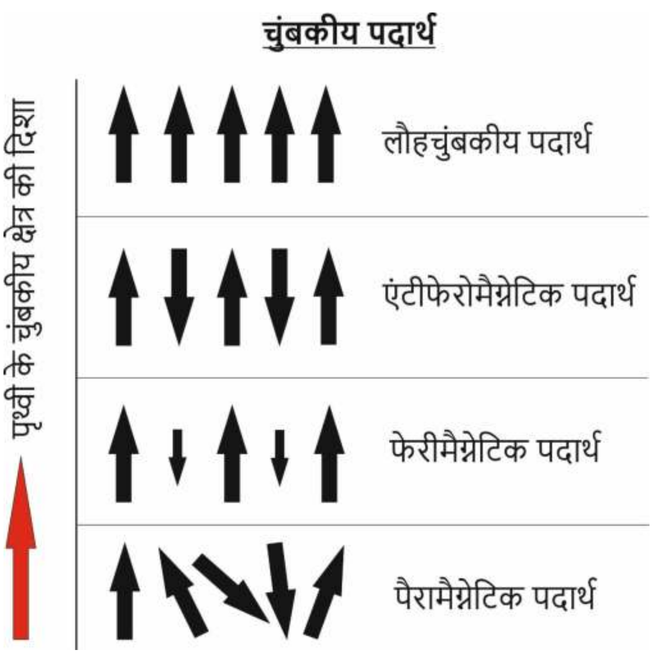

चित्र 2: पृथ्वी के चुंबकीय क्षेत्र की उपस्थिति में विभिन्न चुंबकीय सामग्रियों का व्यवहार।

पिघले हुए लोहे और निकल के मिश्रण की संवहन धाराओं की गति के कारण विद्युत धाराओं द्वारा उत्पन्न होता है। ये संवहन धाराएं कोर से निकलने वाली गर्मी के कारण होती हैं। यह एक प्राकृतिक प्रक्रिया है, जिसे स्व–विद्यमान अथवा स्व–चालित जियोडायनेमो कहा जाता है। पृथ्वी और सूर्य सहित सौर मंडल के अधिकांश ग्रह और तारे, विद्युत प्रवाहित तरल पदार्थों की संवहन गति के माध्यम से चुंबकीय क्षेत्र उत्पन्न करते हैं। जैसा कि पहले बताया गया है, पृथ्वी का चुंबकीय क्षेत्र इसके कोर में उत्पन्न होता है, जो एक ठोस आंतरिक कोर और एक तरल बाहरी कोर में विभाजित है। बाहरी कोर में तरल की गति आंतरिक कोर से ताप प्रवाह द्वारा संचालित होती है। यह ऊष्मा, कोर में डूबने वाले भारी पदार्थों की स्थैतिक उर्जा के निस्सरण से उत्पन्न होती है। ताप प्रवाह स्वरुप मुख्य रूप से पृथ्वी की घूमने की गति और ठोस आंतरिक कोर की उपस्थिति से नियंत्रित होता है। धीरे–धीरे चलने वाले तरल लोहे में प्रवाहित होने वाली विद्युत धाराएँ चुंबकीय क्षेत्र उत्पन्न करती हैं। पृथ्वी के कोर में स्रोतों के अलावा पृथ्वी की सतह पर मापे जाने वाला चुंबकीय क्षेत्र में भूपर्पटी की चट्टानों में उपस्थित चुंबकीय क्षेत्र और आयनमंडल और मैग्नेटोस्फीयर में उत्पन्न चुंबकीय क्षेत्र भी हैं। पृथ्वी की सतह पर मुख्य क्षेत्र का अनुमान पृथ्वी के केंद्र पर रखे गए एक द्विध्रुव द्वारा लगाया जा सकता है जो कि पृथ्वी के घूर्णन अक्ष पर लगभग 10° झुका हुआ है।

चट्टानें कैसे चुंबकत्व प्राप्त करती हैं और चुंबकीय बनी रहती हैं

यह जानना आवश्यक है कि चट्टानें कैसे चुंबकत्व प्राप्त करती हैं और बाहरी भूवैज्ञानिक प्रक्रियाओं से हस्तक्षेप होने तक प्राकृतिक परिस्थितियों में चुंबकीय बनी रहती हैं। चुंबकीय अवशेष के अधिग्रहण की कुंजी सामग्री की चुंबकीय अनिसोट्रॉपी ऊर्जा में निहित है। यह चुंबकीय अनिसोट्रॉपी ऊर्जा है जो चुंबकीय पदार्थ के कण अपने चुंबकीय मोमेंट को एक आसान दिशा से दूसरी आसान दिशा में बदलने की संभावना को नियंत्रित करती है। इसके बिना, व्यक्तिगत चुंबकीय कण के चुंबकीय क्षण स्वतंत्र रूप से घूमेंगे और परिवेश चुंबकीय क्षेत्र की दिशा की “जीवाश्म स्मृति” को बरकरार नहीं रख पाएंगे।

चित्र 3: शुरुआत से लेकर परमाणु स्तर तक पृथ्वी के चुंबकीय क्षेत्र के कारण चट्टानें कैसे चुम्बकित होती हैं, इसका एक दृश्य। चुंबकीय मोमेंट यहां एक बुनियादी इकाई है।

तरल लावा पृथ्वी की सतह के छिद्रों/दरारों से फूटता है, कुछ दूरी तक बहता है, और फिर ठंडा होकर ठोस/क्रिस्टलीकृत हो जाता है (चित्र 3)। क्रिस्टलीकरण की इस प्रक्रिया के साथ, चट्टानों में चुंबकत्व की मूल या परमाणु स्तर की इकाई, यानी चुंबकीय मोमेंट पृथ्वी के चुंबकीय क्षेत्र की दिशा के समानांतर संरेखित हो जाते हैं। चट्टानों द्वारा अर्जित यह दिशा उनमें तब तक संरक्षित रहती है जब तक कि चट्टाने चुंबकीय मोमेंट में फेरबदल करने वाली कुछ बाहरी घटनाओं का सामना नहीं करती ।

पृथ्वी का चुंबकीय क्षेत्र महत्वपूर्ण है क्योंकि यह पृथ्वी और पृथ्वी पर जीवन को सौर हवाओं जैसे हानिकारक विकिरणों से बचाता है, जिनमें यूवी विकिरण के हानिकारक स्तर होते हैं। सौर हवाएँ सूर्य से आने वाले सौर विकिरण का एक रूप हैं। नेविगेशन क्षेत्रों में पृथ्वी का चुंबकीय क्षेत्र महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है। चुंबकीय क्षेत्र का अध्ययन करने का एक सामान्य तरीका मैग्नेटोमीटर का उपयोग है, जो ऐसे उपकरण हैं जो चुंबकीय क्षेत्र की ताकत और दिशा को मापते हैं।

इस लेख के अन्त में, शैल चुंबकत्व के कुछ अनुप्रयोगों को सूचीबद्ध करना आवश्यक है जहां पृथ्वी के चुंबकीय क्षेत्र के कारण चुंबकत्व प्रेरित होता है, जैसे,

- प्लेट विवर्तनिकी
- पेट्रोफैब्रिक विश्लेषण
- पर्यावरणीय चुंबकत्व
- मैग्नेटोस्ट्रेटीग्राफी
- पुराचुम्बकत्व और पुराचुंबकीय लौकिक भिन्नता
- संरचनात्मक भूविज्ञान
- जैवचुंबकत्व
- चुंबकीय विसंगति अध्ययन

झीलों का महत्व और संरक्षण की आवश्यकता

सोमदत्त
वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान, देहरादून

झील, पृथ्वी की सतह पर सामान्यतः प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला, अपेक्षाकृत बड़ा और स्थिर पानी का भंडार है। झील या झीलों का समूह चारों तरफ से शुष्क भूमि से घिरे रहते हैं। अपेक्षाकृत छोटी झील को तालाब या ताल कहा जाता है। झीलों की गहराई भी तालाबों की अपेक्षा अधिक होती है। विश्व में लगभग लगभग 117 मिलियन झीलें और तालाब हैं जो कि समिल्लित रूप में पृथ्वी की सतह का लगभग 3% भाग कवर करते हैं। इस लेख में इससे आगे झील और तालाब, दोनों के लिए झील शब्द का ही प्रयोग किया गया है। झीलें का निर्माण प्राकृत रूप से विभिन्न प्रक्रियाओं से संभव है, जैसे कि पहाड़ों के भूगर्भिक उत्थान के समय गहरे गढ़ढे और खाइयाँ बन जाते हैं और पानी से भर जाने के कारण झीलों का रूप ले लेते हैं। टेक्टोनिक प्लेटों के बीच फाल्ट के साथ साथ जमीन धंसने से भी झीलों का निर्माण होता है। ज्वालामुखी निष्क्रिय होने के बाद क्रेटर झील, ग्लेशियरों के पीछे हटने के दौरान झील, नदी का अपने विस्तृत मोड़ को काटकर ओक्स्बो झील,आदि झीलों के बनने की कुछ अन्य प्राकृत प्रक्रियाएं हैं।

ये झीलें प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र और मानव गतिविधियों दोनों के लिए मूल्यवान संसाधन हैं। उदाहरण के लिए:

1. **जल चक्र और जलवायु विनियमन का विनियमन:** झीलें वर्षा का भंडारण करके, अपवाह को नियंत्रित करके और वर्षा पैटर्न को प्रभावित करके, तापमान को नियंत्रित करके जल चक्र को विनियमित करने में भूमिका निभाती हैं। वे जैव–भू–रासायनिक चक्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं और कार्बन पृथक्करण में मदद करती हैं, और बड़ी झीलें कार्बन डाई ऑक्साइड को अवशोषित करती हैं, जिससे जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग का प्रभाव कम होता है। कई झीलें नदियों का उद्‌गम स्थल भी हैं।
2. **जैव विविधता के लिए आवास:** यह विविध जलीय और स्थलीय (मछली, उभयचर, पक्षियों, स्तनधारियों) और विभिन्न पुष्प प्रजातियों के लिए आवास प्रदान करती हैं। झीलें प्रवासी पक्षियों के लिए भी कुछ माह के लिए अस्थायी निवास होती हैं।
3. **जल आपूर्ति:** ये पीने, सिंचाई और औद्योगिक उद्देश्यों के लिए मीठे पानी के महत्वपूर्ण स्रोत हैं। ये पानी का भंडारण करते हैं और शुष्क अवधि के दौरान पानी की उपलब्धता को नियंत्रित करने में मदद करते हैं। उत्तराखंड में नैनी झील इसका एक अनूठा उदहारण है।
4. **जलविद्युत उत्पादन:** जलविद्युत संयंत्रों के माध्यम से बिजली उत्पन्न करने के लिए उपयोग किया जाता है, जिससे ऊर्जा का नवीकरणीय स्रोत उत्पन्न होता है। इसके लिए नदियों पर बांध बनाकर उनका जल रोका जाता है और कृत्रिम झीलों का निर्माण किया जाता है जोकि विद्युत उत्पादन और जल आपूर्ति दोनों के लिए बहुत महतवपूर्ण योगदान देती हैं, जैसे की टिहरी झील।
5. **बाढ़ नियंत्रण:** झीलें भारी वर्षा और बर्फ पिघलने की घटनाओं के दौरान अतिरिक्त पानी को अस्थायी रूप से संग्रहित करके या अवरोध बेसिन के रूप में कार्य करके बाढ़ को कम कर सकती हैं। इससे डाउनस्ट्रीम जल स्तर को नियंत्रित करने और बाढ़ के खतरों को कम करने में मदद मिलती है। उदाहरण के लिए, डेल क्लार्क झील मिनेसोटा में एक मानव निर्मित झील है, जिसे कैनबी क्रीक से बाढ़ को नियंत्रित करने के लिए 1980 के दशक की शुरुआत में बनाया गया था। झील में नियंत्रित आउटलेट है जो नीचे की ओर बाढ़ को रोकता है और झील की गहराई को बनाए रखता है। भारत और खासकर हिमालय या अन्य पहाड़ी क्षेत्रों में जल विद्युत् परियोजनाओं के लिए निर्मित झीलों का बाढ़ नियंत्रण भी एक महत्वपूर्ण बिंदु होता है।
6. **वैज्ञानिक अनुसंधान:** झीलें पुराजलवायु, जलवैज्ञानिक परिवर्तनों के पुनर्निर्माण के लिए एक उत्कृष्ट स्थलीय संग्रह के रूप में कार्य करती हैं। वे पर्यावरणीय

प्रक्रियाओं, जैव विविधता, जल गुणवत्ता और जलवायु परिवर्तन में बहुमूल्य अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं। प्राचीन काल से ही मानव ने झीलों के किनारे बसावट बनायीं और इनके जल का स्वयं, पशुपालन और खेती के लिए उपयोग में लिया। नदियों के किनारे बसावट के लिए हमेशा उपयुक्त नहीं रहते हैं क्योंकि वहां पर बाढ़ का खतरा हमेशा बना रहता है इसलिए विश्व भर में बहुत सारे बड़े नगरों का निर्माण झीलों के किनारे पर हुआ है। अतः झीलों का मानव सभ्यता के विकास में भी बहुत ही बड़ा योगदान है। उत्तराखंड की रूपकुंड झील, मानव सभ्यता और पलायन आदि को समझने के लिए शोधकर्ताओं के आकर्षण का केंद्र रही है। प्राकृतिक तालाबों का तलछट, जो समय के साथ जमा होता है, वैज्ञानिकों के लिए अतीत के जलवायु और पर्यावरणीय परिस्थितियों का अध्ययन करने के लिए एक महत्वपूर्ण अभिलेखागार है। तलछट में मौजूद सूक्ष्म जीवाश्म, रासायनिक समस्थानिक और अन्य डेटा का विश्लेषण करके, वैज्ञानिक तापमान, वर्षा पैटर्न, और समुद्र तल के स्तर में परिवर्तन का पुनर्निर्माण कर सकते हैं। यह जानकारी भविष्य में जलवायु परिवर्तन की भविष्यवाणी करने और उसके प्रभावों को कम करने के लिए रणनीति विकसित करने के लिए महत्वपूर्ण है।

इनके अलावा, झीलें सैकड़ों से लेकर हजारों वर्षों के पैमाने पर पुरा जलवायु पुनर्निर्माण के लिए एक अद्भुत संग्रह के रूप में कार्य करती हैं, जैसे मानसून की तीव्रता, जल प्रवाह की स्थिति, शुष्कता की घटनाएं, शीतलन घटनाएं, सौर चक्र; ये तालाब कैसे बनती हैं, टेक्टोनिक विकास, अपक्षय पैटर्न आदि। उदाहरण के लिए 4.2 हजार वर्ष पूर्व हुई एक विशाल सूखे की घटना, जो मध्य–अक्षांश क्षेत्रों में ठंडी और शुष्क जलवायु परिस्थितियों से चरित्रित थी। इस समय के दौरान विभिन्न सभ्यताओं का पतन हुआ, जैसे सिंधु घाटी सभ्यता, मेसोपोटामिया में अक्कादियन साम्राज्य, मिस्र में पुराना साम्राज्य और अनातोलिया में प्रारंभिक कांस्य युग की बस्तियाँ, आदि। भारत में यह घटना भारतीय ग्रीष्म मानसून द्वारा की जाने वाली वर्षा में हुई कमी के रूप में अभिलेखित है, और इसकी जानकारी विभिन्न झीलों के अध्यन से प्राप्त हुई है जैसे कि कोटला डाहर तालाब (हरियाणा),रारा तालाब (अरुणाचल प्रदेश) त्सो मोरिरी झील, लद्दाख, चंद्रा झील, हिमाचल प्रदेश।

7. **सांस्कृतिक और आध्यात्मिक महत्वः** कई झीलें दुनिया भर के स्वदेशी समुदायों और समाजों के लिए सांस्कृतिक और आध्यात्मिक महत्व रखती हैं। हजारों

चित्रः खज्यिार झील, हिमाचल प्रदेश

धार्मिक अनुयायी हर वर्ष कैलाश पर्वत के पास मानसरोवर और राक्षस ताल के दर्शन करने के लिए जाते हैं। हिमाचल प्रदेश की रेवाल्सर झील भी इसी श्रेणी में आती है।

8. **परिवहनः** प्राचीन काल में, झीलें व्यापार और वाणिज्य के लिए महत्वपूर्ण परिवहन मार्गों के रूप में प्रयुक्त होती थी। उदाहरण के लिए, संयुक्त राज्य अमेरिका में, ग्रेट झीलें दुनिया की मीठे पानी की झीलों का सबसे बड़ा समूह हैं जिनका उपयोग लौह अयस्क, कोयला आदि जैसे सामानों के परिवहन मार्गों के लिए किया जाता है।

9. **मनोरंजन और पर्यटनः** झीलें नौकायन, मछली पकड़ने, तैराकी, शिविर जैसी मनोरंजक गतिविधियों के अवसर प्रदान करती हैं। ये यात्रा और पर्यटन उद्योगों का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। इससे स्थानीय लोगों के लिए भी रोजगार के अवसर उत्पन्न होते हैं।

उदाहरण, डल झील कश्मीर, नैनीताल उत्तराखंड, भीमताल उत्तराखंड, चंद्रताल हिमाचल प्रदेश आदि।

भारत में ऐतिहासिक रूप से तालाबों और झीलों की एक समृद्ध विरासत रही है। प्राचीन साहित्य, अभिलेखों और शिलालेखों में तालाबों का उल्लेख मिलता है। प्राचीन काल से लेकर मध्यकाल तक विभिन्न शासकों ने जल संग्रहण और सिंचाई के लिए तालाबों का उपयोग किया। दक्षिण भारत में आज भी बहुत स्थानों पर तालाबों के माध्यम से ही सिंचाई की जाती है। बहुत सारे मंदिरों के साथ आज भी तालाब उपलब्ध हैं और रिवाजों का अहम हिस्सा हैं। भारत में तालाबों का भूवैज्ञानिक और वैज्ञानिक महत्व अत्यधिक है। ये तालाब न केवल जल संसाधन प्रदान करते हैं, बल्कि उनके तलछट (सेडीमेंट) में पिछले हजारों वर्षों के जलवायु और मानसून पैटर्न की महत्वपूर्ण जानकारी संरक्षित होती है।

वर्तमान में, भारत में तालाबों की संख्या और स्थिति में काफी बदलाव आ रहा है। पिछले कुछ दशकों के दौरान तालाबों और झीलों की संख्या और क्षेत्रफल में अप्रत्याशित कमी दर्ज की गयी है। वैसे तो ये कमी पुरे विश्व में दर्ज हुई है परन्तु इसका प्रभाव अविकसित और विकासशील देशों, जैसे की भारत में बहुत ही अधिक है। जनसंख्या की बढ़ती मांग के कारण औद्योगीकरण में वृद्धि हुई है। साथ ही साथ बढती जनसंख्या के लिए आवास कराने और खेती के उत्पादन बढ़ने के लिए जमीन उपलब्ध करने के झीलों का अतिक्रमण हुआ है। प्राकृतिक संसाधनों के लिए झीलों का बड़े पैमाने पर क्षरण हुआ है। झील को एक गतिशील प्रणाली के रूप में माना जा सकता है क्योंकि इसमें विभिन्न परस्पर जुड़ी प्रक्रियाएं और घटक शामिल होते हैं जो समय के साथ परस्पर क्रिया करते हैं और बदलते हैं। झीलें पुराजलवायु अध्ययन के लिए मूल्यवान संसाधन हैं क्योंकि वे अपनी तलछट परत के भीतर पर्यावरणीय जानकारी का खजाना संरक्षित कर सकती हैं। पिछले जलवायु परिदृश्य के पुनर्निर्माण के लिए स्थिर आइसोटोप अध्ययन, जियोकेमिकल, माइक्रोफॉसिल, सेडिमेंटोलॉजिकल आदि जैसे विभिन्न प्रॉक्सी का उपयोग किया जाता है। तालाबों की संख्या में गिरावट का मतलब इन अमूल्य वैज्ञानिक डेटा का नुकसान भी है।

जल शक्ति मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा की गयी जल निकायों की जनगणना के मुताबिक 2023 में प्राकृतिक–अप्राकृतिक तालाबों की कुल संख्या 22,361 है। उत्तराखंड में वर्तमान में 30 से अधिक झीलें हैं और कई झीलें विलुप्त हो चुकी हैं, जैसे गोहना तालाब, जो 1970 में चमोली जिले में आई अचानक बाढ़ के कारण नष्ट हो गई थी। सरकारी और गैर–सरकारी संगठनों द्वारा किए गए सर्वेक्षणों के अनुसार, तालाबों की संख्या में लगातार गिरावट आ रही है। केंद्रीय भूजल बोर्ड, भारत सरकार के अनुसारः तालाबों का जल स्तर और गुणवत्ता दोनों में गिरावट आई है। शहरी क्षेत्रों में तालाबों का अतिक्रमण और प्रदूषण एक गंभीर समस्या है। अपशिष्ट पदार्थों का निष्कासन अबाध रूप से झीलों में किया जा रहा है जिससे जैवविविधता को भी गंभीर नुकसान झेलना पड़ रहा है। अगर स्थिति इसी तरह आगे बढ़ती रही तो हमारे लिए गंभीर जल संकट खड़ा हो सकता है। जलवायु परिवर्तन के कारण ग्लेशियरों की संख्या और मोटाई कम से कम होती जा रही है। ऐसे में झील और तालाबों के संरक्षण का महत्व और भी बढ़ जाता है ताकि आने वाले समय में होने वाले जल संकट, देश में संभावित आंतरिक विस्थापन और कलह, रणनीतिक और सामरिक परिस्थितियों से बचा जा सके। वन क्षेत्रों में जानकारों के निरीक्षण में छोटे छोटे तालाबों का निर्माण, वन अग्नि को रोकने में बड़ी भूमिका निभा सकता है और वन्य जीवन के

बचाव में भी भूमिका निभा सकता है।

झीलों और तालाबों के महत्व को देखते हुए, इनके संरक्षण, पुनर्स्थापना और उनके प्रबंधन के प्रयास सरकार से लेकर जन सामान्य तक, हर स्तर पर किये जाने चाहिए। इस समस्या का समाधान केंद्रीय और राज्य सरकारों, स्थानीय निकायों, सामुदायिक संगठनों और जनता के साथी भागीदारी के माध्यम से हो सकता है। लोगों को तालाबों के महत्व और उनके नुकसान के खतरों के बारे में शिक्षित करना और इसमें स्थानीय समुदायों को शामिल करना महत्वपूर्ण है। तालाबों और उनके आसपास के वातावरण को बचाने के लिए मजबूत नीतियां बनानी पड़ेंगी और उन्हें और क्रियान्वन भी ठीक ढंग से करना पड़ेगा। इसमें प्रोत्साहन और दंडात्मक दोनों ही सम्मिलित हैं। जो ग्राम पंचायत या शहर झीलों के निर्माण और संरक्षण कार्य अच्छे ढंग से करते हैं वहां प्रोत्साहन राशि बढ़ाई जानी चाहिए और अतिक्रमण करने पर कठोर दंड का प्रावधान होना चाहिए। ग्रामीण क्षेत्रों में ये समस्या बहुत ही गंभीर है। लगभग हर झील और तालाब, कम या ज्यादा अतिकर्मन का शिकार हुआ है। अतः अतिक्रमण हुए क्षेत्रों को इससे मुक्त कराया जाना चाहिए और पुनः पुराने स्वरुप में विकसित करना चाहिए।

इन प्राकृतिक संसाधनों के क्षरण के दुष्प्रभाव हम नहीं तो हमारी आने वाली पीढियां भुगतेंगी। अतः हम सबको सामूहिक प्रयास करके इन अमूल्य जल संसाधनों को बचाना होगा ताकि पृथ्वी मनुष्यों के रहने लायक जगह बनी रहे।

हिन्दूकुश–हिमालय हुआ अधीर

हिन्दूकुश–हिमालय में बर्फ़, रुकने के समय में कमी भावी जल संकट के संकेत

रणधीर संजीवनी
सत्यकाम, सी–2179/4, इंदिरा नगर, लखनऊ

हिन्दूकुश–हिमालय या दूसरे शब्दों में तिब्बत पठार और उससे लगा–पश्चिम में पामीर–हिन्दूकुश तक, पूर्व में हेंग्दुयन पर्वत तक, उत्तर में कुनलुन और चिलियन पर्वतमाला तक, दक्षिण में हिमालय तक का–क्षेत्र लगभग 5,000,000 (पचास लाख) वर्ग किलोमीटर में फैला है। विशाल हिन्दूकुश–हिमालय अंचल को बनाने वाले आठ देश–अफगानिस्तान, चीन, पाकिस्तान, भारत, नेपाल, बांग्लादेश, भूटान और म्यांमार हैं। इसी हिन्दूकुश–हिमालय क्षेत्र को दूसरे शब्दों में "थर्ड पोल/तृतीय ध्रुव" की अभिव्यंजना भी दी गई है। यह इलाका आर्कटिक और अंटार्कटिक के बाहर विश्व का सबसे अधिक हिमनदों (गल, ग्लेशियर) से मंडित अंचल होने के कारण बेशक 'थर्ड पोल' कहलाने लायक है। 8,000 मीटर से भी ज्यादा ऊँचाई वाली 14 चोटियों को अपनी गोद में लेकर 4,000 मीटर (औसत समुद्र तल से) की औसत तुंगता वाला यह अंचल "रूफ़ ऑफ़ द वर्ल्ड/दुनिया की छत" (मूल अभिव्यंजना' बाम–ए–दुनिया) कहलाए जाने के भी सर्वथा योग्य है। पूर्वी हिमालय का मुख्य जल स्रोत मानसून के द्वारा जून से सितंबर के महीनों में होने वाली वर्षा है जबकि, पश्चिमी हिमालय अपने वर्षण का कम से कम आधा वर्षण जाड़ों के महीने में पश्चिमी विक्षोभों से प्राप्त कर लेता है। पामीर, हिन्दूकुश और कराकोरम पर्वत श्रृंखला में पश्चिमी विक्षोभ से वर्षण और हिमपात होता है।

हिन्दूकुश–हिमालय के पास कुल 60,054 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल को घेरने वाले 54,252 हिमनदों–बर्फ़ छत्रकों की भव्य संपदा है। एक अध्ययन के अनुसार यहाँ 6 सौ 70 खरब लीटर (आकलित मान : 6,127 घन किलोमीटर) आयतन और एक अन्य अध्ययन अनुसार यहाँ लगभग 8 हज़ार खरब लीटर (आकलित मान : 7.0 ± 1.8 x 103 घन किलोमीटर) आयतन का हिम भण्डार है। कुल हिमनद क्षेत्रफल का 60% हिस्सा औसत समुद्र तल से 5,000 से 6,000 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। हिम या बर्फ़ का यह अकूत भंडार नदियों और सरोवरों के रूप में अथाह जलराशि को जन्म देता है।

कई सभ्यताओं को अपनी गोद में पालने वाली 10 नदियों आमू दरिया, ब्रह्मपुत्र, गंगा, सिन्धु, इरावदी, मेकांग, सालवीन, तारिम, यांग्त्सीक्यांग (यांग्त्से) और येल्लो (ह्वांगहो)–के उद्‌गम स्थलों वाला यह प्रांत "वॉटर टावर ऑफ़ एशिया (एशिया की जलटंकी मीनार)" भी कहलाता है। सम्मिलित रूप से, ये 10 नदी द्रोणियाँ तकरीबन 90 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र को अपनी गोद में ले लेती हैं। वर्ष 2018 में प्रकाशित हुई चाइना वाटर रिस्क रिपोर्ट के अनुसार हर 2.5 एशियाई व्यक्तियों में से एक इन नदियों के पास रहता है। इन 10 नदी द्रोणियों में 4 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर यानी 4 लाख करोड़ भारतीय रुपए से ऊपर का सकल घरेलू उत्पाद होता है। यह सदानीरा नदियाँ केवल हिन्दूकुश–हिमालय में रहने वाले लगभग 24 करोड़ लोगों को पानी नहीं देती बल्कि, इनकी दानशीलता का दायरा बहुत बड़ा है। ये इन पर्वत प्राचीरों को पार करके अन्य 8 देशों के जीवन को भी पोषण देने जाती हैं।

हिन्दूकुश–हिमालय के आठ देशों के अलावा, यह नदियाँ अपने–अपने सागर में खाली होने, या जैसे तारिम नदी के मामले में, मरुस्थल में विलीन हो जाने से पहले क्वरग्यिस्तान, तुर्कमेनिस्तान, उज़्बेकिस्तान, तज़ाकिस्तान, लाओस, थाईलैंड, कम्बोडिया और वियतनाम से भी बहती हैं। इस तरह देखा जाए तो हिंदुकुश–हिमालय की पर्वत शृंखलाओं से निकलने वाली इन जीवनदायिनी नदियों के ऊपर लगभग 200 करोड़ लोग आश्रित हैं। दूसरे शब्दों में, ये नदियाँ इस पृथ्वी ग्रह के पाँच लोगों में से कम से कम एक व्यक्ति को पानी मुहैया कराती हैं। 200 करोड़ के आँकड़े को छूने को तैयार यह जनसंख्या इन नदियों से भोजन (सिंचाई), जल विद्युत, समृद्ध पारिस्थितिक तंत्र, तटवर्ती

आवास, पर्यावरणीय प्रवाह और समृद्ध व वैविध्यपूर्ण सांस्कृतिक मूल्यों का उपहार लेती है।

यह भी बहुत ध्यान देने वाली बात है कि इन 10 नदियों में से 8 नदियाँ सीमापारिक यानी एक से अधिक देशों की सीमाओं को छूती हैं। एक देश का कृषि, ऊर्जा, आर्थिक/मूलभूत ढाँचे के विकास, जल संसाधन प्रबंधन या किसी भी क्षेत्र में इन नदियों पर लिया गया निर्णय दूसरों को भी प्रभावित करेगा।

हिमनद और नदियों द्वारा पोषित छोटी–बड़ी कई झीलें यहाँ के पारितंत्र की सबसे बड़ी ख़ासियत हैं। हिन्दूकुश–हिमालय 47,000 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैले हुए 1 वर्ग किलोमीटर से ज्यादा के क्षेत्रफल वाले लगभग 1,200 सरोवरों की भव्य सम्पदा का मालिक है। अकेले तिब्बतीय पठार में सरोवरों का वितरण व्यापक और सघन है जोकि वैश्विक सरोवर क्षेत्रफल का लगभग 1.9% है। इस क्षेत्र के इसी वैविध्य और नाज़ुक पर्यावरण को ध्यान में रखते हुए जलवायु परिवर्तन से संबंधित अंतरसरकारी समिति, इंटरगवर्नमेंटल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज (आइ पी सी सी) ने साल 2007 में इस क्षेत्र को 'क्लाइमेट चेंज हॉटस्पॉट' या 'जलवायु परिवर्तन का अतिक्षेत्र' चिह्नित कर दिया है।

बीती शताब्दी के दौरान, हिन्दूकुश–हिमालय क्षेत्र 0.74 डिग्री सेल्सियस के वैश्विक औसत को पार करने वाली भारी गर्मी से गुज़रा है। 5,700 मीटर की ऊँचाई से नीचे स्थित हिमनद जलवायु परिवर्तन के लिए विशेष रूप से संवेदनशील होते हैं। साफ बर्फ वाले, कम ऊँचाई पर स्थित और छोटे आकार के ग्लेशियर जलवायु परिवर्तन के लिए सबसे ज्यादा संवेदनशील होते हैं। कुल मिलाकर, बीते कुछ दशकों के हिमनद विश्लेषण से पता चलता है कि हिन्दूकुश–हिमालय क्षेत्र में कराकोरम अंचल को छोड़कर लगभग बाकी सब भागों में ग्लेशियर पिछले चार दशकों के दौरान खिसक या सिकुड़ गए हैं।

विशाल हिन्दूकुश–हिमालय अंचल को बनाने वाले सभी आठ देशों में पानी का इस्तेमाल सबसे ज्यादा कृषि (इस क्षेत्र और इस क्षेत्र से बाहर के भौगोलिक इलाकों को मिलाकर) में होता है। यह प्रतिशत अफगानिस्तान में 90% और औद्योगिक कृत चीन में 65% है। भारत, बांग्लादेश, पाकिस्तान और चीन मिलकर विश्व के कुल भूगर्भ–जल के 50% के बराबर भूगर्भ–जल निकाल लेते हैं। भूमिगत जल का प्रत्याहरण ज्यादातर उन्हीं नदी द्रोणियों के मैदान में होता है जो, हिन्दूकुश–हिमालय से निकलती हैं। भूजल का इस्तेमाल मुख्यतः सिंचाई और शहरी जल व्यवस्था के दूसरे कार्य क्षेत्रों में होता है। हिन्दूकुश–हिमालय में, विशेषतः मध्य ऊँचाई के पर्वतीय भागों में भूगर्भीय जल का पानी के चश्मों के जरिए नदियों के आधार प्रवाह में महत्वपूर्ण योगदान है। यह अंश किस हद तक मिलता है यह स्पष्ट मालूम नहीं है। लेकिन, यह स्पष्ट है कि पश्चिमी मैदानों में भूगर्भ–जल का अति दोहन हुआ है, जबकि, पूर्वी मैदानों में यह ज्यादातर अप्रयुक्त है।

फूड एंड एग्रीकल्चर ऑर्गेनाइजेशन ऑफ़ द यूनाइटेड नेशंस के अनुसार, सभी आठ देशों में कुल नवीकरणीय जल प्राप्यता लगभग 7 हज़ार 5 खरब लीटर (आकलित मानः 7745.5 घन किलोमीटर) है। कुल जल संसाधनों का 20. 62% यानी लगभग 2 हज़ार 8 खरब लीटर (आकलित मानः 1597.8 घन किलोमीटर) विभिन्न उद्देश्यों के लिए सालाना इस्तेमाल होता है। वर्ष 2050 तक पानी की माँग 30 से 40 प्रतिशत बढ़ जाएगी। एक आकलन के अनुसार एशिया–प्रशांत में 340 करोड़ लोग ऐसे इलाकों में रह रहे होंगे जहाँ पानी की अत्यधिक कमी होगी। पहले से ही दुनिया के सबसे ज्यादा जनसंख्या वाले दो देश, भारत और चीन पानी की कमी झेल रहे हैं। दशकों से चले तीव्र विकास के दुष्प्रभाव से हुए उग्र प्रदूषण ने पानी की किल्लत को बहुत बढ़ा दिया है।

हिम या बर्फ की उपस्थिति किसी भी क्षेत्र की जलवायु के लिए निर्णायक भूमिका निभाती है। जल संतुलन और चरम जल प्रवाह को प्रभावित करती है। हिन्दूकुश–हिमालय क्षेत्र हिममंडल पर बहुत अधिक निर्भर करता है। हिममंडल यानी ज़मीन की सतह पर हिमीभूत पानी या जम चुका पानी जिसमें बर्फ़, स्थायी तुषार (पर्माफ्रॉस्ट), हिमनदों, झीलों और नदियों की बर्फ़ को शामिल किया जाता है। हिमीभूत/जम चुका पानी ही इस क्षेत्र के लगभग 24 करोड लोगों के लिए मीठे पानी का नाजुक स्रोत है। इसके साथ ही यह जमा हुआ पानी, यहाँ से निकलने वाली जलधाराओं के निचले क्षेत्रों में रहने वाली तकरीबन 200 करोड़ का आँकड़ा छूने को तैयार जनसंख्या के लिए व्यापक लाभ देने वाला है। यहाँ चलने वाली लगातार निगरानी से स्पष्ट है कि इस क्षेत्र में धारा अपवाह के समयचक्र और प्रबलता में महत्वपूर्ण बदलाव हुए

हैं। जल प्राप्यता को सुनिश्चित करने में हिम/तुहिन, विशेषतः गलन के मौसम की शुरुआत के दौरान, महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

क्षेत्र के पूरे धारा अपवाह या धारा प्रवाह में ग्लेशियर का पानी और हिमजल महत्वपूर्ण घटक हैं। इनका योगदान पश्चिमी ओर की नदियों, जैसे सिन्धु नदी, में बहुत अधिक रहता है। पूर्व दिशा की नदियों जैसे, गंगा नदी, में इस पानी की हिस्सेदारी बहुत कम दिखाई पड़ती है। वैसे, हिमनद और बर्फ़ के गलने से मिलने वाले पानी का धारा प्रवाह में हिस्सा हर द्रोणी में अलग–अलग है। साथ ही, इस पानी का धारा अपवाह में सापेक्ष योगदान ऊँचाई और हिमनद व हिम भंडार से नज़दीकी होने पर बढ़ता है। साल 2010 में हुए एक अध्ययन के अनुसार, सिन्धु नदी द्रोणी में सालाना सतही अपवाह में 46% हिमजल और 32% ग्लेशियर जल का हिस्सा है। गंगा नदी द्रोणी में यह क्रमशः 6% और 3% है। इसी तरह वर्ष 2013 में आया एक दूसरा अध्ययन बतलाता है कि मेकांग, सालवीन, ब्रह्मपुत्र, यांग्त्सीक्यांग (यांग्त्से) और ह्वांगहो (येल्लो) नदियाँ प्रमुखतः वर्षा अपवाह में निर्भर हैं जबकि सिन्धु नदी अपने जल का 80% हिमनद और हिमजल से प्राप्त करती है। सिन्धु नदी की ऊपरी द्रोणी में नदी उत्स्राव शीत और वासन्तिक मौसम के तापमान में बहुत निर्भर करता है। एक अन्य अध्ययन, सिन्धु नदी के ऊपर द्रोणियों के अत्यधिक हिमनदित जलागमों में धारा प्रवाह के घटने की बात उजागर करता है।

चाइना वाटर रिस्क रिपोर्ट, 2018 के अनुसार, हिम जल का तारिम नदी में 42%, ब्रह्मपुत्र नदी में 25% से 30%, येल्लो नदी में 23%, यांग्त्सीक्यांग (यांग्त्से) नदी में 29%, मेकांग नदी में 22% से 33%, सालवीन नदी में 25% से 36%, गंगा नदी में 20% और सिन्धु नदी में 62% से 79% है।

इतने महत्वपूर्ण और संवेदनशील इलाके के प्रति विज्ञानी हमेशा सजग और चिंतित रहते हैं। इसके विभिन्न प्राकृतिक घटकों और उनमें होने वाले प्रक्रमों पर लगातार निगरानी बनाए हुए अध्ययन करते रहते हैं। इंटरनेशनल सेंटर फॉर इंटीग्रेटेड माउंटेन डेवलपमेंट (आइ सी आइ एम ओ डी या आइ सी आइ मोड, जैसा इसे बोला जाता है) एक अंतरसरकारी ज्ञान और शिक्षण केंद्र है जिसका मुख्यालय काठमांडू, नेपाल में स्थित है। हिन्दूकुश–हिमालय क्षेत्र को समर्पित यह संस्था इस क्षेत्र में पड़ रहे जलवायु परिवर्तन के प्रभाव पर पैनी नज़र रखते हुए व्यावहारिक एवं क्रियाशील/अनुप्रयोगात्मक शोधों को समय–समय पर सामने लाती रहती है। वर्ष 2023 की आइ सी आइ मोड रिपोर्ट के अनुसार हिमनद के गलने से निकला पानी मुख्यतः धारा अपवाह में अपना योगदान देता है। इस इलाके की नदी द्रोणियों में जलधाराओं के लिए हिमजल पानी का सबसे बड़ा स्रोत है। कुल मिलाकर यह क्षेत्र की 12 मुख्य नदी द्रोणियों के वाह उत्स्राव में बहने वाले जल में सालाना 23% की हिस्सेदारी देता है। यह योगदान सबसे कम 5.1% इरावदी नदी में है जबकि सबसे ज्यादा 77.5% हेलमंद नदी में है।

हाय–वाइस रिपोर्ट (2023) ने चेतावनी की थी कि हिमनदों से नदियों में आने वाला पानी वर्ष 2050 तक बढ़ता रहेगा और फिर वर्ष 2100 से घटेगा। ग्लेशियर लगातार गलते और सिकुड़ते जाते हैं। परिणामस्वरूप, उनसे निकलने वाला पानी भी धीरे–धीरे घटने लगता है। जब बढ़ता हुआ हिमनद उत्स्राव लगातार घटने लगता है तो उस बिंदु या स्थिति को "पीक वाटर (चरम जल) कहा जाता है। दुनिया के कई हिमनदीय इलाकों में यह 'पीक वाटर' गुज़र चुका है और वहाँ रहने वाले समाज घट चुके हिमनद गलन के कारण कम पानी मिलने की मार झेल रहे हैं। हिन्दूकुश–हिमालय इस स्थिति में अभी नहीं आया है, परंतु जल्द ही पहुँच जाएगा।

वर्ष 1971 से वर्ष 2000 के बीच हुए हिमपात के औसत की तुलना करके भविष्य के लिए किए गए प्रक्षेपण से वर्ष 2070 से वर्ष 2100 के बीच सिन्धु द्रोणी में 30% से 50%, गंगा द्रोणी में 50% से 60% और ब्रह्मपुत्र द्रोणी में 50% से 70% कम हिमपात का पूर्वानुमान भी इस रिपोर्ट में किया गया है। बर्फ़ से मिलने वाला पानी तो साल 1979 से साल 2019 के बीच पहले ही गिर चुका है। इसका भविष्य में और कम होते रहना सुनिश्चित ही है। इसके चलते सिन्धु, गंगा और ब्रह्मपुत्र द्रोणियों के लगभग 13 करोड़ किसानों की जीविका पर जोखिम आ गया है।

यह रिपोर्ट 5 दिन प्रति दशक की दर से हिमाच्छादित अवधि यानी बर्फ़ से ढके रहने के दिनों में कमी और बर्फ़ का पिघलना जल्दी शुरू हो जाना भी दर्ज करती है। बर्फ़ के जल्दी पिघलना शुरू हो जाने से उन लोगों पर बुरा असर पड़ रहा है जिनकी खेती हिमजल के सही समय पर आना शुरू हो जाने पर निर्भर करती है।

अनुसंधान करने वाले बर्फ़ से सम्बन्धित विभिन्न पैरामीटर जैसे हिमाच्छादित क्षेत्रफल (स्नो कवर एरिया), हिम कालावधि (स्नो ड्यूरेशन), हिम दीर्घस्थायित्व,/स्थैर्य (स्नो पर्सिस्टेन्स), हिमरेखा (स्नो लाइन), हिम–जल तुल्यमान (स्नो वाटर इक्विव्एलेन्ट), हिमजल या हिम–गलन (स्नो मेल्ट) का आंकलन करते हैं। इन पैरामीटर से क्षेत्र में जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को समझा जा सकता है। हाल में ही, आइ सी आइ मोड ने हिन्दूकुश–हिमालय के हिम दीर्घस्थायित्व या हिम स्थैर्य (स्नो पर्सिस्टेन्स) के गिरावट पर रिपोर्ट (2024) दी है।

जितने समय तक हिम या बर्फ गलने से पहले ज़मीन पर इकट्ठा रहती है उस अवधि को हिम दीर्घस्थायित्व या हिम स्थैर्य (स्नो पर्सिस्टेन्स) कहते हैं। बर्फ़ पिघलने पर पूरे पारिस्थितिक तंत्र को पानी देती है। हिन्दूकुश–हिमालय क्षेत्र में किया गया ऋतुनिष्ठ हिम आकलन/मौसमी बर्फ़ जाँच पिछले 22 सालों के हिम स्थैर्य/दीर्घस्थायित्व अनियमितता पर महत्वपूर्ण समझ बनाता है।

पिछले 22 सालों में 13 सालों में बर्फ सामान्य मौसमों की तुलना से कम ठहरी है। नवंबर, 2023 से अप्रैल, 2024 के मौसम में बर्फ़ ठहरने के कुल समय की तुलना वर्ष 2003 से 2023 तक के सभी वर्षों के इसी मौसम के ऐतिहासिक रिकॉर्ड से की गई। विश्लेषणों से पता चला कि बर्फ़ का स्तर इस साल के दौरान सामान्य सालों से पाँच भाग नीचे रहा है। क्षेत्र के पश्चिमी भागों में यह गिरावट बहुत अधिक दिखाई पड़ती है। औसत से नीचे हिम दीर्घस्थायित्व असंगति से इस साल की शुरुआती गर्मियों में पानी की उपलब्धता पर भी संकट है।

इस कमतर हुए स्थायित्व का मुख्य कारण कमजोर पश्चिमी विक्षोभ का होना है। पश्चिमी विक्षोभ वही पछुवा पवन है जो दूर भूमध्य सागर, कैस्पियन सागर और काला सागर में कम दबाव का क्षेत्र बनने से उठती हैं। यही पछुवा पवन हिन्दूकुश–हिमालय क्षेत्र में वर्षा और हिमपात करवाती हैं। पछुवा पवन अपने जन्म स्थान पर लगातार समुद्र सतह के उच्च तापमान के कारण कमजोर और देर से शुरू हो रही हैं। बदलती हुई जलवायु और वैश्विक ऊष्मन (ग्लोबल वार्मिंग) के चलते पश्चिमी विक्षोभ के पैटर्न पर असर पड़ा है। इसके चलते उष्णकटिबंधीय प्रशांत महासागर में ला–नीना व एल–नीनो परिस्थितियाँ लम्बी और तीव्र हो गई हैं। इनका असर भी पश्चिमी विक्षोभ की गतिविधि पर पड़ा है। इसके चलते हिन्दूकुश–हिमालय के अंचल में शीतकालीन बारिश और हिमपात घट रहे हैं। इससे पूर्व हिम दीर्घस्थायित्व वर्ष 2018 में सामान्य से निचले स्तर का रहा था। इस वर्ष का निचला स्तर वर्ष 2018 के स्तर से भी नीचे है।

सभी नदी द्रोणियों के इस साल के स्नो पर्सिस्टेन्स पर अलग–अलग नजर डालें तो मध्य एशिया की सबसे लम्बी नदी आमू दरिया की द्रोणी अब तक के सबसे निचले हिम दीर्घस्थायित्व का सामना कर रही है। सामान्य से 28.2% नीचे जाकर यह स्थैर्य वर्ष 2018 के 17.7% का रिकॉर्ड तोड़ रहा है। इस नदी द्रोणी ने साल 2008 में सामान्य से 32.5% अधिक हिम स्थैर्य का अनुभव भी लिया था।

सभी नदी द्रोणियों में सबसे ज्यादा दीर्घस्थायित्व में गिरावट हिन्दूकुश–हिमालय से निकलकर दक्षिण–पश्चिमी अफगानिस्तान और पूर्वी ईरान को बहने वाली हेलमंद नदी द्रोणी में पाई गई है। इस बार, यह सामान्य वर्ष से 31.8% कम होकर दूसरी बार एक निम्नतर स्तर पर पहुँच गई है। इस नदी द्रोणी में अब तक का निम्नतम हिम स्थैर्य मान औसत से 41.9% नीचे साल 2018 में था। यद्यपि इस नदी द्रोणी के संदर्भ में बड़ा रोचक तथ्य यह है कि वर्ष 2020 में इस द्रोणी में पिछले 22 सालों में उच्चतम हिम दीर्घस्थायित्व रहा था, जो औसत से 44% ऊपर था।

म्यांमार देश की प्रमुख नदी इरावदी के बेसिन में ज़मीन पर बर्फ़ ठहरने का समय पिछले 22 वर्षों में डांवाडोल रहा है। वर्ष 2017 में यह समय औसत से 12.5% नीचे रहकर पिछले 22 वर्षों में निम्नतम स्तर में रहा था। साल 2023 में यह औसत से 19.1% ज्यादा दर्ज किया गया था। वर्तमान वर्ष की रिपोर्ट के अनुसार स्नो पर्सिस्टेन्स/हिम स्थैर्य स्थानिक विषमता को दर्शाते हुए औसत से मात्र 4% कम रहा है।

इसी तरह मेकांग, तारिम, यांग्त्सीक्यांग नदी द्रोणियों में और तिब्बती पठार में हिम दीर्घस्थायित्व औसत से क्रमशः 1.1%, 27.8%, 13.02% और 14.8% नीचे दर्ज किया गया है।

भारत के संदर्भ में इस हिम दीर्घस्थायित्व में आई गिरावट की चर्चा करने से पहले एक रोचक तथ्य को जानते हैं कि सालवीन और येल्लो नदी द्रोणियों में इस साल पर्सिस्टेन्स औसत से क्रमशः 2.4% और 20.2% ऊपर रहा

है। येल्लो (ह्वांगहो) नदी द्रोणी में बर्फ़ इस मामले में बहुत अधिक चंचलता दिखा रही है। 2008 के साल में इस द्रोणी में बर्फ़ जमे रहने का समय औसत मान से 74.5% से ऊपर रहा था। पिछले 22 सालों में यह वर्ष 2015 में सबसे निचले स्तर पर पहुँचा जोकि औसत से 42.2% कम था। हिम दीर्घस्थायित्व में इस वर्ष आए उछाल का सम्भावित कारण वहाँ का ख़ास वायु परिवहन तंत्र हो सकता है। येल्लो नदी द्रोणी में पूर्वी एशियाई शीतकालीन मानसून के साथ साइबेरिया और मंगोलिया से ठंडी हवा आती हैं। इनके अलावा दूसरे क्षेत्रों खासकर प्रशान्त महासागर से आर्द्र हवा पहुँचती हैं। इनके बीच हुई अंतरक्रिया से द्रोणी के ऊपरी भागों के अधिक ऊँचाइयों वाले इलाकों में बर्फ़बारी हो जाने के कारण हिम स्थैर्य औसत से ज्यादा बढ़ सकता है।

भारत के संदर्भ में इस बदलाव की बात कहें तो, सीधे तौर पर जुड़ी तीन नदी द्रोणियाँ ब्रह्मपुत्र, गंगा, और सिन्धु औसत से क्रमशः 14.6%, 17% और 23.3% कम हिम दीर्घस्थायित्व की मार झेल रही हैं। पिछले 22 वर्षों के दौरान गंगा द्रोणी में वर्ष 2015, ब्रह्मपुत्र द्रोणी में वर्ष 2019 और सिन्धु द्रोणी में वर्ष 2020 में स्थैर्य का सामान्य से क्रमशः 25. 6%, 27.1% और 15.5% ऊँचा मान रहा था। इन तीनों नदियों को बर्फ़ और हिमनद के पिघलने से मिलने वाली जल मात्रा इस बात की गवाही देती है कि हिम दीर्घस्थायित्व इन तीनों नदी द्रोणियों के लिए कितना महत्वपूर्ण है? बर्फ़ के गलने से गंगा 10.3% और हिमनदों के गलने से 3.1% पानी प्राप्त करती है। ब्रह्मपुत्र और सिन्धु नदी द्रोणियों में भी क्रमशः 13.2% और लगभग 40% पानी बर्फ़ के गलने से आता है। वहीं, क्रमशः 1.8% और 5% पानी हिमनदों से इन दोनों नदियों को मिलता है। इन परिस्थितियों को देखते हुए यह स्पष्ट कहा जा सकता है कि इन नदियों पर आश्रित आबादी को पानी की भारी किल्लत का सामना इस वर्ष में करना पड़ेगा। यह कमी और भारी बन जाएगी अगर गर्मी के शुरूआती मौसम की बारिश में देरी या कमी हुई।

यह परिघटना एक चेतावनी है इस नाज़ुक क्षेत्र के बाशिन्दों, नदियों के निचले छोरों के किनारों में रहने वाले समाजों, नीति निर्माताओं और शोधकर्ताओं के लिए। सम्बद्ध एजेंसियों, विभागों और मंत्रालयों को कमर कसकर आने वाले खतरों के लिए पहले से ही उपाय और राहत कार्यवाही को तैयार करना पड़ेगा :

- हिन्दूकुश–हिमालय के निवासियों, इसकी तलहटी और इससे निकली नदियों के मैदानों, घाटियों, तटों के निवासियों को इस खामोश लेकिन खतरनाक बदलाव के बारे में समझाकर जल संसाधन प्रबंधन पर स्थानीय, क्षेत्रीय और राष्ट्रीय स्तर पर साझा कार्य,
- वर्षा जल का समुचित प्रबंधन,
- सिंचाई और अन्य उपयोगों में वैज्ञानिक तरीकों का समावेश,
- ज़मीन में बर्फ को ज्यादा समय तक बाँधे रखने के लिए मूल प्राकृतिक तौर पर पाए जाने वाले पेड़ों का पौधारोपण

जैसे उपाय घट चुके हिम दीर्घस्थायित्व के प्रभाव को तुरन्त कम करने के लिए स्थानीय और क्षेत्रीय स्तर पर किए जाने चाहिए।

दीर्घकालिक उपायों में

- जलवायु परिवर्तन और वैश्विक ऊष्मन के कुप्रभावों को कम करने के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सीमापारीक नदियों को साझा करने वाले देशों के बीच जल प्रबंधन नीतियों को सुधारने,
- अँधाधुन उत्सर्जन को वैश्विक स्तर पर कम करने,
- जीवाश्म ऊर्जा–ईंधन के खपत और उत्पादन को वैश्विक स्तर में कम करने, खासतौर पर जी–20 के देशों में जिनका उत्सर्जन में 80% का योगदान है,
- पेरिस समझौते के तहत निर्धारित तापमान बढ़त की 1.5 डिग्री सेल्सियस सीमा पर पुनर्विचार

जैसे सशक्त और अपरिहार्य कदमों को त्वरित उठाने की आवश्यकता है।

हिन्दूकुश–हिमालय का अमूल्य भण्डार पृथ्वी के लिए है। इसको सुरक्षित रखना हम सबका कर्तव्य है।

पृथ्वी पर जीवन के विकास से जुड़ी परिकल्पना

संजय गोस्वामी
यमुना जी –13, अणुशक्तिनगर, मुंबई –94

वर्तमान समय में, ब्रह्मांड की उत्पत्ति के बारे में सबसे अधिक स्वीकृत सिद्धांत बिग बैंग सिद्धांत है। इसे विस्तारित ब्रह्मांड कल्पना भी कहा जाता है। 1920 में एडविन हबल ने प्रमाण दिया कि ब्रह्मांड का विस्तार हो रहा है। समय बीतने के साथ आकाशगंगाएँ एक–दूसरे से दूर जा रही हैं। आप एक प्रयोग करके जान सकते हैं कि ब्रह्मांड के विस्तार का क्या मतलब है। एक गुब्बारा लें और उस पर कुछ निशान लगाएँ, जिन्हें आप आकाशगंगाएँ मान सकते हैं। जब आप इस गुब्बारे को फुलायेंगे, तो गुब्बारे पर लगे ये निशान गुब्बारे के फैलने के साथ–साथ एक–दूसरे से दूर जाते हुए दिखाई देंगे। 1796 में गणितज्ञ ला प्लेस के अनुसार, ग्रहों का निर्माण धीरे–धीरे घूमने वाले पदार्थ के बादल से हुआ था जो सूर्य की युवा अवस्था से जुड़ा था। 1950 में रूस के ओटो श्मिट और जर्मनी के कार्ल वेइशॉप्ट ने नेबुलर परिकल्पना में कुछ संशोधन किए। उनके अनुसार, सूर्य एक सौर नेबुला से घिरा हुआ था जो मुख्य रूप से हाइड्रोजन, हीलियम और धूल के कणों से बना था। इन कणों के घर्षण और टकराव से एक चपटी डिस्क के आकार का बादल बना और अभिवृद्धि की प्रक्रिया से ग्रहों का निर्माण हुआ। अंततः वैज्ञानिकों ने न केवल पृथ्वी या अन्य ग्रहों बल्कि पूरे ब्रह्मांड की उत्पत्ति से जुड़ी समस्याओं को समझने की कोशिश की। इसी तरह, आकाशगंगाओं के बीच की दूरी भी बढ़ रही है और परिणामस्वरूप ब्रह्मांड का विस्तार हो रहा है। हालाँकि, आप पायेंगे कि गुब्बारे पर चिह्नों के बीच की दूरी के अलावा, चिह्न स्वयं भी आगे बढ़ रहे हैं। यह तथ्य के अनुरूप नहीं है। वैज्ञानिकों का मानना है कि आकाशगंगाओं के बीच की दूरी बढ़ रही है, लेकिन अवलोकन यह साबित नहीं करते हैं कि आकाशगंगाओं के बीच की दूरी बढ़ रही है। होयल ने 'स्थिर अवस्था परिकल्पना' के नाम से इसका विकल्प प्रस्तुत किया। इस परिकल्पना के अनुसार ब्रह्मांड किसी भी समय एक जैसा ही रहा है। हालांकि ब्रह्मांड के विस्तार के संबंध में अनेक प्रमाणों के अस्तित्व को देखते हुए अब वैज्ञानिक समुदाय ब्रह्मांड के विस्तारवादी सिद्धांत के पक्ष में है।

तारों का निर्माण

प्रारंभिक ब्रह्मांड में ऊर्जा और पदार्थ का वितरण एक समान नहीं था। घनत्व में प्रारंभिक अंतर के कारण गुरुत्वाकर्षण बलों में अंतर आया, जिसके परिणामस्वरूप पदार्थों का संचयन हुआ। यह संचयन आकाशगंगाओं के विकास का आधार बना। आकाशगंगा असंख्य तारों का समूह होती है। आकाशगंगाओं का विस्तार इतना अधिक होता है कि उनकी दूरी हजारों प्रकाश वर्ष में मापी जाती है। एक एवेफल आकाशगंगा का व्यास 80 हजार से 1 लाख 50 हजार प्रकाश वर्ष के बीच हो सकता है। आकाशगंगा का निर्माण हाइड्रोजन गैस से बने एक विशाल बादल के जमा होने से शुरू होता है जिसे नेबुला कहते हैं ऐसा माना जाता है कि तारों का निर्माण लगभग 5 से 6 अरब वर्ष पूर्व हुआ होगा। प्रकाश वर्ष समय का नहीं बल्कि दूरी का माप है। प्रकाश की गति 3 लाख किमी प्रति सेकंड होती है। विचारणीय है कि प्रकाश द्वारा एक वर्ष में तय की गई दूरी एक प्रकाश वर्ष होगी। यह 9.46×10^{12} किमी के बराबर है। पृथ्वी और सूर्य के बीच औसत दूरी 14 करोड़ 95 लाख, 98 हजार किलोमीटर है। प्रकाश वर्ष के संदर्भ में यह मान 1.58×10^{-5} प्रकाश वर्ष होता है। ग्रहों का निर्माण ग्रहों के विकास में निम्न चरण माने जाते हैं: (i) प्रारम्भ में ब्रह्माण्ड को बनाने वाले सभी पदार्थ एक स्थान पर एक अत्यन्त छोटे गोले (एकल परमाणु) के रूप में स्थित थे। जिसका आयतन अत्यंत सूक्ष्म तथा तापमान एवं घनत्व अनंत था। (ii) बिग बैंग की प्रक्रिया में इसी अत्यन्त छोटे गोले में भीषण विस्फोट हुआ। इस प्रकार की विस्फोट प्रक्रिया से बहुत बड़ा विस्तार हुआ। वैज्ञानिकों का मानना है कि बिग बैंग की घटना 13.7 अरब वर्ष पूर्व हुई थी। ब्रह्मांड का विस्तार अभी भी जारी है। विस्तार के कारण कुछ ऊर्जा पदार्थ में परिवर्तित हो गई। विस्फोट (शीतलन) के बाद सौवें हिस्से के एक छोटे से

हिस्से में बहुत बड़ा विस्तार हुआ। इसके बाद विस्तार की गति धीमी हो गई। (iii) बिग बैंग के पहले तीन मिनट के भीतर ही पहला परमाणु बना। (iv) बिग बैंग से 3 लाख साल के दौरान तापमान 4500°F तक गिर गया और परमाण्विक पदार्थ का निर्माण हुआ। ब्रह्मांड पारदर्शी हो गया। भौतिक भूगोल के मूल सिद्धांत (i) तारे एक नेबुला के अंदर गैस के समूह होते हैं। इन समूहों में गुरुत्वाकर्षण बल के कारण गैसीय क्लोज़ में एक समूह बन गया। शुरुआत में पृथ्वी एक चट्टानी, गर्म और उजाड़ ग्रह था जिसका पतला वायुमंडल हाइड्रोजन और हीलियम से बना था। यह आज की पृथ्वी के वायुमंडल से बहुत अलग था। अगले कुछ खंडों में आप पढ़ेंगे कि पिछले 4.6 अरब वर्षों में इस ग्रह पर जीवन विकसित हुआ। पृथ्वी की संरचना स्तरित है। वायुमंडल के बाहरी किनारे से लेकर पृथ्वी की पपड़ी तक का पदार्थ एक समान नहीं है। वायुमंडलीय पदार्थ का घनत्व सबसे कम है। पृथ्वी की सतह से लेकर आंतरिक भाग तक कई क्षेत्र हैं और प्रत्येक क्षेत्र में पदार्थ की अलग–अलग विशेषताएं हैं। पृथ्वी की स्तरित संरचना कैसे विकसित हुई?

स्थलमंडल का विकास

प्लेनेटेसिमल और अन्य खगोलीय पिंड ज्यादातर घने और हल्के पदार्थों के समान मिश्रण से बने होते हैं। इसे उल्कापिंडों के अध्ययन से जानते हैं। कई प्लेनेटेसिमल के जमा होने से ग्रहों का निर्माण होता है। पृथ्वी का निर्माण भी इसी तरह हुआ था। जब गुरुत्वाकर्षण बल के कारण पदार्थ संकुचित हो रहा था, तो एकत्रित पिंडों ने पदार्थ पर प्रभाव डाला। इससे बहुत अधिक गर्मी पैदा हुई। अत्यधिक गर्मी के कारण पृथ्वी आंशिक रूप से द्रव अवस्था में रही तथा उच्च तापमान के कारण घनत्व में अंतर के कारण हल्के और भारी घनत्वों का मिश्रण अलग होने लगा। इस पृथक्करण के कारण भारी पदार्थ (जैसे लोहा) पृथ्वी के केंद्र में चले गए तथा हल्के पदार्थ पृथ्वी की सतह या ऊपरी भाग की ओर आ गए। समय के साथ यह और अधिक ठंडा हुआ तथा ठोस रूप में बदलकर आकार में छोटा होता गया। अंततः यह पृथ्वी की पपड़ी के रूप में विकसित हुआ। हल्के और भारी घनत्वों के पृथक्करण की इस प्रक्रिया को विभेदन कहा जाता है। चंद्रमा के निर्माण के दौरान भीषण टक्कर के कारण पृथ्वी का तापमान पुनः बढ़ा अथवा ऊर्जा उत्पन्न हुई और यह विभेदन का दूसरा चरण था। विभेदन की इस प्रक्रिया से पृथ्वी का पदार्थ अनेक परतों में अलग हो गया। पृथ्वी की सतह से लेकर पपड़ी तक अनेक परतें हैं। जैसे पपड़ी, मेंटल, बाहरी कोर और भीतरी कोर। पदार्थ का घनत्व पृथ्वी के ऊपरी भाग से भीतरी भाग की ओर बढ़ता है। प्रत्येक परत की विशेषताओं का आगे में विस्तार से अध्ययन करेंगे। वायुमंडल एवं जलमंडल का विकास पृथ्वी के वायुमंडल की वर्तमान संरचना में नाइट्रोजन एवं ऑक्सीजन का मुख्य योगदान है। वर्तमान वायुमंडल के विकास की तीन अवस्थाएँ हैं। इसकी प्रथम अवस्था में आदिम वायुमंडलीय गैसों में कमी आती है। दूसरी अवस्था में पृथ्वी के भीतर से निकलने वाली भाप एवं जलवाष्प वायुमंडल के विकास में योगदान करते हैं। प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया का विकास 17 अरब वर्ष पूर्व हुआ। लंबे समय तक जीवन केवल महासागरों तक ही सीमित रहा। प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया से ऑक्सीजन में वृद्धि महासागरों की देन है। धीरे–धीरे महासागर ऑक्सीजन से संतृप्त हो गए और 2 अरब वर्ष पूर्व वायुमंडल पूरी तरह ऑक्सीजनयुक्त हो गया।

जीवन की उत्पत्ति

पृथ्वी की उत्पत्ति का अंतिम चरण जीवन की उत्पत्ति एवं विकास से संबंधित है। निःसंदेह पृथ्वी का प्रारंभिक वायुमंडल जीवन के विकास के लिए अनुकूल नहीं था। आधुनिक वैज्ञानिक जीवन की उत्पत्ति की व्याख्या एक रासायनिक प्रतिक्रिया के रूप में करते हैं जिसमें पहले जटिल कार्बनिक अणु बने और एकत्रित हुए। यह संयोजन ऐसा था कि यह खुद को दोहराने (पुनर्निर्माण) में सक्षम था, और निर्जीव पदार्थ को जीवित पदार्थ में बदल सकता था। हमारे ग्रह पर जीवन के निशान अलग–अलग समय की चट्टानों में पाए जाने वाले जीवाश्मों के रूप में हैं। 3 अरब साल पुरानी भूगर्भीय चट्टानों में पाई जाने वाली सूक्ष्म संरचनाएं आज के शैवाल की संरचना से मिलती जुलती हैं। यह कल्पना की जा सकती है कि पहले सरल संरचना वाले शैवाल रहे होंगे। ऐसा माना जाता है कि जीवन का विकास लगभग 3.8 अरब साल पहले शुरू हुआ था। एकल कोशिका

वाले जीवाणुओं से जीवन के विकास का सार 9वीं सदी में वायुमंडल में जलवाष्प, नाइट्रोजन, कार्बन डाइऑक्साइड, मीथेन और अमोनिया बहुत अधिक था और मुक्त ऑक्सीजन बहुत कम थी। पृथ्वी के आंतरिक भाग से गैसों के पृथ्वी पर आने की प्रक्रिया को गैस उत्सर्जन कहते हैं। लगातार ज्वालामुखी विस्फोटों के कारण वायुमंडल में जलवाष्प और गैसें बढ़ने लगीं। पृथ्वी के ठंडा होने के साथ ही जलवाष्प का संघनन शुरू हो गया। वायुमंडल में मौजूद कार्बन डाइऑक्साइड बारिश के पानी में घुल गई और इससे तापमान में और कमी आई। नतीजतन, अधिक संघनन हुआ और अत्यधिक वर्षा हुई। बारिश का पानी धरती की सतह पर बने गड्ढों में इकट्ठा होने लगा, जिससे महासागरों का निर्माण हुआ। पृथ्वी पर पानी कहां से आया, यह एक बहुत बड़ा अनसुलझा रहस्य है। पानी के स्रोतों का पता लगाने के लिए तमाम तरह के अनुसंधानों और अटकलों के बावजूद वैज्ञानिक यह बताने की स्थिति में नहीं है कि पृथ्वी को पानी आखिर कहां से मिला। अभी तक यह माना जा रहा था कि हमारे ग्रह को पानी धूमकेतुओं के सौजन्य से प्राप्त हुआ है। लेकिन पिछले दिनों यूरोपियन स्पेस एजेंसी के रोजेटा अंतरिक्षयान से मिली नई जानकारी के बाद वैज्ञानिक पानी के स्रोत के बारे में अपनी धारणा बदलने को मजबूर हुए हैं। अब उनका कहना है कि पृथ्वी पर पानी धूमकेतुओं के बजाय क्षुद्रग्रहों ने पहुंचाया है। धूमकेतु हमारे सौरमंडल के अत्यंत प्राचीन निर्माण खंड हैं। वैज्ञानिकों का खयाल है कि इन्हीं मटमैले बर्फीले पिंडों ने जीवन के लिए आवश्यक महत्वपूर्ण कार्बनिक यौगिकों को पृथ्वी पर पहुंचाया था। रोजेटा अंतरिक्षयान ने कॉमेट 67 पी, सी–जी की संरचना के बारे में नई जानकारी भेजी है। इस जानकारी के विश्लेषण से वैज्ञानिकों को सौरमंडल और पृथ्वी के विकास में इन आवारा बर्फीले पिंडों की भूमिका को बेहतर ढंग से समझने में मदद मिल रही है। उल्लेखनीय है कि रोजेटा यान पिछले अगस्त में किसी धूमकेतु का चक्कर लगाने वाला पहला अंतरिक्ष यान बन गया था। नवंबर में इस यान के फायली लैंडर ने धूमकेतु की सतह पर उत्तर कर पूरी दुनिया के वैज्ञानिकों को आश्चर्य चकित कर दिया था। रोजेटा अब वैज्ञानिकों को पृथ्वी के पानी के रहस्य को सुलझाने में मदद कर रहा है। अगस्त में धूमकेतु की परिक्रमा शुरू करने से पहले रोजेटा धूमकेतु के आसपास मौजूद गैसों की रासायनिक संरचना के विश्लेषण के लिए रोजिना नामक उपकरण का इस्तेमाल किया। वैज्ञानिको ने इस उपकरण से प्राप्त पानी से संबंधित डेटा पर अपना ध्यान केंद्रित किया ताकि इस बात का खुलासा किया जा सके कि पृथ्वी के समुद्रों को क्षुद्रग्रहों ने पानी पहुंचाया या धूमकेतुओं ने। पृथ्वी के जन्म को समझने के लिए बनाए गए मॉडलों से पता चलता है कि 4.6 अरब वर्ष पहले अपने गठन के तुरंत बाद पृथ्वी बहुत गर्म थी। अतः वैज्ञानिकों के मुताबिक इस बात की संभावना बहुत कम है कि ग्रह की सतह पर इस वक्त मौजूद पानी उसके जन्म काल से ही है। इस संबंध में पिछले अध्ययनों से संकेत मिला था कि पृथ्वी के गठन के करीब 80 करोड़ वर्ष बाद ब्रह्मांडीय प्रहारों के हिंसक दौर में पानी हमारे ग्रह पर पहुंचा।

धरती पर आधे के अधिक पानी सौर प्रणाली से भी पुराना है, यूनिवर्सिटी ऑफ मिशिगन खगोलविदों का सिद्धांत है। साइंस के ताजा अंक में प्रकाशित शोधकर्ताओं का काम हमारे ग्रह और सौर मंडल के पानी के गठन के बारे में एक बहस सेटल करने में मदद करता है। शोधकर्ताओं के लिए यह सवाल अनुत्तरित है कि सूर्य को घेरे प्रोटोप्लानेटरी डिस्क (सौर निहारिका–इसी से ग्रहों की उत्पत्ति मानी जाती है, इंटरस्टेल आइस में सूर्य के अभिभावकीय ग्रह और तारों के बीच मौजूद हाइड्रोजन घनत्व से जन्मा या इस घनत्व में हुई रासायनिक क्रियाओं से उत्पन्न हुआ। 30 से 50 प्रतिशत आणविक बादल से आया, यूनिवर्सिटी ऑफ मिशिगन में डॉक्टरेट की छात्र इल्स क्लीव्स कहती हैं। इसके अनुसार पानी सौर प्रणाली की तुलना में लगभग एक लाख साल पुराना हैं। उन्होनें पानी के दो अलग किस्मों के पर फोकस किया – सामान्य प्रकार के और भारी संस्करण। धूमकेतु और पृथ्वी के महासागर में विशेष अनुपात में – सूरज से अधिक – भारी पानी है। रसायन विज्ञान के अनुसार पृथ्वी को बहुत ठंडे स्रोत से पानी प्राप्त हुआ जो शून्य से 10 डिग्री से ऊपर था। सूरज ने जो काफी गरम है, इस ड्यूटेरियम, या भारी पानी के फिंगरप्रिंट को मिटा दिया, बरगीन के अनुसार, सौर प्रणाली के सिमुलेशन को शुरू करने के लिए, वैज्ञानिकों ने घड़ी को वापस घुमा कर भारी पानी को खाली कर दिया। फिर बटन दबा कर यह देखने की कोशिश की कि पृथ्वी और धूमकेतु में पानी का अनुपात कैसा हैं। क्लीव्स के अनुसार,

केमिस्ट्री को एक लाख साल विकसित होने दिया – यह ग्रह के गठन डिस्क बनने का समय हैं – और पाया कि डिस्क की रासायनिक प्रक्रियाएं सौर प्रणाली में भारी पानी बनाने में अक्षम थी। इसका तात्पर्य यह है कि अगर ग्रहों के डिस्क ने पानी नहीं बनाया तो यह विरासत में मिला। सौर प्रणाली का कुछ पानी सूरज से पहले मौजूद था। पृथ्वी पर जीवन पानी पर निर्भर करता है। पानी का अनुमान लगाने से वैज्ञानिकों को आकाशगंगा भर में पानी कितना आम है यह समझने में मदद मिलेगी। क्लीव्स के अनुसार यह निष्कर्ष बहुत रोमांचक है, अगर पानी का गठन हर तारकीय सिस्टम में स्थानीय प्रक्रिया से होता है तो जीवन के गठन के लिए आवश्यक पानी और अन्य महत्वपूर्ण रासायनिक अवयवों की मात्रा हर प्रणाली के लिए भिन्न हो सकती है। बरगीन के अनुसार, हमारे सिमुलेशन और खगोलीय समझ के आधार पर हाइड्रोजन और ऑक्सीजन परमाणुओं से पानी का गठन तारकीय जन्म के प्रारंभिक दौर का एक सर्वव्यापी घटक है। यह पानी शून्य से केवल 10 डिग्री पर स्टार के जन्म से पहले बना है। धरती पर मौजूद महासागरों का निर्माण धरती की उत्पत्ति से करीब 500 मिलियन साल के अंदर हुआ था। इससे हमें पता चलता है कि महासागर 400 करोड़ साल पुराने हैं। जीवन का विकास करीब 380 करोड़ साल पहले शुरू हुआ था। हालांकि जीवन का विकास करीब 1000 मिलियन साल पहले शुरू हुआ था, लेकिन जीवन का विकास करीब 1000 मिलियन साल पहले शुरू हुआ था।

अमर शहीदों के चारण श्रीकृष्ण सरल का औपन्यासिक शिल्प

स्वाति चढ्ढा
सीएसआईआर–राष्ट्रीय रासायनिक प्रयोगशाला
डॉ. होमी भाभा मार्ग, पाषाण, पुणे–411008

'श्रीकृष्ण सरल' ऐसे साहित्यकार थे, जिन्होंने क्रांतिकारी साहित्य, बाल–साहित्य,राष्ट्रभक्ति साहित्य क्षेत्र की अनेकों विधाओं जैसे महाकाव्य, उपन्यास, नाटक, निबंध, गजलें, कविताएं, संस्मरण इत्यादि में लिखा है। जीवन पर्यंत कठोर साहित्य साधना में लीन रहकर उन्होंने अत्यंत प्रेरणादायक साहित्य का सृजन किया है, किंतु यह आश्चर्य की स्थिति है कि इतने महान ग्रंथों तथा उत्कृष्ट रचनाओं का सृजन करने के उपरांत भी उन्हें वह प्रसिद्धि तथा पहचान नहीं मिली, जिसके वे अधिकारी थे।

वे एक युगदृष्टा साहित्यकार थे। 20 वीं और 21वीं, इन दो शताब्दियों के बीच अब तक ऐसी सृजनात्मक शक्ति और एक साथ इतने क्रांतिकारी ग्रंथों के सृजन का विश्व कीर्तिमान स्थापित करने वाले साहित्यकार उनके अतिरिक्त शायद ही कोई हो। इस धरती पर मां शारदा की मूक साधना करने वाले सहज साधक और महान सर्जकों की यदि सूची बनाई जाए, तो अपने खून की लाली में कलम डुबोकर भारत के स्वाधीनता संग्राम की कहानी और महान देशभक्तों व शहीदों की कुर्बानी का इतिहास अपने ग्रंथों और महाकाव्यों के पृष्ठों पर रचने वाले साहित्यकारों में से शायद सरल जी एक ऐसे इकलौते साहित्यकार हैं, जिनकी साहित्य साधना के मूल्यांकन की ओर सुधी आलोचकों का ध्यान नहीं गया। उनके लेखन और संघर्षशील साधना का मूल्यांकन करते हुए महान क्रांतिकारी पं. परमानंद जी ने कहा था–'श्रीकृष्ण सरल जीवित शहीद है, उनकी साहित्य साधना तपस्या है, क्रांतिकारी लेखन के लिए उनके जीवन का हर पल तिल–तिल कर उन्हें शहादत की ओर ले जा रहा है।'

सरल जी ने लेखन में कई विश्व कीर्तिमान स्थापित किए। उन्होंने 124 ग्रंथों का प्रणयन किया, सर्वाधिक क्रांति–लेखन और सर्वाधिक 12 महाकाव्यों की रचना का श्रेय भी श्रीकृष्ण सरल जी को ही प्राप्त है। सरल जी की पद्य रचनाएं तो फिर भी हिंदी साहित्यकारों के बीच कहीं–न–कहीं परिचित है और उनका बहुत न सही, कुछ मूल्यांकन जरूर हुआ है किंतु उनकी गद्य रचनाएं हिंदी समीक्षा के क्षेत्र में नितांत अपरिचित और गुमनाम सी है। आश्चर्य का विषय यह है कि श्रीकृष्ण सरल द्वारा रचित अधिकांश साहित्य महान क्रांतिकारियों को समर्पित है तथा उनकी ये बेजोड़ कृतियां एक देशभक्त की सच्ची राष्ट्र–अर्चना कही जा सकती है, फिर वे हिंदी साहित्य के समीक्षकों से अछूती कैसे रह गई। गद्य साहित्य में उन्होंने उपन्यास, निबंध, कहानी, नाटक, संस्मरण इत्यादि सभी विधाओं में अपना योगदान दिया है।

औपन्यासिक शिल्पः साहित्यकार के लिए विविध भाषाई प्रयोगों को अपनाना शिल्प संस्कार का वह सेतु है, जहां लेखकीय अनुभूति तथा वास्तविकता का मिलन होता है। शिल्प शब्द अंग्रेजी भाषा के 'टेक्नीक' का हिन्दी अनुवाद है। व्यापक अर्थों में देखा जाए तो विषयवस्तु को कला के रूप में प्रस्तुत करने की प्रक्रिया ही शिल्प कहलाती है। शिल्प की दृष्टि से कहानी और उपन्यास ऐसी विधाएं है , जो अन्य कलाओं की अपेक्षा अधिक बोधगम्य है।

उपन्यासकार अपने उपन्यास का प्रयोजन, उद्देश्य जिस कथानक के माध्यम से प्रस्तुत करता है, उसकी प्रस्तुति वह प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से करता है। प्रत्यक्ष रूप से कथानक बुनने हेतु पात्रों की सृष्टि की जाती है और उपन्यास में तो पात्रों की जैसे भरमार ही रहती है, वह भी अगर ऐतिहासिक उपन्यास हो तो यह संभावना अधिक ही बनी रहती है, किंतु पात्रों की भरमार होने के बावजूद जो उपन्यासकार उसके मुख्य पात्र के चरित्र को अच्छी तरह से उभार पाए तथा अन्य सभी पात्रों के चरित्र के साथ न्याय कर पाएं, वहीं साहित्यकार सफल उपन्यासकार कहलाता है। श्रीकृष्ण सरल के उपन्यासों में की गई पात्र सृष्टि वास्तविक,

औचित्यपूर्ण तथा संयत है और इस दृष्टि से सरलजी ने ऐतिहासिकता के निर्वाह के साथ –साथ मुख्य पात्र को भी अच्छी तरह उभारा हैं।

'चंद्रशेखर आजाद' नामक उपन्यास में कथानक को प्रत्यक्ष रूप से गतिशीलता देने वाले मुख्य पात्रों में महान क्रांतिकारी चंद्रशेखर आजाद, मन्मथनाथ गुप्त, रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाक उल्ला खां, सदाशिव मलकापुरकर, विश्वनाथ वैशंपायन, पं. हरिशंकर, भगतसिंह, फणीन्द्र घोष इत्यादि है। गौण पात्रों में सुरेंद्र पांडे, मनमोहन बैनर्जी, यशपाल,राजगुरू, सांडर्स, भगवतीचरण,दुर्गा भाभी, पृथ्वी सिंह, इंस्पेक्टर शंभूनाथ इत्यादि का समावेश हैं तथा इसके अलावा कथानक को आगे बढ़ाने वाले पात्र हैं –ठाकुर मलखान सिंह, महंत जी, रामदयाल, भगवानदास, मास्टर रूद्रनारायण, सिराजुद्दीन खां, मनोहरलाल त्रिवेदी, प्रकाशवती, सुशीला दीदी, शालिगराम शुक्ला, सार्जेंट टिटर्टन, ठाकुर विश्वेश्वर सिंह इत्यादि। उर्पयुक्त पात्रों द्वारा उपन्यासकार श्री सरल जी ने बड़ी कुशलता से उद्देश्यपूर्ति की है। उपन्यास के प्रमुख पात्र और नायक है अमर बलिदानी चंद्रशेखर आजाद, जो कि भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के एक अद्वितीय नायक रहे है। उपन्यास में चंद्रशेखर आजाद शौर्य और वीरता के प्रतीक बनकर उभरे हैं। उपन्यास के प्रथम भाग में ही पाठकों को किशोर उम्र के आजाद की वीरता के दर्शन होते है। इस उपन्यास में सरल जी ने अमर शहीद चंद्रशेखर आजाद के जीवन की सत्य और ऐतिहासिक घटनाओं को उभारा हैं। इस उपन्यास में वर्णित प्रायः सभी पात्रों को देखने और उनके संपर्क में रहने का सौभाग्य श्री सरल जी को प्राप्त हुआ था, जिसके कारण उनके द्वारा रचित सभी पात्रों में जीवतंता और सहजता है। उन्होंने इस उपन्यास में क्रांतिकारी आंदोलन के संबंध में फैली हुई भ्रांतियों को दूर करने का तथा विभिन्न ऐतिहासिक घटनाओं पर शोध करने का प्रयास किया है। प्रस्तुत उपन्यास में चंद्रशेखर आजाद जी के जीवन के सभी महत्वपूर्ण पक्षों को अत्यंत रोचक तथा सहज तरीके से प्रस्तुत किया गया है। इस उपन्यास में काकोरी कांड, भारतीय प्रजातांत्रिक सेना का गठन, सान्डर्स वध इत्यादि घटनाओं की बड़ी सशक्त प्रस्तुति की गई है।

सरल जी द्वारा लिखित प्रसिद्ध क्रांतिकारी सूर्यसेन उर्फ मास्टर दा के जीवन पर आधारित ''चटगांव का सूर्य'' नामक उपन्यास अत्यंत महत्वपूर्ण है तथा इसकी सबसे बड़ी विशेषता इसकी प्रामाणिकता है। अपनी प्रामाणिकता में यह एक प्रकार से इतिहास की एक कड़ी है। श्रीकृष्ण सरल ने अपनी चित्रात्मक भाषा और वर्णनात्मक शैली का प्रयोग करके देशभक्ति की इस अद्वितीय कथा को अपने उपन्यास में पिरोया है। 'चटगांव का सूर्य' नामक उपन्यास में सूर्यसेन प्रमुख पात्र है तथा अन्य सहायक पात्रों में निर्मल सेन,नरेश रे,लोकनाथ, गणेश घोष, अनंत सिंह, हिमांशु, आनंद गुप्त, जीवन घोषाल, रामकृष्ण विश्वास, थानेदार माखनलाल दीक्षित, मजूमदार, जमींदार नेत्रसेन इत्यादि है। इस उपन्यास में सरल जी ने 1930 में घटित चटगांव शस्त्रागार कांड को बड़े ही प्रामाणिक स्वरूप में प्रस्तुत किया है। उपन्यास के सभी पात्र वास्तविक है और उनका चरित्र चित्रण बड़े ही कुशल तथा संयत रूप से किया गया है।

'जय हिन्द' नामक उपन्यास में मुख्य पात्र श्री सुभाष चंद्रबोस हैं तथा अन्य सहायक पात्रों में नेताजी का भतीजा शिशिर बोस, भगतराम, कर्नल हबीबर्रहमान, एस.ए. अय्यर, जापानी तथा जर्मन के अधिकारीगण तथा आजाद हिन्द फौज के असंख्य वीर सैनिक है। आजाद हिंद फौज के संस्थापक नेता जी सुभाषचंद्र बोस के जीवन पर आधारित उपन्यास 'जय हिंद' के बारे में सरल जी ने कहा है– नेताजी पर लगभग दस हजार पृष्ठ लिख चुकने के पश्चात् भी मैं महसूस करता रहा था कि अभी मुझे वह चीज लिखनी है जो नेताजी के समस्त प्रभाव को थोड़े में समेट सके और उनका सही चित्र लोगों के सामने रख सके। 'जय हिंद' उसी दिशा में किया गया एक प्रयास है।' जय हिंद उपन्यास का यह कथन दृष्टव्य है–' याद रखो कि तुम्हें आजादी की कीमत चुकानी हैं। आजादी कभी भीख रूप में नहीं मिलती।'

'यतीन्द्रनाथ दास' नामक उपन्यास में प्रमुख पात्र यतीन्द्रनाथ दास तथा अन्य पात्रों में प्रसिद्ध क्रांतिकारी भगत सिंह, बटुकेश्वर दत्त तथा शचींद्रनाथ सान्याल इत्यादि हैं। इसी तरह 'रामप्रसाद बिस्मिल' उपन्यास के नायक अमर शहीद रामप्रसाद बिस्मिल हैं तथा उपन्यास के कथानक को गतिशीलता प्रदान करने वाले पात्रों में अशफाक उल्ला खां,

राजेंद्रनाथ लाहिड़ी, ठाकुर रौशनसिंह, शचीन्द्रनाथ बख्शी, चंद्रशेखर आजाद और स्वामी सोमदेव इत्यादि हैं। इस उपन्यास को पढ़कर पाठकों को जानकारी होती है कि यतीन्द्रनाथ दास के अंतःकरण में अपनी मातृभूमि के प्रति कितना अमिट लगाव था तथा किस तरह उन्होंने लगातार अनशन करते हुए मातृभूमि के लिए अपने प्राणों का बलिदान दिया।

श्रीकृष्ण सरल जी का अंतिम उपन्यास 'दूसरा हिमालय' हैं,जिसमें श्री तिलक जी की संकल्पशक्ति, विचारधारा एवं उनके द्वारा किए गए अनेक महत्वपूर्ण कार्यों को काल–क्रमानुसार प्रस्तुत करने का अत्यंत सफल प्रयास किया गया है। तिलक जी के संपूर्ण जीवन के रंगों से पूरित उपन्यास ''दूसरा हिमालय'' का कथानक मूल रूप से बाल गंगाधर तिलक जी के द्वारा किए गए महत्वूपर्ण कार्यों और विचारों को पाठकों तक पहुंचाने में पूर्णरूपेण सक्षम है। श्री लोकमान्य तिलक हिमालय पर्वत की तरह अड़िग एवं मजबूत इरादों वाले व्यक्ति थे, जिन्होंने अपना हर कदम स्वराज्य प्राप्ति की ओर बढ़ाया और देशवासियों को इसी पथ पर अग्रसर किया। तिलक जी 1881 से लेकर अपनी मृत्यु के समय 1920 तक भारतीय राजनीतिक गगन के सर्वाधिक जगमगाते सितारे रहे। वे महान देशप्रेमी, प्रबुद्ध विचारक, प्रखर तेजस्वी वक्ता, शिक्षा–शास्त्री और समाज सेवी भी थे। गणेश पूजन के धार्मिक कृत्य को उन्होंने सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनैतिक रंग प्रदान करने का अभूतपूर्व कार्य किया हैं। इस उपन्यास पर अपनी टिप्पणी देते हुए सरल जी कहते हैं कि –''मैंने केवल क्रांतिकारियों पर ही लिखा हैं इसलिए इस कृति के लिखते समय लोगों का यह पूछना स्वाभाविक ही था कि क्या तिलक जी भी क्रांतिकारी थे? मेरा विश्वास हैं कि तिलक घोर क्रांतिकारी थे। पिस्तौल या बम चलाकर लोगों की हत्या करने वालों को क्रांतिकारी नहीं कहते, बल्कि कोई व्यक्ति अपने विचारों से ही क्रांतिकारी हुआ करता हैं। 'बाघा जतिन' नामक उपन्यास में सरल जी ने बाघा जतिन (ज्योतिन्द्रनाथ मुखर्जी) के जीवन पर प्रकाश डाला है। इसके अलावा उनके उपन्यास 'राजगुरू' में हम महान क्रांतिकारी राजगुरू जी के जीवन संघर्ष तथा उनके राष्ट्र प्रेम की झांकी के दर्शन कर सकते हैं।

श्रीकृष्ण सरल अपने साहित्य के माध्यम से सामाजिक क्रांति लाने वाले साहित्यकार हैं। यह सामाजिक क्रांति उनके समग्र साहित्य में परिलक्षित होती है। उनके द्वारा सृजित समस्त उपन्यासों में भी सरल जी की क्रांतिकारी और देशभक्ति की तीव्र भावना को चेतना के विविध धरातलों में अनुभूत किया जा सकता है। स्वतर्गीय सरल जी में क्रांतिकारियों के प्रति अनुराग बचपन से ही था। देशप्रेम और क्रांति की यही भावना उनके समस्त साहित्य में स्पष्ट रूप से प्रकाशित हुई है। उन्होंने अमर क्रांतिकारी शहीदों को अपने लेखन का विषय चुना और उनके जीवन की समस्त घटनाओं को और जानकारियों को ढूंढ–ढूंढ कर एकत्र करके साहित्य लिखा। इस प्रकार उनके द्वारा लिखे गए सभी उपन्यास वास्तविक चरित्रों पर आधारित है और सत्य घटनाओं को प्रकाशित करते हैं।

सरल जी के उपन्यासों का वर्ण्यभ विषय भारतीय स्वाधीनता संग्राम के आजादी के मतवाले वीर क्रांतिकारी हैं, जो अपनी मातृभूमि की खातिर हंसते–हंसते फांसी के फंदे पर झूल गए। श्रीकृष्ण सरल का साहित्य एक ओर शहीदों के प्रति श्रद्धांजलि है तो दूसरी ओर हमारे लिए उनका साहित्य प्रेरणा है। श्रीकृष्ण सरल की रचनाएं इतनी ओजस्वी हैं कि उनको पढ़कर हम राष्ट्र प्रेम की गंगा में तैरने लगते हैं तथा उनके लिखे उपन्यासों और कहानियों को पढ़कर हम अपने देश के क्रांतिकारियों और शहीदों के जीवन संघर्ष तथा बलिदान गाथा को जान सकते हैं।

श्रीकृष्ण सरल के उपन्यासों में एक विशेष दृष्टि देखने को मिलती है वह है– समर्पण एवं राष्ट्र भक्ति से परिपूर्ण चरित्र योजना। उनके उपन्यासों के सभी पात्र क्रांतिकारी हैं। उनकी वीरता एवं त्याग,बलिदान को बड़ी ही सहजता और सौंदर्य के साथ वर्णित किया गया है। भाषा शैली अत्यंत संयत तथा बोधगम्य है। उनके समस्त उपन्यास अत्यंत ही प्रामाणिक हैं तथा क्रांतिकारियों की विचार धारा, उनके संघर्षों तथा उनके बलिदान गाथा को पाठकों तक पहुंचाने में सफल सिद्ध हुए हैं। ''निःसंदेह अपने उपन्यासों द्वारा सरल जी ने क्रांतिकारियों के समग्र जीवन पथ को सशक्त अभिव्यक्ति दी है। देश और समाज में जब–जब शौर्य, पराक्रम, साहस, बलिदान और त्याग की भावनाओं की आवश्यकता होगी, तब–तब सरल जी का साहित्य अक्षय

स्त्रोत बन कर सुसुप्त चेतना को जागृत करने में सहायक होगा।''

संदर्भ

1. हिन्दी उपन्यास कला, डॉ. प्रताप नारायण टंडन
2. हिन्दी साहित्य का निबंधात्मक इतिहास, उमेश शास्त्री
3. प्राक्कथन, चटगांव का सूर्य, लेखक—श्रीकृष्ण सरल
4. प्रस्तावना, बाघा जतीन, लेखक—श्रीकृष्ण सरल
5. प्राक्कथन, अमर क्रांतिकारी चंद्रशेखर आजाद, लेखक—श्रीकृष्ण सरल
6. जयहिन्द, लेखक – श्रीकृष्ण सरल
7. प्राक्कथन, राजगुरू, लेखक श्रीकृष्ण सरल
8. पृ.32—33, राजगुरू, लेखक श्रीकृष्ण सरल
9. पृ.219, हिन्दी की राष्ट्रीय काव्यधारा एवं श्रीकृष्ण सरल, राजेश्वरी प्रकाशन, गुना

प्रदूषण से बचने का नया उपाय है हरित भवन

गोमती गोस्वामी,
बी आर्क, योजना और वास्तुकला विभाग,
आईआईटी, बीएचयू, वाराणसी

ग्रीन बिल्डिंग कंसेप्ट यानी हरित भवन अवधारणा भारत जैसे देशों के लिये नया हो सकता है लेकिन विदेशों में इसका चलन करीब 20 साल पहले ही शुरू हो चुका है। अच्छी बात यह है कि हमारे देश में भी अब इसकी तरफ लोगों और खासकर बिल्डर्स का ध्यान गया है। फिलहाल दुनिया में भारत पीछे है। इसमें अमेरिका पहले और चीन दूसरे स्थान पर है। देश के अलग–अलग शहरों में करीब तीन हजार से ज्यादा ग्रीन बिल्डिंग के प्रोजेक्ट पर काम चल रहा है। बीते पाँच सालों में ही बेंगलुरु, हैदराबाद, पंचकूला तथा चंडीगढ़ के साथ इंदौर और भोपाल जैसे शहरों में भी इसे लेकर लोगों की उत्सुकता बढ़ी है। इसके लिये बकायदा इंडियन ग्रीन बिल्डिंग कौंसिल अलग–अलग शहरों में जाकर बिल्डर्स और लोगों तक इसके फायदे गिना रहे हैं। ग्रीन बिल्डिंग खासतौर पर पर्यावरण को ही ध्यान में रखकर बनाए जाते हैं। ये पर्यावरण को किसी तरह का नुकसान नहीं पहुँचाते हैं और उर्जा के बेतहाशा क्षय को भी रोकते हैं। बिगड़ते हुए पर्यावरण के नुकसानों को देखते हुए इनमें उर्जा और पानी बचाने पर जोर होता है। इनके आस–पास बड़ी संख्या में पेड़–पौधे लगाए जाते हैं ताकि इसके तापमान को नियंत्रित किया जा सके। हमारे देश में हरियाली को करीब 30 से 35 फीसदी तक बढ़ाने की जरूरत है, जबकि सिंगापुर जैसी छोटी जगह पर हरियाली 49 फीसदी तक है। इनमें प्रकृति और पर्यावरण के नजरिए से यह खास तौर पर ध्यान रखा जाता है कि यहाँ रहने वाले लोगों को उजाले और साफ हवा के लिये बिजली और अन्य संसाधनों का इस्तेमाल कम से कम करना पड़े। इनका तापमान भी ठंडा बना रहता है और सबसे बड़ी बात तो यह है कि इन सब फायदों के बाद भी इसकी लागत सामान्य मकानों की कीमत के मुकाबले महज तीन फीसदी ही ज्यादा होगी यानी बहुत कम अंतर। विकास की अलग तरह की अवधारणा और प्राथमिकताओं ने बीते कुछ सालों में ही हमारे सामने कई बड़े पर्यावरणीय संकट खड़े कर दिए हैं। ये

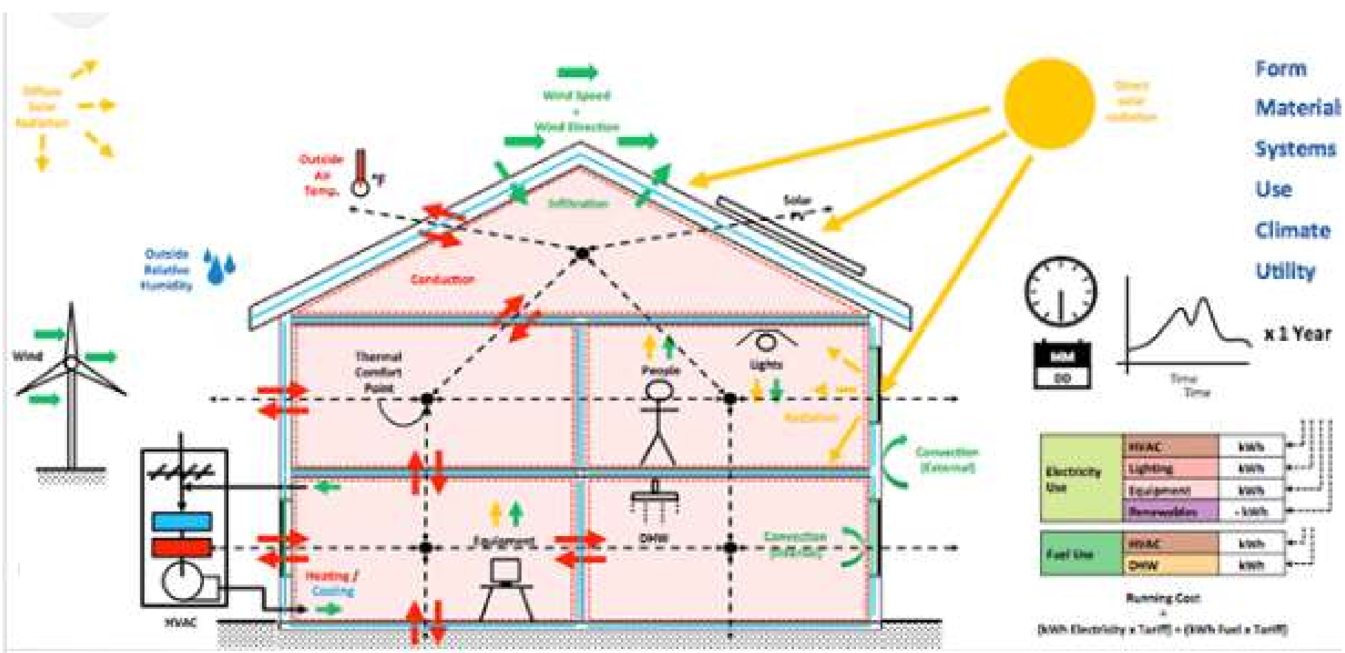

संकट अब हमारे जीवन और सेहत के लिये ही भारी पड़ने लगे हैं। इसी तथाकथित विकास में लगातार निर्माण प्रक्रिया से प्रकृति और पर्यावरण को हो रहे नुकसान को कम करने की दिशा में सबसे कारगर साबित हो रही है ग्रीन बिल्डिंग या हरित भवन की अवधारणा। आने वाले भविष्य के लिये यह सबसे जरूरी कदम है। प्रदूषण के बुरे असर को कम करने के लिये अब हरित भवन अवधारणा (ग्रीन बिल्डिंग कंसेप्ट) पर जोर दिया जा रहा है। इससे प्रदूषण के खतरे को काफी हद तक कम किया जा सकता है, वहीं इससे बिजली– पानी का कम से कम उपयोग तथा प्रदूषण कम होने से भी इसका चलन बढ़ने की उम्मीद जताई जा रही है। इसमें कचरा निस्तारण और प्राकृतिक आपदाओं से बचने के भी कारगर उपाय होंगे। ऐसे मकानों में अपेक्षाकृत करीब 10 डिग्री तक तापमान को कम कर सकेंगे। ग्रीन कंसेप्ट के मकानों में पर्यावरण को बिना नुकसान पहुँचाए अधिक से अधिक प्राकृतिक संसाधनों का इस्तेमाल किया जाता है। जैसे सूरज का उजाला मकान के अधिकांश हिस्से को रोशन कर सके ताकि बिजली की खपत कम हो सके। रात में जहाँ जरूरी हो वहाँ भी कितने वाट का बल्ब या ट्यूबलाइट जरूरी है तथा जहाँ जरूरी नहीं हो वहाँ खपत कम हो, इसके लिये भी ध्यान रखा जाता है। इसी तरह खिड़कियाँ आदि ऐसी बनाई जाती हैं कि लगातार हवा मिलती रहे। ऐसे मकानों में प्राकृतिक हवा के प्रवेश और निकासी के लिये जतन किए जाते हैं, इससे पंखें, कूलर और एसी चलाए बिना भी आसानी से प्राकृतिक हवा हर जगह मिलती रहे। गर्मियों के दिनों में बिना किसी संसाधन के मकान को ठंडा रखे जाने की तकनीक भी इसमें होती है। फ्लाई एश की टाइल्स अपेक्षाकृत ठंडी होती है और गर्मियों के दिनों में जब गर्म हवा और धूप की वजह से मकान की बाहरी दीवारें काफी गर्म हो जाती है तो ऐसे में भी फ्लाई एश अंदर के तापमान को ठंडा बनाए रखती है। इसके अलावा भूजल स्तर को बढ़ाने के लिये इसमें प्राकृतिक रीचार्ज की तकनीकों तथा सीवरेज की अत्याधुनिक तकनीकों का भी इसमें उपयोग किया जाता है। इनके निर्माण में भूकम्परोधी तकनीकों का भी इस्तेमाल किया जा रहा है। इन सब वजहों से यह खासा लोकप्रिय हो रहा है। इनमें पानी की बचत पर सबसे ज्यादा ध्यान दिया गया है। इनमें वाटर रिचार्जिंग के साथ पानी के पुनरुपयोग पर भी जोर दिया गया है। सीवरेज ट्रीटमेंट कर दैनिक उपयोग के लिये मकान में इस्तेमाल किए जा रहे पानी को साफ बनाकर इसे रिसायकिल किया जा सकेगा। इसमें पेड़ पौधों के लिये भी काफी बड़ी जगह रखी जाती है, इसके साथ ही बालकनी, खिड़की, गैलरी, छत और ओपन टेरेस में भी गमलों के जरिए छोटे–छोटे पौधों को लगाया जाने का प्रावधान किया गया है। इस तरह के प्रोजेक्ट में बिजली की बचत के लिये सौर उर्जा का उपयोग करने के लिये सोलर प्लेट भी लगाई जा रही हैं। भारत में इसकी शुरूआत 2001 में हैदराबाद के सोहराबजी गोदरेज ग्रीन बिजनेस सेंटर के निर्माण के साथ हुई थी। शुरूआत के वर्षों में इन भवनों की लागत आम भवनों से 18% ज्यादा आती थी। परंतु तकनीक के बेहतर उपयोग से अब यह अंतर महज 5% तक रह गया है। हरित भवन को सफल बनाया जा सकता है। परंतु यह सफलता पश्चिमी पैमानों पर नही वरन् भारतीय पैमानों को लागू करके ही प्राप्त की जा सकती है। जैसे पश्चिमी देशों की हरित भवन में कांच का ज्यादा उपयोग होता है, परंतु भारतीय मौसम के अनुसार कांच घरों को जल्दी गर्म करेगा और इसकी उपयोगिता नहीं है। इस तरह से व्यावहारिक धरातल पर अगर काम किया जाए, तो हरित भवन अत्यधिक लाभप्रद सिद्ध हो सकती हैं। यूं तो हरित भवन के लिए जो अलग संसाधन प्रयुक्त होते हैं, वे अलग–अलग राज्यों में उपलब्धता के अनुसार तय किए जाते हैं। जैसे असम में बांस ज्यादा मिलता है, तो उसे ही ग्रीन मटेरियल माना जाएगा। तीसरे, इसमें संरचना प्रणाली का बहुत महत्व होता है। पुराने जमाने में जैसे ऊंची छतें और मोटी दीवारें ठंडक बनाए रखती थीं, उस तरह की बातों को ध्यान में रखा जाता है। चौथे, इसमें प्रयुक्त ऊर्जा व संसाधनों के सही उपयोग को ध्यान में रखा जाता है, भवनों, वनस्पतियों और अन्य भू–दृश्य तत्वों सहित परिसर के बुनियादी ढांचे के रणनीतिक डिजाइन और लेआउट की योजना बनाकर गर्मियों और सर्दियों में गंभीर मौसम के प्रतिकूल प्रभावों को कम करने के लिए रणनीति तैयार की जाती है। सुनिश्चित किया जाता है कि समस्त परिसर का विकास आसपास के प्राकृतिक वातावरण के अनुकूल है। इसे स्थानीय क्षेत्रों की प्राकृतिक जैव विविधता की रक्षा और संवर्धन करना चाहिए और इसका उद्देश्य स्थानीय लुप्तप्राय वनस्पतियों और जीवों का संरक्षण करना होगा। परिसर में भू–दृश्य के लिए संरचनात्मक जटिलता में वृद्धि और देशी प्रजातियों के उपयोग को बढ़ावा देकर वनस्पतियों और जीवों के निवास स्थान की गुणवत्ता में वृद्धि करना। पुराने पेड़ों और पक्षियों

और जीवों के अन्य रूपों के लिए उनके निवास स्थान की भूमिका को महत्व दें। एक वनस्पति उद्यान और यदि संभव हो तो, देशी जंगल के एक टुकड़े का रखरखाव करें। जहां कहीं संभव हो वहां तालाब और दलदल जैसे आर्द्रभूमि बनाएं। प्रासंगिक पारिस्थितिक संकेतक जैसे कि जैव विविधता और पारिस्थितिक तंत्र सेवाओं, जो यह प्रदान करता है, इसका उपयोग करके प्रत्येक 5 वर्षों में परिसर के पारिस्थितिक सर्वेक्षण का संचालन किया जाना चाहिए। जिससे ईमारत ग्रीन बनी रह सके। न्यूनतम प्रारंभिक बिंदु के रूप में उपयुक्त हरित भवन रेटिंग प्रणाली को अपनाकर नए भवन डिजाइन में सतत सुविधाओं को एकीकृत करें और उच्चतम रेटिंग प्राप्त करने का लक्ष्य रखें ताकि संसाधनों को अनुकूलित किया जा सके और वे स्वस्थ, उत्पादक वातावरण प्रदान करें। भारत कार्बन डाई ऑक्साइड गैस उत्सर्जन के मामले में दुनिया के अग्रणी देशों की श्रेणी में शामिल है। कार्बन डाइ ऑक्साइड उत्सर्जन की बढ़ती समस्या में बिल्डिंग निर्माण की भी एक बड़ी भूमिका है। एक अनुमान के अनुसार वर्ष 2025 तक भारत कंस्ट्रक्शन क्षेत्र में विश्व में तीसरे स्थान पर होगा। आज पूरी दुनिया जलवायु परिवर्तन से जुड़ी चुनौतियों का सामना कर रही है। जलवायु परिवर्तन से पैदा हुई समस्याओं से निपटने के लिए भारत के कुछ समूह ग्रीन बिल्डिंग मूवमेंट को बढ़ावा दे रहे हैं और इन मूवमेंट में से एक है– ग्रीन रेटिंग फॉर इंटीग्रेटेड हैबिटैट असेसमेंट (GRIHA)।

ग्रीन बिल्डिंग संरचनाएँ बनाने और ऐसी प्रक्रियाओं का उपयोग करने का अभ्यास है जो किसी इमारत के निर्माण से लेकर डिजाइन, निर्माण, संचालन, रखरखाव, नवीनीकरण और डीकंस्ट्रक्शन तक के पूरे जीवन चक्र में पर्यावरण के लिए जिम्मेदार और संसाधन–कुशल हों। यह अभ्यास

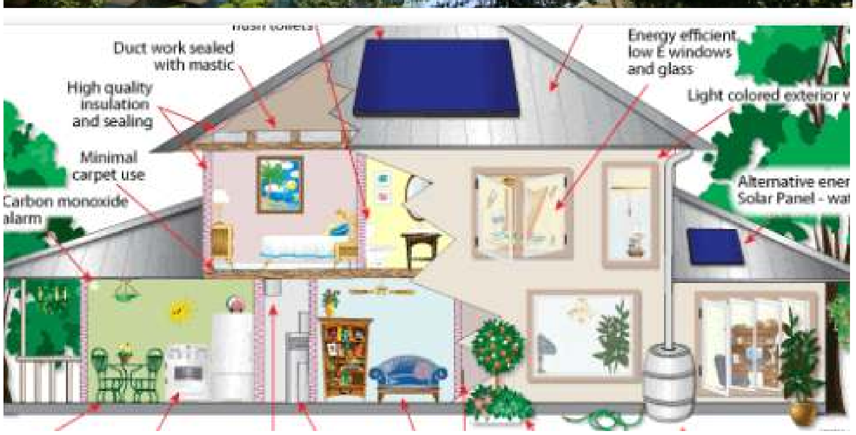

अर्थव्यवस्था, उपयोगिता, स्थायित्व और आराम की शास्त्रीय भवन डिजाइन का विस्तार और पूरक है। हरित भवन को टिकाऊ या उच्च प्रदर्शन वाली इमारत के रूप में भी जाना जाता है। निर्मित बिल्डिंग संरचनाएँ पर्यावरण के प्रभाव डिजाइन, निर्माण, संचालन, रखरखाव नवीकरण डीकंस्ट्रक्शन ऊर्जा पानी, सामग्री, प्राकृतिक संसाधन, वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, घर के अंदर का प्रदूषण, ताप द्वीप निर्मित, पर्यावरण के पहलू है।

हरित इमारतें मानव स्वास्थ्य और प्राकृतिक पर्यावरण के लिए डिजाइन की गई हैं। हरित इमारतों के निम्न लाभ हैं:

- ऊर्जा, जल और अन्य संसाधनों का कुशलतापूर्वक उपयोग करना।
- अधिवासी स्वास्थ्य की रक्षा करना और कर्मचारी उत्पादकता में सुधार करना।
- अपशिष्ट, प्रदूषण और पर्यावरणीय गिरावट को कम करना।
- निर्मित पर्यावरण के अनुकूल डिजाइन।

उदाहरण के लिए, हरित इमारतें अपने निर्माण में टिकाऊ सामग्रियों को शामिल कर सकती हैं (उदाहरण के लिए, पुनः उपयोग की गई, पुनर्नवीनीकरण–सामग्री, या नवीकरणीय संसाधनों से बनी) या न्यूनतम प्रदूषकों (जैसे, कम उत्पाद उत्सर्जन) के साथ स्वस्थ इनडोर वातावरण बनायें और या ऐसी भू–दृश्य रचना की विशेषता है जो पानी के उपयोग को कम करती है (उदाहरण के लिए, देशी पौधों का उपयोग करके जो अतिरिक्त पानी के बिना जीवित रहते हैं)। देश में आवासीय और वाणिज्यिक डेवेलपर अपनी परियोजनाओं को ग्रीन बिल्डिंग की अवधारणा के आधार पर तैयार करने में गंभीरता दिखा रहे हैं। ग्रीन बिल्डिंग की सुविधाएं मुहैया कराने वाली नोएडा स्थित स्पेक्ट्रल सस्टेनेबिलिटी ग्रुप के परियोजना प्रबंधक आशीष जैन ने बताया कि देश में पर्यावरण के अनुकूल भवन निर्माण की अवधारणा के प्रति आवासीय और वाणिज्यिक डेवेलपर इच्छुक नजर आ रहे हैं।

ग्रीन बिल्डिंग एक ऐसी अवधारणा है, जिसमें पानी, बिजली और अन्य वस्तुओं का कम इस्तेमाल कर इमारतों की दक्षता बढ़ाई जाती है। मसलन, धरती पर मौजूद संसाधनों का उचित उपयोग कर भवन का निर्माण करना ताकि पर्यावरण पर कम से कम दबाव पड़ सके। ग्रीन बिल्डिंग में बेहतर निर्माण, परिचालन और रखरखाव का उचित चयन किया जाता है। इसके अलावा, पर्यावरण के लिए अनुकूल डिजाइन, साइट आदि का भी अधिक ख्याल रखा जाता है। ग्रीन बिल्डिंग की अवधारणा को न सिर्फ व्यक्तियों के लिए बल्कि डेवेलपरों के बीच भी काफी पसंद किया जा रहा है।

जल की गुणवत्ता पर उत्पत्ति स्थल, प्रवाह दिशा व ऋतु का प्रभाव

दया शंकर त्रिपाठी
बी 2/63 सी–1के, भदैनी, वाराणसी–221001

नदियों के उत्पत्ति स्थल और प्रवाह की दिशा का उसके जल की गुणवत्ता पर प्रभाव देखा गया है। सामान्यतया इनकी उत्पत्ति ऊँचे पर्वत शिखरों से होती हैं। अब यह उत्पत्ति स्रोत पर निर्भर करेगा कि उसके प्रवाह की दिशा पूरब है या पश्चिम और उसी के अनुसार उसके जल के गुण–दोष भी बनने लेने लगते हैं।

सभी पूर्व की तरफ बहने वाली नदियाँ भारी (गुरु) होती हैं और पश्चिम की तरफ बहने वाली नदियाँ निश्चय ही हल्की होती हैं। प्रत्येक देश में अपने गुणविशेष से नदियाँ गौरव (भारीपन) तथा लाघव (हल्कापन) को धारण करती हैं।

विन्ध्य पर्वत से पूरब, दक्षिण, पश्चिम तथा उत्तर की ओर जो नदियाँ हैं, वे क्रमशः निम्नलिखित गुण को धारण करती हैं। विन्ध्य से पूरब की नदियाँ वातरोग तथा पेट की गुड़गुडाहट को दूर करती हैं, दक्षिण की नदियाँ, कफ–विकार एवं पित्त–विकार को नष्ट करती हैं। पश्चिम की नदियाँ पित्त को बढ़ाती हैं तथा उत्तर की नदियाँ पथ्यपाक करने वाली हैं।

हिमालय, मलयाचल, विन्ध्याचल तथा सह्य पहाड़ पर जो नदियाँ स्रवती (उत्पन्न होती) हैं वे शिरोरोग आदि दोषों को उत्पन्न करती हैं और वहाँ उत्पन्न न होकर बहने वाली नदियाँ शिरोरोग आदि दोषों को दूर करती हैं।

विभिन्न ऋतुओं के अनुसार जल के गुण

वर्षाऋतु की नदियों का जल पीनस रोग (दुर्गन्धयुक्त नासा स्राव), कफजन्य विकार, श्वासवृद्धि तथा कास को उत्पन्न करता है। शरद–काल में उत्पन्न नदियों का जल पथ्य है तथा वातविकार एवं कफविकार को दूर करता है। हेमन्तकाल में नदियों का जल बुद्धिवर्द्धक होता है। शिशिर तथा वसन्त काल में नदियों का जल संताप को दूर करता है तथा कल्याणकारक होता है और ग्रीष्मऋतु में प्यास, दाह, वमन तथा थकावट को दूर करता है और अच्छे गुणों को देने वाला हैं।

अनूप देश के जल का गुण

अनूप देश का जल स्वादिष्ट, स्निग्ध, पित्तशामक तथा गुरु होता है। पामा, कण्डूति (खुजली), कफविकार, वातविकार तथा ज्वर रोग को बढ़ाता है।

जांगल प्रदेश के जल का गुण

जांगल प्रदेश का जल स्वादिष्ट त्रिदोषनाशक तथा रुचिकारक होता है। यह पथ्य है, आयु, बल, वीर्य एवं पुष्टि को देता है तथा अच्छी तरह कान्तिवर्द्धक है।

साधारण प्रदेश के जल का गुण

साधारण प्रदेश का जल रुचिकारक, जाठराग्निदीपक, पाचक तथा हल्का होता है। यह थकावट तथा प्यास को दूर करने वाला, वातज, कफज तथा मेदोरोग को नष्ट करने वाला एवं पुष्टिकारक होता है।

देश तथा मिट्टी के भेद से जल के गुण

देश विशेष के अनुसार ताम्रवर्ण की मिट्टी में उत्पन्न जल वातादि दोषों को उत्पन्न करने वाला है, धूसर मिट्टी में उत्पन्न जल जड़ताकारक, दुष्पच तथा अनेक दोषों को उत्पन्न करता है। पहाड़ के ऊपर से उत्पन्न जल वातनाशक स्वच्छ, पथ्य, हल्का तथा स्वादिष्ट है और श्याम (काली) वर्ण की मिट्टी से उत्पन्न जल श्रेष्ठ है तथा त्रिदोष शामक एवं सभी प्रकार के रोगों को नाश करने वाला है।

झरना, तड़ाग, वापी और कूप के जल का गुण

झरना (प्रस्रवण) का जल स्वच्छ, हल्का मधुर, रुचिकारक तथा जाठराग्नि–दीपक है। तड़ाग का जल स्वाद में मधुर तथा कषाय होता है तथा थोड़ा वातकारक है। वापी (बावली) का जल संतापकारक, वात कफवर्द्धक तथा भारी होता है। कूप (कुआं) का जल कफनाशक, क्षारीय, पित्तकारक तथा हल्का होता है।

उद्भिद् (भूधरा) जल का गुण

उद्भिद् (भूधरा) से उत्पन्न जल पित्तशामक तथा हल्का होता है।

केदार (पानी भरे खेत) के जल का गुण

केदार का जल विपाक में स्वादिष्ट, दोषकारक तथा भारी होता है। वही केदार जल चारो तरफ से बँधे होने पर विशेष दोष को उत्पन्न करने वाला है।

हंसोदक जल तथा उसके गुण

नदी का जल नवीन मिट्टी के घड़े में रखकर दिन में सूर्य के किरणों से तपाया हुआ, रात्रि में चन्द्रमा के किरणों से शीतल किया हुआ, मन्दाग्नि से पकाया हुआ इलायची, खश आदि से सुगन्धित किया हुआ जल हंसोदक जल कहलाता है। यह हंसोदक जल थकावट को दूर करने वाला है और पित्तजन्य उष्णता, दाह, विषजन्य–उपद्रव, मूर्च्छा, रक्त विकार तथा मदात्यय (अधिक मद्य सेवनजन्य उपद्रव) में हितकर कहा गया है।

नासा द्वारा पान किया गया जल (घ्राण पीतोदक) के गुण

जो व्यक्ति प्रतिदिन रात्रि में स्वादिष्ट ठंढा जल का पान करता है या जो बुद्धिमान् व्यक्ति प्रातःकाल नासारन्ध्र (नाक) के द्वारा जल पान करता है वह शीघ्र ही गरुड़ की नेत्रशक्ति से स्पर्धा करने लगता है अर्थात् गरुड़ की नेत्रशक्ति के समान गुणवाला हो जाता है, और बुद्धि में स्वर्गाचार्य गुरु को हँसता है तथा शरीर से दोनों अश्विनी कुमारों को निन्दित कर देता है। अर्थात् रात्रि में शीतल जल पीने से तथा प्रातरू नासिका द्वारा जल पीने से नेत्रशक्ति, वृद्धि तथा शरीर की वृद्धि होती है।

दूषित जल का लक्षण

विष्ठा, मूत्र, अरुण विष एवं नीलिका विष से युक्त, गरम, गाढ़ा, फेनयुक्त, दाँतों से ग्रहण करने योग्य, बिना ऋतु का (ऋतु विपरीत), नमक मिला हुआ, सेवार से ढँका हुआ, जन्तु समूह (क्रिमि झुण्ड) से मिला हुआ, अत्यन्त भारी, सड़े पत्तों के ढेर से गंदला, और चन्द्रमा तथा सूर्य की किरणों से तिरोहित अर्थात जिसमें सूर्य तथा चन्द्रमा की किरण न जाती हो। ऐसा जल जड़ तथा दोषकारक होता है। इस प्रकार के दुष्ट जल को नहीं पीना चाहिए।

रोगविशेष में शीतल जल का निषेध

पार्श्वशूल (पसली का दर्द), प्रतिश्याय, वातविकार, नवीनज्वर, हिचकी, आध्मान (पेट में वायु का भरना) आदि रोग में शीतल जल नहीं पिलाना चाहिए।

रोग विशेष में शृतशीत जलपान का विधान

धातुक्षय, रक्त विकारजन्य रोग, वमन, रक्तप्रमेह, विषजन्य भ्रम, जीर्ण तथा शिथिलता (दौर्वल्य), सन्निपात में शृतशीत (पकाकर शीतल किया हुआ) जलपान कराना प्रशस्त है।

पादादिहीन तप्त जल के गुण

चौथाई भाग जलाकर पकाया हुआ जल वातादि रोगों को नाश करने वाला पथ्य कहा गया है। अर्द्धावशिष्ट तप्तजल वात–पित्त को नष्ट करता है तथा चतुर्थांशावशिष्ट संतप्त जल तो तीनों दोषों को नष्ट करता है।

ऋतुविशेष में पादादिहीन तप्त जल के गुण

हेमन्त ऋतु में चतुर्थांशरहित तप्तजल, शरदऋतु में अष्ठमांशावशिष्ट तप्त जल, वर्षा, वसन्त, शिशिर तथा ग्रीष्म ऋतु में अर्द्धांशावशिष्ट तप्त जल प्रशस्त होता है।

ऋतु विशेष में कौपादि जल ग्रहण का विधान

कुआं तथा झरना का जल शिशिर तथा वसन्त ऋतु में सेवन करना चाहिए। ग्रीष्म ऋतु में चौड़ का जल सेवन करना चाहिए। इसके विपरीत जल का सेवन करना दोषकारक होता है।

उष्ण जल सेवन करने का नियम

दिन का गरम हुआ जल रात को जड़ (जड़ता युक्त) हो जाता है तथा रात गरम किया हुआ जल दिन में भारी हो जाता है। अतरू दिन का गरम किया हुआ जल दिन में तथा रात का गरम किया हुआ जल रात में ही सेवन करना चाहिए।

अवस्था विशेष में शीत तथा उष्ण जल की हितकारिता

काल (समय), अवस्था तथा देह की स्थिति के अनुसार कहीं–कहीं पर शीतल जल, तथा कहीं–कही पर थोड़ा गरम

जल और कहीं—कहीं पर ठंढा किया हुआ जल का प्रयोग मनुष्यों के लिए पथ्य होता है।

रात्रि में गरम जलपान का गुण

रात्रि में पान किया हुआ गरम जल वातरोग को दूर करता है, कफ को शीघ्र ही निकालता है, अरुचि (भोजन में अरुचि) को नाश करता है, भुक्तान्न को पचाता है तथा जाठराग्नि को प्रदीप्त करता है।

समय विशेष में जलपान का गुण

रात्रि में पिया हुआ जल अजीर्ण दोष को शान्त करता है, ऐसा सामान्यतरू विद्वान् लोग कहते हैं। रात्रि के अन्त में पिया हुआ जल सभी प्रकार के रोगों को दूर करता है। भोजन के बाद पिया हुआ जल पुष्टिकारक होता है जबकि भोजन के पहले पिया हुआ जल अपौष्टिक होता है और भोजन के बीच—बीच में पिया हुआ जल रुचिकारक, जाठराग्निवर्द्धक तथा पथ्य होता है।

मात्रा विशेष में जलपान का नियम

भोजन के समय अत्यधिक जलपान करने से जाठराग्नि अन्न को नहीं पचाता, बिलकुल जल न पीने से भी जाठराग्नि द्वारा अन्न का परिपाक नहीं होता। अतरू मनुष्य जाठराग्नि को प्रदीप्त करने के लिये भोजन के बीच—बीच में थोड़ा—थोड़ा तथा बार—बार जल पीवे।

अन्तरिक्ष जल के भेद

विद्वान लोग अन्तरिक्ष जल का चार भेद बताते हैं। धार, कारक, तौषार तथा है। ये चार प्रकार का अन्तरिक्ष (आकाशीय) जल होता है।

धार—आदिक चतुर्विध अन्तरिक्ष जल के स्वरूप

वर्षा के जल की धार जल, वर्षा तथा उपल (ओले) के जल को कारका जल, नीहार (ओस) के जल को तौषार जल तथा प्रातरूकालीन हिम (बर्फ) के जल को हैम जल कहते हैं।

धारा जल के भेद

गंगा—धार तथा समुद्र—धार के भेद से धार—जल दो प्रकार का होता है। यहाँ पर गंग (गंगा का) धार जल अधिक गुणवाला, दोषरहित तथा उत्तम पाचक होता है।

गंङ्गाधार जल का लक्षण

जब आश्विन मास में स्वाति तथा विशाखा नक्षत्र के सूर्य होते हैं उस समय के मेघ का जल गाङ्गधार जल होता है ऐसा विद्वान लोग कहते है।

समुद्र धार जल के लक्षण

अन्य मास में जब मृगशिरा आदि नक्षत्रों में सूर्य के होने पर मेघ से जल बरसता है, उस जल को समुद्र धार जल कहा जाता है।

गंङ्गाधार जल का दूसरा लक्षण

चाँदी के पात्र में दही युक्त जड़हन धान का भात में थोड़े देर के लिये बरसा हुआ मेघ का जल विकार रहित होता है इसको भी गांङ्गधार जल कहते है। इसके विपरीत विकार युक्त होता है।

गाङ्गधार जल का गुण

गांङ्गधार जल स्वादिष्ट, शीतल, रुचिकारक, कफ तथा पित्त को नष्ट करने वाला निर्दोष, स्वच्छ तथा हल्का होता है। वही गाङ्गधार जल प्रतिदिन का आकाश से ग्रहण किया हुआ अधिक गुणवान् होता है।

चन्द्रकान्तमणि से श्रुत जल का गुण

चन्द्रकान्तमणि से श्रुत जल पित्तनाशक, स्वच्छ तथा हल्का होता है। यह मूर्च्छा, रक्तपित्त (या रक्त—पित्त विकार), दाह तथा कास (खाँसी) एवं मदात्यय में हितकर होता है।

सामुद्रधार जल का गुण

समुद्र धार जल शीतल, कफ तथा वातवर्द्धक एवं भारी होता है। आश्विन महीना में चित्रा नक्षत्र के सूर्य होने पर वही समुद्रधार जल गंगाधार जल के सदृश अधिक गुण वाला होता है।

भूमि विशेष में गिरे जल का गुण

पृथ्वी पर गिरा हुआ गंगाधार जल या समुद्रधार जल अपने—अपने आश्रय के अनुसार अन्य—अन्य रसादिक से युक्त हो जाता है। पार्थिव स्थल में गिरा हुआ उपरोक्त जल अम्लरस तथा लवण रस वाला होता है। जलीय स्थल में गिरा हुआ जल मधुर होता है। तैजस स्थल में गिरा हुआ

जल कटु तथा रिक्त रसवाला होता है। वायवीय स्थल में गिरा हुआ जल कषाय रस वाला होता है तथा आकाशीय स्थल में गिरा हुआ जल अव्यक्त रस वाला होता है। यहाँ पर नाभस (आकाशीय) स्थल में गिरा हुआ जल दोष रहित तथा उत्तम जल कहा गया है।

आश्विन मास में वृष्ट्यभाव का दोष

जहाँ पर आश्विन मास में मेघ नहीं बरसता है वहाँ पर गांङ्गजल के न होने पर उस समय अधिक रोग उत्पन्न होते हैं।

सभी अवस्था में जल देने के निर्देश

किसी समय उष्ण जल, किसी समय शीतजल, किसी समय गरमकर शीतल किया जल तथा कहीं–कहीं पर औषधि से युक्त जल देना चाहिए। कहीं पर भी जल देने का निषेध नहीं किया गया है। अर्थात् किसी न किसी रूप में प्राणी को जल देना आवश्यक है।

परम्पराओं में अन्तर्निहित वैज्ञानिक सोच

सुमन रैना
स्वतंत्र लेखक, चंडीगढ़

जन्म से लेकर जीवनपर्यंत हम आदतों, विचारों, रस्मो–रिवाजों, विश्वासों या नियमों के रूप मे जाने अनजाने बहुत सी परम्पराओं के अनुसार जीवन जीते हैं। बृहत् हिंदी कोश के अनुसार परंपरा का अर्थ अविच्छिन क्रम (लगातार जारी रहने वाला सिलसिला) से है। परम्पराएं हमारी जीवन शैली का हिस्सा होती है। यह बगैर किसी सरकारी या क़ानूनी सरंक्षण के लगातार जारी रहती हैं और भूतकाल की उपलब्धियों की जानकारी या ज्ञान आगे आने वाले पीढ़ियों में हस्तांतरित करती हैं। जन्म के साथ हमें दो तरह की विरासत मिलती है। एक तो वंशानुक्रम (जींस) के रूप में जैविक और दूसरी सामाजिक विरासत। सामाजिक विरासत के दो रूप हैं, भौतिक और अभौतिक। भौतिक में धन–सम्पदा और जमीन–जायदात इत्यादि आते हैं। हमारे विचार, जीवन शैली और विश्वास इत्यादि अभौतिक विरासत है, जो कि असल में परम्पराएँ है। सतही तौर पर परंपरा के निर्वहन में तर्क या वैज्ञानिकता हमें नज़र नहीं आती लेकिन पीढी दर पीढी इनका जारी रहना ही दिखता है कि इनकी कोई न कोई उपयोगिता रही होगी। इस लेख के दौरान ऐसी बहुत सी महिलाओं से विचार–विमर्श किया गया, जो वैज्ञानिक सोच से परिचित हैं कुछ वैज्ञानिक अनुसंधान में संलग्न हैं तो कुछ विज्ञान अध्यापन में कार्यरत हैं फिर भी परंपराएं उनकी जीवनशैली का हिस्सा हैं बातचीत के दौरान उन्होंने माना कि संभावना है कि किसी भी परंपरा या रिवाज के शुरू में वैज्ञानिक सोच रही होगी। वैज्ञानिक सोच से भाव जीवन जीने के ऐसे तरीके है जिसमें पूछताछ, चर्चा, तर्क, विश्लेषण, और परीक्षण शामिल हो। परंपराओं में परीक्षण और पुनः परीक्षण प्रयोगशाला में नहीं अपितु रोजना के इस्तेमाल या उपयोग में होता है। आइये जीवन से जुड़े कुछ उदाहरणों से जानने का प्रयास करें ।

कोरोना काल में हमने अपनी पारंपरिक जड़ी बुटियों के महत्व और उपयोग को बहुत अच्छे से जाना और अपनाया। कोरोना संक्रमण के दौरान हमने जाना कि हमारे घर आंगन में सुशोभित तुलसी केवल पूजनीय ही नहीं अपितु जीवन दायिनी भी है। तुलसी के पौधे का प्रत्येक भाग औषधीय गुणों से भरपूर है। विभिन प्रजातियों में पाई जानी वाली तुलसी, खांसी, जुकाम, न्यूमोनिया, मलेरिया, सभी प्रकार के ज्वर, सर्पविष नाशक, कुष्ठ रोग, वमन इत्यादि व्याधियों में राहत पहुंचाती है। जनसाधारण के लिए आसानी से उपलब्ध सस्ती और अधिकांश रोग निवारण तुलसी को इसके गुणों के कारण ही प्रत्यक्ष देवी मानना एक परंपरा है।

पीपल के पेड़ को सरंक्षण देने के लिए ही इसकी आराधना का प्रचलन शुरू हुआ होगा। इसकी छाया अत्यंत सधन होती है। सबसे अधिक पक्षी इस पेड़ पर ही अपने घोंसले बनाते हैं। आयुर्वेदिक औषिधियों में इसके प्रत्येक भाग का उपयोग होता है। आज वैज्ञानिक भी मानते हैं कि यह वृक्ष अन्य वृक्षों की तुलना में 40% अधिक प्राणदायनी ऑक्सीजन प्रदान करता है। यह तो हम सब जानते हैं कि पेड़ पौधे प्रकाश संश्लेषण (फोटोसिंथेसिस) क्रिया द्वारा कार्बन डाइऑक्साइड सोख कर ऑक्सीजन प्रदान करते हैं। लेकिन पीपल विशेष है क्योंकि इसके पत्तों के अंदर करसुलासेन एसिड मेटाबोलिज्म प्रकाश संश्लेषण क्षमता होती है, रात के समय कम प्रकाश में भी पीपल कार्बन डाइऑक्साइड को सोखता है और स्टार्च बना कर ऑक्सीजन प्रदान करता है, और दिन के समय इसी स्टार्च का प्रयोग प्रकाश संश्लेषण में होता है। इस तरह पीपल का पेड़ अन्य पेड़ों से अधिक ऑक्सीजन वातावरण में छोड़ता है।

नवरात्रि के समय जौ के ज्वारे उगाने कि परंपरा लगभग सारे देश में ही प्रचलित है। वैज्ञानिक जौ को (वाइल्ड व्हीट के रूप में) सृष्टि की सबसे पहली फसल मानते है। इस बात की सम्भावना है कि इस प्राचीनतम अनाज को सरंक्षित करने और इसके महत्व को बनाये रखने के लिए इससे पूजा की विधियों में स्थान दिया गया हो। नेशनल सेंटर फॉर बायोटेक्नोलॉजी के एक शोध में माना गया है कि जौ के दाने (बारले ग्रेन) और जौ के ज्वारे (बारले ग्रास) स्वास्थ्य वर्धक हैं और हमारी रोगों से लड़ने कि क्षमता बढ़ाते हैं। यूँ ही नहीं है कि आजकल कि युवा पीढ़ी भी बारले जूस और बारले पर्ल

को अपने खान पान में अपना रही है। हिमाचल प्रदेश के बहुत से क्षेत्रों में शिशु जन्म के बाद माँ को जौ के आटे का हलवा (बाढ़ि) खिलाने की प्रथा है। इस अनाज की पौष्टिकता के कारण ही सदियों से मानव इसका प्रयोग करता आया है।

हमारे दिन प्रतिदिन के खाने में प्रयोग होने वाली हल्दी भी अब अपने औषधीय गुणों के कारण अब विश्व प्रसिद्ध हो चली है। इसमें करक्यूमिन नाम का सुगन्धित यौगिक तेल और टरपेनोइड पदार्थो के कारण आजकल 'गोल्डन मिल्क' नाम का खाद्य पदार्थ फैशन में है। आज हम सब जानते हैं कि हल्दी–दूध स्वास्थ्य कारणों से पिया जाता है। इसके अतिरिक्त हल्दी से बने हुए बहुत से सौंदर्य प्रसाधन, टूथपेस्ट और मलहम बाजार में उपलब्ध हैं। हमने तो अपनी परम्पराओं के तौर पर सीखा था की हल्दी के उपयोग के बिना कोई सब्ज़ी और दाल नहीं बनती है। आज इस सच्चाई को विश्व ने अपनाया है और हल्दी कैप्सूल के रूप में भी बिकने लगी है। हल्दी का हमारे दैनिक और सांस्कृतिक जीवन में कितना महत्व है यह इस बात से पता चलता है की हमारे यहाँ तो शादी की पहली रस्म ही 'हल्दी–उबटन लगाना' मानी गयी है।

हमारे गांव के रास्ते में एक नदी पड़ती है। जब भी हम छुट्टी में घर जाते तो बच्चे नदी में फेंकने के लिए सिक्के मांगते। उनके लिए यह एक मनोरंजक खेल था। उन्होंने यह सब अपनी दादी माँ से सीखा था, जब भी वह गंगा स्नान या उत्सव के समय नदी–स्नान के लिए जाती तो पानी में सिक्का डालना न भूलती। जब मैंने उनसे पूछा कि वह ऐसा क्यों करती है तो उन्होंने बताया कि अपने बचपन में उन्होंने अपने बजुर्गों को नदी में तांबे के सिक्के फेंकते देखा है। दरअसल उस समय ताम्बे के सिक्के चलते थे, यह जानते ही समझ में आ गया कि वाटर–फ़िल्टर बेचने वाली कंपनियां विज्ञापन में कहती है कि उनके वाटर फिल्टर उपकरण में तांबा लगा हुआ है। तांबे पानी को शुद्ध करता है, इसके वैज्ञानिक प्रमाण भी हैं। आयुर्वेद मानता है कि ताम्रजल (ताम्बे के पात्र मे रखा पानी) तीनो दोषों वात–कफ और पित्त को संतुलित करता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन का मानना है कि रोज़ाना एक लीटर पानी में 2 मिलीग्राम तक ताम्बा मस्तिष्क को उत्तेजित करके भूलने की बीमारी से बचाता है और शरीर में सोजिश को रोकता है, इस लिए हमें अब यह याद रखना है कि यदि पानी में सिक्के डालने हों तो ताम्बे के ही डालें।

खाना खाने से पहले हाथ धोना, बाहर से आने के पश्चात हाथ, पैर और मुँह धोना इत्यादि ऐसी प्रथाएं है जिन्हें हम पुराना या आउटडेटिड कह कर भुला चुके थे। कोरोना के पश्चात हमने इनके महत्त्व को फिर से पहचाना है। इसी तरह हमारे यहाँ प्रचलित अभिवादन की क्रिया नमस्ते भी संक्रमण का खतरा कम करती है। एक्युप्रेशर प्रक्रिया के प्रभाव को मानने वाले बताते है कि जब हम दोनों हाथ जोड़ कर नमस्ते करते है तो हमारी उँगलियों के पोरों पर दबाव पड़ता है, जिनकी नसें हमारे आँख कान और दिमाग से जुडी होती है। इस क्रिया से हमारे दिमाग का वह भाग सक्रिय हो जाता है जिससे कि हम सामने वाले व्यक्ति को अधिक लम्बे समय तक याद रख सकते है।

अधिकांश आभूषणों के बारे में भी यही कहा जाता है कि इनका सम्बन्ध दबाव/एक्युप्रेशर से जुड़ा है। विभिन आभूषण विभिन नसों को दबाव द्वारा उत्तेजित करते है जिससे उन भागों मे रक्त संचार सुचारु रूप से जारी रहता है। रिंग फिंगर (अनामिका) मे पहनी जाने वाली अंगूठी का सम्बन्ध हृदय से, कान मे पहनने वाली बाली का स्मरण शक्ति और कान कि बीमारियों की रोकथाम से, और पैर मे पहनने वाली बिछिया का सम्बन्ध गर्भाशय से बताया जाता है। इन सब बातों की प्रमाणिकता को वैज्ञानिक आधार देने के लिए गहन अनुसंधान की आवश्यकता है।

इसी तरह से गर्भावस्था और शिशु जन्म से जुडी भी बहुत सी परम्पराएं है। शिशु जन्म के पश्चात् प्रसूता के लिए 40 दिन के सूतक (पृथकवास) कि परंपरा पूरे देश मे प्रचलित है। नयी माँ (नवप्रसूता) को घर के काम काज, रसोई मे जाने और घर से बाहर निकलने की मनाही होती है। इस समय मे जच्चा और बच्चा कि मालिश और स्नान की विशेष विधि का चलन है जो कि उनके स्वास्थ्य कि दृष्टि से उचित है। इस तरह नयी माँ को भी बच्चे को सम्भलने और शिशु जन्म के बाद कि बदली हुई दिनचर्या के अनुसार ढलने का पर्याप्त समय मिल जाता है। एक चिकित्सक से जब इस प्रथा के बारे मे पूछा गया तो उसने बताया कि हमारे गर्भाशय को पुनः अपनी पुरानी अवस्था में स्थित होने और ताकत प्राप्त करने, में 4 से 6 सप्ताह का समय लग जाता

है। यह संभव है कि हमारे पूर्वजों का अनुभव रहा हो की बच्चों के जन्म के पश्चात यदि स्त्री रोज़मर्रा के काम में लग जाती है तो उसे स्वास्थ्य सम्बन्ध परेशानी झेलनी पड़ सकती है इसीलिए 'सूतक' की प्रथा बना दी गयी हो।

जन्म के पश्चात बच्चे को 3 से 5 दिन के भीतर सूर्यदर्शन या सूर्यनमन की भी प्रथा है। डॉक्टर भी मानते है कि जन्म के तुरंत बाद अक्सर नवजात शिशुओं में पीलिया या जॉन्डिस के लक्षण नज़र आते हैं जो कि सूर्य किरणों के पड़ने से ठीक हो जाती है।

तीज त्योहारों और उत्सवों का भी हमारे जीवन में अत्यंत महत्व है ।आपस में परिवारों का मिलना, दोस्तों, पड़ोसियों का मिलना हमें उत्साह और हौसले से भर देता है अवसाद को भगाता है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है, हंसी, ख़ुशी, मेल मिलाप हमारे जीवन के तनाव को दूर करते हैं। एक दूसरे के अनुभवों द्वारा हम अपनी समस्याओं का हल ढूंढ सकते हैं, एक दूसरे की मदद कर सकते हैं और जीवन में सकारात्मक रह सकते हैं। फसलों के पकने,पकी फसल के घर आने और नये अनाज के पहली बार प्रयोग करने से जुडी भी अनेकों परंपराएं हम दैनिक जीवन में निभाते हैं। उनके पीछे की वैज्ञानिक सोच है कि जब फसल तैयार होती है उसी ऋतु के अनुरूप व्यंजनों को खाया जाता है, यह मानव ने अनंत काल से अपने प्रयोग और उपयोग से सीखा है। कड़ी मेहनत का फल सबके साथ मिलकर बांट कर खाया जाया तो वह ख़ुशी देता है और सकारात्मकता पैदा करता है।

इसी तरह हमारे यहाँ योग की परंपरा थी जो हमें शारीरिक और मानसिक स्तर पर स्वास्थ और सुढृढ़ बनाने में सहायक है। आज 'योगा' के रूप में पूरे विश्व ने इसमे अन्तर्निहित वैज्ञानिकता को समझा और अपनाया है। प्राचीन कलाएं, गीत संगीत, चिकित्सा पद्धतियां, पाक विधियां, मूल्य और प्रथाएं परम्पराओं की ही देन है।

परम्पराएं एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक निरंतर चलती रहती है और आने वाली पीढियां इन्हें अवचेतन रूप मे अक्सर बिना सोच विचार के अपनाती चली जाती है। इनमे बदलाव की गति धीमी होती है। समय और आवश्यकता के अनुसार समझ व्यक्ति या समूह नयी परम्पराएं भी अपनाते रहते है और पुरानी परम्पराओं के मूल मे धीरे–धीरे बदलाव भी होता रहता है। परम्परा के पालन से सामाजिक जीवन सरल, नियमित और अनुशासित बनता है। जीवन मे एकरूपता आती है, सामाजिक व्यवहार नियंत्रित होता है, सुरक्षा का भाव महसूस होता है। परम्पराओं मे संचित अनुभव हमारा कठिन परिस्थितियों में हमारा मार्ग दर्शन करता है। मौसम के बदलावों को हवा का रूख देखकर पहचानना, बादलों की संरचना से बारिश का अनुमान लगाना,पशु पक्षियों की आवाजों मे छिपे संकेतों के समझना और संभावित खतरों से सचेत हो जाना मानव ने जीवन की प्रयोगशाला में ही सीखा है।

आधुनिकता, वैज्ञानिक सोच, और परम्परा एक दूसरे के विरोधी नहीं है। प्राचीन से ही नवीन जन्म लेता है। यह हम पर निर्भर करता है कि हम परम्पराओं में निहित ज्ञान का उपयोग बिना सोचे समझे अंध विश्वास के रूप में करते है या विवेक के सहारे उसमें छुपी वैज्ञानिकता को समझ कर परंपरा को अपनाते हैं।

पर्यावरण के प्रति हमारे कर्तव्य एवं हमारे वर्तमान प्रयास

योगेश्वर वत्स
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, खड़गपुर

हाल ही में हमने 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस मनाया। यह पर्यावरण के प्रति जागरूकता और कार्रवाई को बढ़ावा देने के लिए संयुक्त राष्ट्र का एक प्रमुख दिन है और इस वर्ष इसे सऊदी अरब के द्वारा संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के साथ साझेदारी में 'भूमि पुनर्स्थापन, मरुस्थलीकरण और सूखा लचीलापन' की थीम और 'हमारी भूमि, हमारा भविष्य' के नारे के साथ आयोजित किया गया। इस दिन को वैश्विक प्रतिबद्धताओं पर तेजी से प्रगति का समर्थन करने के लिए मनाया जाता है, जिसमें प्रकृति के लिए 30 प्रतिशत भूमि और समुद्र की रक्षा करना और ग्रह के 30 प्रतिशत क्षतिग्रस्त पारिस्थितिक तंत्र को पुनर्स्थापित करना शामिल है। इस वर्ष, इस दिन पर 3657 से अधिक घटनाओं का रिकॉर्ड टूट गया – जो लॉन्च के समय हो रहे थे – जिनमें सरकारों, शहरों, नागरिक समाज, विश्वविद्यालयों और स्कूलों, और व्यवसायों द्वारा पूरी दुनिया में आयोजित की गईं।

लेकिन क्यों? क्योंकि जलवायु परिवर्तन का परिदृश्य दिन–ब–दिन बिगड़ता जा रहा है। 1938 में जब एक वैज्ञानिक गाइ कैलेंडर ने पाया कि वैश्विक तापमान 50 वर्षों में 0.3°C बढ़ गया था, और इस वृद्धि को औद्योगिक CO_2 उत्सर्जन से जोड़ा। हालांकि, उनकी खोजों को शुरू में अनदेखा कर दिया गया था। लेकिन 1958 में, डॉ. चार्ल्स कीलिंग ने जीवाश्म ईंधन उपयोग के कारण बढ़ते CO_2 स्तरों का ठोस प्रमाण प्रदान किया। कीलिंग के कार्य, जिसमें निरंतर कीलिंग कर्व शामिल है, ने कैलेंडर के दावों को मान्यता दी और जलवायु परिवर्तन की वैज्ञानिक समझ को काफी हद तक बढ़ाया।

तब से हर साल कुछ न कुछ बढ़ते हुए आपदा रिपोर्ट सामने आती हैं। चाहे वह 2023 की गर्मियों में एशिया में रिकॉर्ड तोड़ गर्मी हो, लीबिया की विनाशकारी बाढ़ हो या यह चक्रवात फ्रेडी हो जिसने दक्षिण–पूर्वी अफ्रीकी देशों मेडागास्कर, मलावी, मोज़ाम्बिक और ज़िम्बाब्वे में एक महीने तक जमे रहकर 1000 से अधिक लोगों की जान ली और 500,000 से अधिक निवासियों को विस्थापित कर दिया। बाद में, इस तूफान ने मलावी के सबसे खराब हैजा प्रकोप में भी योगदान दिया।

हम इन सभी परिदृश्यों पर पूरे साल क्या करते हैं, हम हर साल विश्व पर्यावरण दिवस पर कुछ फोटो और वॉलपेपर साझा करते हैं और फिर अपने बिस्तर पर चले जाते हैं यह कहते हुए की 'वे ही तो प्रभावित हैं, यहाँ सब ठीक है, हम तो अपने घरों में सुरक्षित हैं'। सरकार को कार्रवाई करनी चाहिए, नीतियाँ बनानी चाहिए और यहाँ हम सब कुछ सरकार पर छोड़ देते हैं और भूल जाते हैं कि हम स्वयं भी इसके योगदानकर्ता हैं।

यह कितनी बड़ी विडंबना है? हमें अपने स्वयं की सुरक्षा के लिए जागरूक और सचेत किया जा रहा है। और इसके लिए कौन जिम्मेदार है? निश्चित रूप से हम। हम अंधाधुंध शहरीकरण, औद्योगिकीकरण, तकनीक और विकास के नाम पर प्रकृति और प्राकृतिक संसाधनों का अतिक्रमण कर रहे हैं। उद्योग, वाहन, एयर कंडीशनर, जो कुछ भी बचता है वह हमारे द्वारा ही संचालित होता है। हमारी आवश्यकता लालच में बदल रही है। ईर्ष्या, जलन और निराशा हमारे नियमित हिस्से बनते जा रहे हैं जो न केवल भौतिक स्तर पर बल्कि सूक्ष्म स्तर पर भी चक्रीय तरीके से पर्यावरण को खराब कर रहे हैं (चित्र)।

चित्रः क्रिया का चक्र

लेकिन हम इस तथ्य को स्वीकार नहीं कर रहे हैं, और अनदेखी करते जा रहे हैं और अंत में इस मुद्दे को सरकार के कंधों पर छोड़ देते हैं। फिर हम सरकार की आलोचना करते हैं कि वह बेहतर पर्यावरण नहीं प्रदान कर रही है जबकि हम इन स्थितियों के ध्वजवाहक हैं। निश्चित रूप से इसमें हमारी भी जिम्मेदारी है और हम भी इस मुद्दे पर हिस्सेदार हैं। इस मामले में हमारी खुद की जिम्मेदारी किसी और से ज्यादा है। हमें पर्यावरण को बचाने के लिए शब्दों से अधिक की जरूरत है।

समाधान

मेरे अनुसार, दो समाधान हैं जो हम व्यक्तिगत स्तर पर कर सकते हैं और ये पहले से ही खराब हो चुके पर्यावरण को पुनर्स्थापित और बनाए रखने के लिए पर्याप्त हैं– पहला, पर्यावरण संरक्षण से संबंधित दैनिक गतिविधियों के लिए अधिक जिम्मेदार और जागरूक बनें क्योंकि व्यक्तिगत स्तर पर यह सब आपसे ही शुरू होता है। ये हो सकते हैं:

- उपयोग न होने पर लाइट्स बंद करके और उपकरणों को अनप्लग करके ऊर्जा की खपत कम करें।
- अकेले ड्राइविंग करने के बजाय सार्वजनिक परिवहन, कारपूलिंग, साइकिल चलाना या पैदल चलना।
- कचरे को रिसायकल और कम्पोस्ट करें तथा लीक को ठीक करके और पानी बचाने वाले फिक्स्चर का उपयोग करके पानी की बचत करें।
- पुनः उपयोग योग्य बैग, बोतलें और कंटेनर चुनकर प्लास्टिक का उपयोग कम करें

दूसरा, हर जन्मदिन पर एक पेड़ लगाएं। न केवल इसे लगाएं, बल्कि तब तक इसकी देखभाल करें जब तक आपकी जिंदगी समाप्त न हो जाए और इसे अपना दोस्त, साथी या भाई आदि मानें ताकि आपके और आपके पौधे के बीच एक बंधन स्थापित हो सके। अगले विश्व पर्यावरण दिवस पर अपने पौधे के साथ एक फोटो पोस्ट करें और इसे अपने दोस्तों के साथ साझा करें और इस चीज़ को अंतिम समय तक जारी रखें। इससे न केवल इस दिन का महत्व बढ़ेगा बल्कि आपकी जिंदगी भी अधिक सार्थक हो जाएगी।

पेड़ क्यों?

क्योंकि पेड़ वे सरल जीवित संरचनाएं हैं जो अपने आप में चमत्कारी हैं। वे उपचारक हैं और वे शुरुआत से ही जीवन का समर्थन और पोषण कर रहे हैं। उन्होंने इस ग्रह के विकास और स्थिरीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। लेकिन हमारा ध्यान उनके पारिस्थितिक पहलुओं पर है, जो हैं:

- पेड़ ऑक्सीजन प्रदान करके, हवा को सुधारकर अपने पर्यावरण में योगदान करते हैं और जलवायु की गुणवत्ता में भी सहायता सुधार करते हैं।
- CO_2 को अवशोषित करते हैं और वायुमंडल में इसकी संरचना को बनाए रखते हैं। (प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया के दौरान, पेड़ कार्बन डाइऑक्साइड लेते हैं और हमें जो ऑक्सीजन मिलती है उसका उत्पादन करते हैं। अमेरिकी कृषि विभाग के अनुसार, 'एक एकड़ जंगल छह टन कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करता है और चार टन ऑक्सीजन का उत्पादन करता है। यह 18 लोगों की वार्षिक जरूरतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त है।')
- इसके अलावा, वायुमंडलीय तापमान को कम करते हैं और ग्रीनहाउस प्रभाव की गर्मी की तीव्रता को बनाए रखते हुए कार्बन डाइऑक्साइड के निम्न स्तर को बनाए रखते हैं।
- पेड़, झाड़ियाँ और घास अस्वास्थ्यकर कणों को रोकते हैं और कार्बन मोनोऑक्साइड, सल्फर डाइऑक्साइड और नाइट्रोजन डाइऑक्साइड जैसे अन्य प्रदूषकों को हटाकर हवा को भी फ़िल्टर करते हैं, इस प्रकार प्राकृतिक स्क्रबर के रूप में कार्य करते हैं। वे जलवायु को सूरज, बारिश और हवा के प्रभावों को कम करके नियंत्रित करते हैं। पत्तियां सूर्य की विकिरण ऊर्जा को अवशोषित और फ़िल्टर करती हैं, गर्मियों में चीजों को ठंडा रखती हैं।

पेड़ उन पारिस्थितिक तंत्रों के लिए आवश्यक हैं जिनमें वे रहते हैं। दूर तक फैली जड़ें मिट्टी को अपनी जगह पर रखती हैं और कटाव से लड़ती हैं। पेड़ वर्षा जल को अवशोषित और संग्रहित करते हैं जो तूफानों के बाद अपवाह

और तलछट जमाव को कम करता है। इससे भूजल आपूर्ति को फिर से भरने में मदद मिलती है, रसायनों के नदियों में जाने से रोका जाता है और बाढ़ को रोका जाता है। गिरी हुई पत्तियां उत्कृष्ट खाद बनाती हैं जो मिट्टी को समृद्ध करती हैं। बेशक, सैकड़ों जीवित जीव पेड़ों को अपना घर मानते हैं। पत्तेदार शाखाएं कई जानवरों, जैसे पक्षियों और गिलहरियों को शिकारियों की पहुंच से दूर रखती हैं। इन विशाल गुणों के कारण हमारे प्राचीन ग्रंथ भी उनके महत्व का वर्णन करते हैं। जैसे–

दशकूपसमा वापी दशवापीसमो ह्रदः।
दशह्रदसमः पुत्रो दशपुत्रसमो द्रुमः॥ (मत्स्य पुराण 512)

अर्थात्: एक जलकुंड दस कुएँ के समान है, एक तालाब दस जलकुंड के समान है, एक पुत्र का दस तालाब जितना महत्व है और एक वृक्ष का दस पुत्रों जितना महत्व है।

निष्कर्ष

हमें संकट से समाधान की ओर बढ़ने के लिए व्यक्तिगत स्तर पर कदम उठाने चाहिए, और ऐसा करते हुए हमें यह पहचानना चाहिए कि हमारे ग्रह और मानव जाति के अस्तित्व के लिए प्रकृति की बहाली अत्यंत आवश्यक है और इसमें पौधों और स्वयं हमारी निश्चित रूप से महत्वपूर्ण भूमिका होगी। मार्शल मैक्लुहान के अनुसार, 'स्पेसशिप पृथ्वी पर कोई यात्री नहीं हैं। हम सभी चालक दल हैं।' वे पृथ्वी को एक अंतरिक्ष यान के रूप में इंगित करते हैं जो सूर्य के चारों ओर घूमता है, और यह एक लक्जरी क्रूज जहाज नहीं है जहाँ यात्री आराम करते हैं जबकि चालक दल कड़ी मेहनत करता है; बल्कि, हम सभी चालक दल हैं क्योंकि हमें यह सुनिश्चित करने के लिए काम करना होगा कि यह जहाज जीवित रहे। हमें अपने खूबसूरत ग्रह को बचाने के लिए हाथ मिलाना चाहिए, क्योंकि ब्रह्मांड में कहीं और ऐसा कोई स्थान नहीं है जो इतना सुंदर, इतना जीवंत और इतना जीवित हो। आइए हम अधिक जिम्मेदार बनें, और अंत में, यदि आपको लगता है कि पर्यावरण अर्थव्यवस्था से कम महत्वपूर्ण है, तो पैसे गिनते समय अपनी सांस रोकने का प्रयास करें।

उत्तराखंड में बढ़ता नमी प्रवाहः अतिवृष्टि की तीव्रता एवं आवृत्ति बढ़ने के संकेत

अमरजीत विद्यार्थी
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, खड़गपुर

ग्लोबल वार्मिंग के परिदृश्य में अभी हाल ही में हमारे यहां एक अति आधुनिक डाटा का प्रयोग करते हुए यह पाया गया कि उत्तराखंड राज्य में विगत 20 वर्षों में अतिवृष्टि अर्थात् बादल फटने की घटनाओं की वृद्धि हुई है और यह अत्यंत विनाशकारी भी सिद्ध हुई है। इसमें बादल फटने में इसकी तीव्रता और आवृत्ति में भी परिवर्तन पाया गया है। इस अध्ययन में उत्तराखंड में बढ़ता नमी का प्रवाह (मॉइस्चर फ्लक्स) इस बात की तरफ संकेत कर रहा है कि भविष्य में जैसे–जैसे ग्लोबल वार्मिंग के कारण वातावरण गर्म होता जाएगा और इससे वातावरण की नमी धारण करने की क्षमता बढ़ती जाएगी, वैसे–वैसे अधिक नमी की उपस्थिति के कारण और नमी के अभिसरण (कन्वर्जेंस) के कारण उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्रों में अतिवृष्टि और बादल फटने की संभावनाएं बढ़ती जाएगी, हालांकि यह वृष्टि उत्तराखंड के उच्च पर्वत श्रृंखलाओं के एक तरफ होने की संभावनाएं अधिक है, जिसको हम विंडवार्ड साइड (वायु जिस ओर बहती है और पर्वतीय ऊंचाई के अनुकूल चलकर वर्षा करती है)। रुद्रप्रयाग, टिहरी गढ़वाल, उत्तरकाशी, चमोली, बागेश्वर और पिथौरागढ़ इन घटनाओं से भविष्य में अति प्रभावित हो सकते है (चित्र)।

इन सब में भी रुद्रप्रयाग और चमोली जनपद इन घटनाओं के प्रति अधिक ग्रहणशील दिखते है। बीते दशकों में लगातार नमी का अधिक प्रवाह बंगाल की खाड़ी और अरब सागर से उत्तराखंड में बढ़ता दिखा है। पर्वतीय क्षेत्रों में ओरोग्राफिक लिफ्टिंग (पर्वतीय ऊंचाइयों से टकराकर हवा का ऊपर उठना) के कारण वर्षा होती है क्योंकि जो नमी प्रवाह को पर्वत क्षेत्र की ओर लाती है, उस घूर्ण घटक (रोटेशनल कंपोनेंट) का योगदान हाल ही के 20 वर्षों में बढ़ता पाया गया है जोकि उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्र के ऊपर अधिक नमी को बहा कर लाता है। इसमें एक बात ओर ध्यान देने योग्य है कि केवल नमी के कारण ही वर्षा

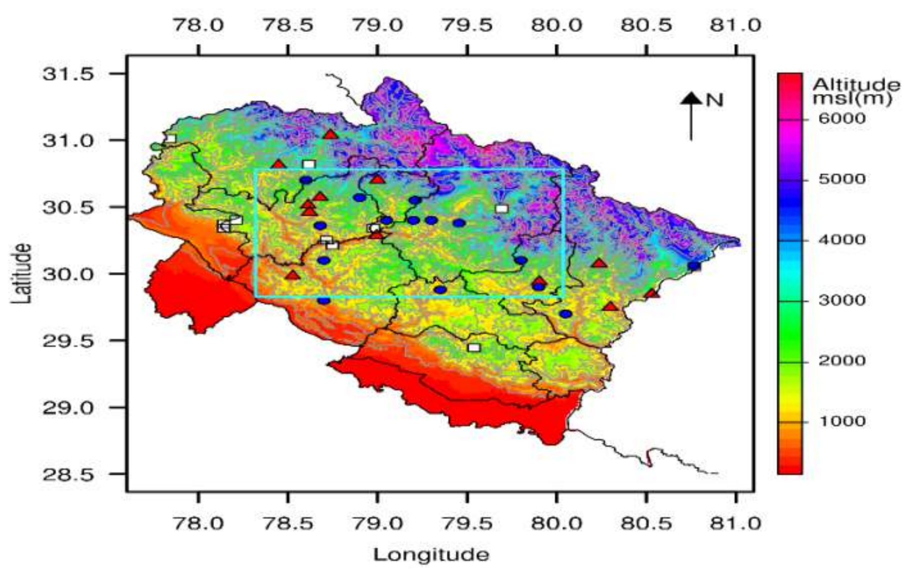

चित्रः विगत दशकों में अतिवृष्टि प्रभावित स्थानों को दर्शाता एक आरेख। (लेखकों के शोध पत्र से लिया गया है।)

सुनिश्चित नहीं होती है, इसके लिए नमीयुक्त हवा का ऊपर उठकर संघनन (कंडेंसेशन) आवश्यक है। जब वह हवा एक निश्चित कंडेंसेशन लेवल तक पहुंचती है तो वह वर्षा के रूप में प्राप्त होती है। मुख्य तौर पर सामान्य मैदानी इलाकों में संवहन की प्रक्रिया के द्वारा वर्षा होती है, लेकिन पर्वतीय क्षेत्रों में यह वर्षा संवहन के साथ–साथ ओरोग्राफिक लिफ्टिंग के द्वारा संपन्न होती है। इस अधिक नमी की उपलब्धता के साथ ही हमें वहां पर नमी के अधिक अभिसरण (कन्वर्जेंस) के सिग्नेचर मिले हैं। किसी भी क्षेत्र में यदि अधिक नमी (मॉइश्चर) कन्वर्जेंस हो रहा है तो वह उसे क्षेत्र में अधिक वर्षा के होने का संकेत होता है अर्थात् मॉइश्चर कन्वर्जेंस का अर्थ ही मॉइश्चर का एक साथ इकट्ठा होकर, क्षोभमंडल में उंचाई पर जाकर, संघनन से किसी भी स्थान पर अधिक तीव्र वर्षा करने में योगदान दे सकती है। इसी प्रकार हमारे अध्ययन में वहां पर उच्च पर्वतीय श्रृंखलाओं के दक्षिण भाग (विंडवर्ड साइड) में अधिक नमी की कन्वर्जेंस मिली है, जोकि राज्य के उन्हीं जनपदों पर स्थित है जहां पर अधिक अतिवृष्टि की घटनाएं देखने में आती है।

विगत 20 वर्षों में दो चीज मुख्य तौर पर मिली है, एक तो यह कि उत्तराखंड के क्षेत्र में नमी का प्रवाह बढ़ा है और दूसरा, नमी का अभिसरण भी बड़ा है। यह दोनों चीज इस तरफ इंगित करती है कि भविष्य में उत्तराखंड राज्य में अधिक वर्षा या अधिक वर्षा की घटनाएं और यहां तक की अधिक बादल फटने की घटनाएं भी स्थान ले सकती है जोकि उत्तराखंड के जान–माल, प्राकृतिक और सरकारी संसाधनों को भी बहुत हद तक नुकसान पहुंचा सकती है। यह शोधकार्य सरकार या शासन को जलवायु परिवर्तन के इस परिदृश्य में उत्तराखंड के लिए नीति निर्धारण करने करने के लिए उचित कदम उठाने में सहयोग कर सकता है।

सेमीकंडक्टर और भारत में इसकी वर्तमान स्थिति

प्रवीण कुमार
रसायन शास्त्र विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

परिचय

पदार्थ (मैटेरियल) को तीन प्रकार से विभाजित किया जा सकता है: चालक (कंडक्टर) जो इलेक्ट्रॉनों को उनके माध्यम से प्रवाहित करते हैं, कुचालक (इनसुलेटर) जो इलेक्ट्रॉनों के प्रवाह को सुनिश्चित करते हैं, और अर्द्धचालक (सेमीकंडक्टर) जो केवल कुछ परिस्थितियों के तहत इलेक्ट्रॉनों को प्रवाहित करते हैं। उनके बीच के अंतर को उनके बैंड अंतराल में अंतर से सबसे अच्छी तरह से प्रस्तुत किया जा सकता है। बैंड गैप किसी मैटेरियल में एक ऊर्जा सीमा होती है जहां कोई इलेक्ट्रॉन मौजूद नहीं हो सकता। कंडक्टर्स में कोई बैंड गैप नहीं होता है, इसलिए इलेक्ट्रॉन विद्युत प्रवाह उत्पन्न करने के लिए उनके माध्यम से स्वतंत्र रूप से घूम सकते हैं। लोहा, तांबा, चांदी, सोना और एल्युमिनियम आदि धातुओं के प्रतिनिधि हैं। तेल, कांच, रबर और सिरेमिक जैसे इंसुलेटर में एक बड़ा बैंड गैप होता है जो इलेक्ट्रॉनों के प्रवाह को स्थायी बनाता है। इसके विपरीत, सेमीकंडक्टर में एक छोटा बैंड गैप होता है, और मैटेरियल में सम्मिलित इलेक्ट्रॉनों और इलेक्ट्रॉन स्पिन के प्रवाह को नियंत्रित किया जा सकता है।

शुद्ध सिलिकॉन और जर्मेनियम क्रिस्टल में इन्सुलेटर जैसे गुण होते हैं, और वोल्टेज लागू होने पर भी उनमें बिजली मुश्किल से प्रवाहित होती है। ऐसा इसलिए है क्योंकि उनकी क्रिस्टल लैटिस इलेक्ट्रॉनों को कसकर अपनी जगह पर रखती है और उन्हें मुश्किल से इधर–उधर जाने देती है। हालाँकि, जब फॉस्फोरस जैसी बहुत कम मात्रा में अशुद्धता डाली जाती है, तो यह कुछ इलेक्ट्रॉनों को मुक्त कर देता है और क्रिस्टल को कंडक्टर जैसे गुण देता है। जिन सेमीकंडक्टर में अशुद्धियाँ होती हैं जो अतिरिक्त इलेक्ट्रॉनों का उत्पादन करती हैं, उन्हें एन–टाइप सेमीकंडक्टर कहा जाता है ('एन' का अर्थ निगेटिव है), और वे सेमीकंडक्टर जिनमें बोरान जैसी अशुद्धियाँ होती हैं जो इलेक्ट्रॉनों की कमी पैदा करती हैं, उन्हें पी–टाइप सेमीकंडक्टर कहा जाता है ('पी' का अर्थ पॉजिटिव है)। पी–टाइप के सेमीकंडक्टर में, इलेक्ट्रॉनों के बजाय हॉल्स चार्ज कैरियर्स के रूप में कार्य करते हैं, ऐसा व्यवहार करते हैं जैसे कि पॉजिटिव रूप से चार्ज किए गए इलेक्ट्रॉन प्रवाहित हो रहे हों। जैसे–जैसे यौगिक सेमीकंडक्टर और कार्बनिक सेमीकंडक्टर पर अध्ययन आगे बढ़ा, सेमीकंडक्टर की परिभाषा में भी बदलाव आया और इसमें केवल तत्वों के एक विशिष्ट समूह के बजाय सभी प्रकार के सेमीकंडक्टिंग मैटेरियलस को शामिल किया गया। सेमीकंडक्टर की श्रेणी में हालिया परिवर्धन में डॉ. सुमियो इजिमा द्वारा खोजे गए कार्बन नैनोट्यूब और डॉ. हिदेकी शिराकावा और रसायन विज्ञान में नोबेल पुरस्कार जीतने वाले अन्य लोगों द्वारा खोजे गए कंडक्टिंग पॉलिमर शामिल हैं। इन सेमीकंडक्टिंग मैटेरियलस के अनुप्रयोगों का अध्ययन दुनिया भर के शोधकर्ताओं द्वारा किया जा रहा है।

सेमीकंडक्टर का उपयोग कैसे किया जाता है इसका एक उदाहरण: ट्रांजिस्टर सेमीकंडक्टर को आज मोटे तौर पर विद्युत चालकता वाले एक मैटेरियल के रूप में परिभाषित किया जाता है जिसे किसी न किसी माध्यम से स्वतंत्र रूप से नियंत्रित किया जा सकता है। ट्रांजिस्टर एक ऐसा ही सेमीकंडक्टर उपकरण है, जिसका उपयोग विद्युत संकेतों को बढ़ाने या स्विच करने के लिए किया जाता है जो रेक्टिफायर प्रभाव के कारण होता है। ट्रांजिस्टर नाम ट्रांसफर और रेसिस्टर शब्दों से मिलकर बना है। ट्रांजिस्टर इसलिए विकसित किए गए, क्योंकि एक बार सेमीकंडक्टर के साथ रेक्टिफायर प्रभाव प्राप्त हो जाने के बाद, लोगों को टेलीग्राफ और टेलीफोन के लिए विद्युत संकेतों को बढ़ाने के लिए एक सेमीकंडक्टर उपकरण की आवश्यकता होती थी। दुनिया का पहला एमओएस ट्रांजिस्टर 1960 में बेल लैब्स में डावोन काहंग और एम. एम. अटाला द्वारा बनाया गया था। एमओएस ट्रांजिस्टर आज सबसे अधिक उपयोग किए जाने वाले ट्रांजिस्टर हैं। उनके पास एन–टाइप सब्सट्रेट के दो

क्षेत्र हैं जो पी–टाइप सब्सट्रेट की दीवार से अलग होते हैं (चित्र–1)। जब एक पॉजिटिव गेट वोल्टेज लागू किया जाता है, तो पी–टाइप सब्सट्रेट का शीर्ष प्रेरण द्वारा प्रवाहकीय हो जाता है, जिससे अवरोध कम हो जाता है और इलेक्ट्रॉनों को दो एन–टाइप टर्मिनलों के बीच प्रवाहित होने की अनुमति मिलती है। वास्तव में, गेट वोल्टेज में मामूली परिवर्तन आउटपुट करंट में परिवर्तन को बढ़ाता है।

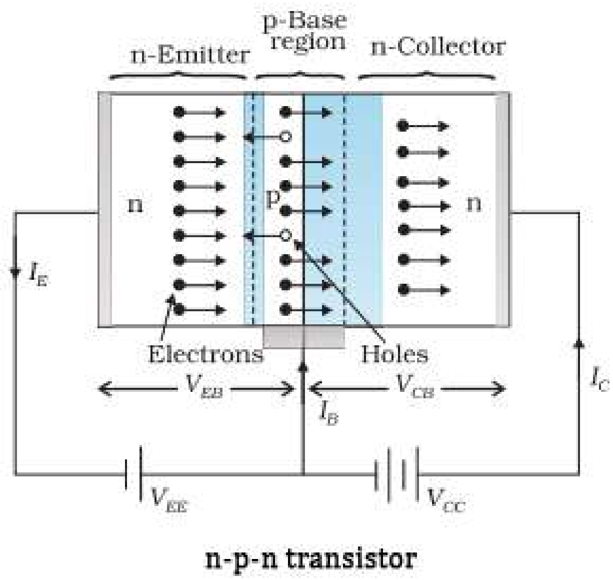

चित्र 1: एन–पी–एन ट्रांजिस्टर का कार्य सिद्धांत

सेमीकंडक्टर क्षेत्र में भारत की वर्तमान स्थिति– सेमीकंडक्ट डिजाइन और अनुसंधान में भारत की क्षमताओं को तेजी से पहचाना जा रहा है। देश में सेमीकंडक्टर नवाचार के लिए समर्पित स्टार्टअप और अनुसंधान एवं विकास केंद्रों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि देखी गई है। भारत की इलेक्ट्रॉनिक्स पर राष्ट्रीय नीति 2019 में सेमीकंडक्टर क्षेत्र में घरेलू विनिर्माण को बढ़ावा देने और आयात पर निर्भरता कम करने के लिए एक व्यापक रूपरेखा तैयार की गई है। सेमीकॉन इंडिया कार्यक्रम के हिस्से के रूप में शुरू किया गया भारत सेमीकंडक्टर मिशन, एक जीवंत सेमीकंडक्टर और डिस्प्ले इकोसिस्टम बनाने की रणनीतिक पहल है। 2021 में आवंटित 76,000 करोड़ रुपये के वित्तीय परिव्यय के साथ, मिशन का उद्देश्य भारत को इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण और डिजाइन के लिए एक वैश्विक केंद्र के रूप में स्थापित करना है। मिशन में बुनियादी ढांचे के विकास, कौशल वृद्धि और सेमीकंडक्टर क्षेत्र में नवाचार को बढ़ावा देने सहित विभिन्न पहलू शामिल हैं। सेमीकंडक्टर चिप निर्माण क्षमताएं वर्तमान में दुनिया में बहुत कम क्षेत्रों तक सीमित हैं। महामारी और हाल के भू–राजनीतिक तनावों के दौरान आपूर्ति श्रृंखला के व्यवधानों के साथ, भारत सहित कई कंपनियों और देशों ने चिप निर्माण बुनियादी ढांचे में निवेश के महत्व को महसूस किया है।

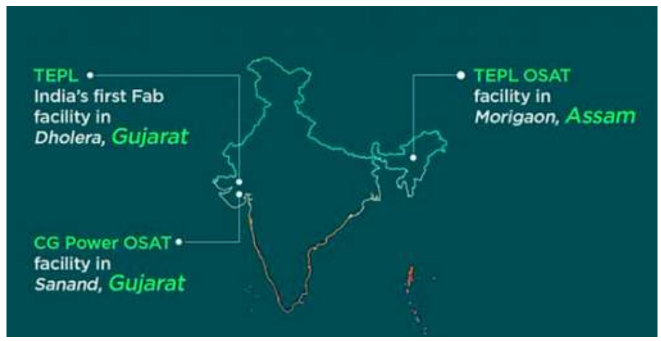

चित्र 2: भारत में प्रस्तावित सेमीकंडक्टर विनिर्माण संयंत्र। (स्रोतः भारत सरकार)

टाटा समूह ने गुजरात में 300mm वेफर फैब्रिकेशन प्लांट स्थापित करने के लिए ताइवान के पावरचिप सेमीकंडक्टर मैन्युफैक्चरिंग कॉरपोरेशन (PSMC) के साथ भागीदारी की है। यह 2026 में अपनी पहली 28nm चिप को रोल करेगा। गुजरात और असम में दो संयोजन और परीक्षण संयंत्रों को भी हाल ही में भारत सरकार द्वारा अनुमोदित किया गया है (चित्र–2)। रणनीतिक सरकारी पहलों, बढ़े हुए बजट आवंटन और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के साथ, भारत वैश्विक सेमीकंडक्टर उद्योग में एक प्रमुख खिलाड़ी बनने के लिए अच्छी स्थिति में है। नई सेमीकंडक्टर विनिर्माण सुविधाओं की स्थापना देश की आत्मनिर्भरता और तकनीकी उन्नति के प्रति प्रतिबद्धता को और अधिक रेखांकित करती है।

।। न ज्ञानेन बिना मोक्षः ।।

विज्ञान शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थी में नवाचार शिक्षा

सरोज शुक्ला
केए 94/628, कुरमनचल नगर,
इंदिरानगर के पास, लखनऊ

नव़ आचार का अर्थ किसी उत्पाद, प्रक्रिया में बडा परिवर्तन लाने से है। नवाचार शिक्षा के अन्तर्गत कुछ नया और उपयोगी तरीका अपनाया जाता है। व्यक्ति एवं समाज में हो रहे परिवर्तनों का प्रभाव शिक्षा पर भी पड़ा है। शिक्षा को समयानुकूल बनाने के लिए शैक्षिक क्रियाकलापों में नूतन प्रवृत्तियों ने अपनी उपयोगिता स्वयंसिद्ध कर दी है। जो कई अर्थों में प्रकट होती है। बालक की भिन्नताओं के होते हुए भी प्रकृति तथा स्वभाव संबंधी सामान्य विशेषताए होती है। बालक के द्वारा अनुभव किये जाने योग्य अमूर्त वस्तुओं के अध्ययन के लिए कक्षा में नवाचार क्यों, विषय प्रवेश एवं कक्षादृकक्ष के बातावरण को अच्छा बनाने में प्रयोग करते है। विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर भारत के उच्च कोटि के साहित्यकार हैं। विद्यालयों में सीखने का माहौल बनाने और बच्चों को प्रेरित करने में शिक्षकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अगर सरल शब्दों में कहें तो स्कूल एक ऐसी जगह है जहाँ छात्र–शिक्षक आपस में विभिन्न शैक्षणिक सामग्री का उपयोग करके संवाद और बातचीत के माध्यम से सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में शामिल होते हैं। अध्यापक अपने अनुभवों को समृद्ध करता है। बच्चे पुराने अनुभवों के जमीन पर नए अनुभवों को जोड़ते हुए ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया से अवगत होता है कक्षा में पढ़ाने वाला अध्यापक, प्रयोगशाला मे प्रयोग करने वाला वैज्ञानिक, इमारतों के नक्शे बनाने वाला इंजीनियर, खेतों मे काम करने वाले किसान और मजदूर आदि–आदि सबके काम अपना–अपना महत्व रखते है। उनमें न कोई हेय है, न कोइ श्रेष्ठ है। सब छात्र के लिए जरूरी है ओर एक–दूसरे के पूरक है। यहाँ वह पढ़ना–लिखना, खुद को अभिव्यक्त करना, बाकी बच्चों के साथ समायोजन करना, खेल और अन्य सामूहिक गतिविधियों में शामिल होने का कौशल विकसित करता है. अगर किसी स्कूल में छात्र–शिक्षक अनुपात संतुलित नहीं है तो बच्चों के सीखने की प्रक्रिया बाधित होती है प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में कुछ समय के लिए अकारण ही मानसिक उदासी और उत्फुल्लता का दौर आता रहता है। उदासी के दौर में निराशा को घर करने न देना चाहिए तथा समझ लेना चाहिए कि वह दौर स्वयमेव निकल जायगा। उत्फुल्लता के दौर में किसी उत्तम कर्म में जुट जाना चाहिए।

विज्ञान शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य

विद्यार्थी का व्यक्तित्व विकास उनकी योजना का अनिवार्य अंग नहीं बन पाता है। चाहे आई.टी. का क्षेत्र हो अथवा मैनेजमेंट या मेडिकल का, सभी में सन्तोषजनक प्रगति हुई है, परन्तु युवाओं के व्यक्तित्व निर्माण की समस्या जस की तस दिखाई दे रही है। विज्ञान शिक्षा शास्त्रियों के अनुसार शिक्षा को त्रिमुखी प्रक्रिया माना गया है। शिक्षक, शिक्षार्थी एवं पाठ्यक्रम तीन आधार इस प्रक्रिया में हैं। शिक्षक का पुनीत कार्य शिक्षार्थी को पढ़ाना है, पाठ्यक्रम इसका माध्यम है। स्पष्ट है कि शिक्षक के लिए साध्य शिक्षार्थी है न कि पाठ्यक्रम। पाठ्यक्रम तो शिक्षक के लिए साधन के रूप में उपयोग में लाया जाता है। समय परिवर्तन के साथ साधन, साध्य के रूप में परिवर्तित हो गया है। शिक्षक का केन्द्रीकरण पाठ्यक्रम तक सीमित रह गया है, शिक्षार्थी द्वितीय वरीयता क्रम में आ गया है। अस्तु! विज्ञान शिक्षा का सर्वांगीण विकास अथवा शिक्षार्थी के व्यक्तित्व विकास की अवधारणा उलट गयी है। लक्ष्य परिवर्तित हो गये हैं, व्यक्तित्व के विकास का स्थान अंक–अर्जन ने प्राप्त कर लिया है, लक्ष्य उपाधि अथवा परिणाम हासिल करने तक सिमट गया है। समस्त शिक्षा–तन्त्र का भी एकमात्र उद्देश्य विद्यालय के उत्तम परीक्षाफल तक ही सीमित हो गया है। विज्ञान शिक्षा का उद्देश्य नवाचार शिक्षा हो काम उठाया, थोड़ा–सा किया, मन मे दुविधा पैदा हो गयी–यदि यह काम पार न पड़ा तो? नहीं, इसे यों करें तो ठीक रहेगा।

उस तरह सोच लो, फिर उसे करना शुरू करो। एक बार शुरू कर दिया तो उसे अपनी पूरी शक्ति से करों। जिसकी निगाह इधर–उधर भटकती रहती है, वह अपने लक्ष्य को नही देख सकता। जीवन एक सुनहला वरदान है। छात्र को स्वस्थ एवं सुखी रहने के लिए ही वह स्वर्णिम अवसर मिला है। जीवन से बढ़कर अधिक मूल्यवान् कुछ भी नहीं है। बहुत–से कामों मे सफलता नहीं मिलती तो इसकी वजह यह है कि हम उन कामों को पूरे मन से नहीं करते। काम करने की लगन के साथ विश्राम भी आवश्यक है। एकाग्रता से छात्र का अपने काम को अच्छी तरह करने का मौका मिलता है। साथ ही उसका संकल्प भी पक्का बनता है। काम मे छात्र को रस मिलने से उसका उत्साह बढ़ता है। उत्साह बढ़ने से छात्र के हाथ दूना काम करते है। उत्साह वह ज्योति है, जिसके आगे निराशा का अंधकार एक क्षण नहीं ठहरता। उत्साह से भरा व्यक्ति कभी खाली नही बैठ सकता। उसे नित नये–नये काम सूझते रहते हैं। बड़ी उम्र में भी जवान बना रहता हैं। जीवन में सबके सामने बड़े–बड़े अवसर आते रहते है। जो उन्हें पहचानकर पकड़ लेते है, वे महान काम कर डालते है।कक्षा के सारे बच्चों को एक गोले में बिठाकर किसी भी बच्चे से गिनती शुरू करवाकर क्रमवार आगे बोलना है। जो बच्चा गलत बोलता है वह इस खेल से बाहर हो जाएगा। अगला बच्चा फिर 1 से शुरू करेगा। यह क्रम चलता रहेगा। जो बच्चा ध्यान पूर्वक गिनती बोलेगा और आउट नहीं होगा, वह विजेता होगा। यही खेल पहाड़े बोलकर भी खेला जा सकता है। इस खेल में एकाग्रता का बहुत महत्व है। सब बच्चों को ध्यानपूर्वक सुनना है कि उसका पड़ोसी क्या बोल रहा है। यह सत्य है इन सभी सुविधाओं से विद्यालयों में छात्र नामांकन संख्या में अति वृद्धि हुई है। परन्तु गुणवत्तापरक शिक्षा में अभी भी आशानुरूप सफलता नहीं मिली है। जहां संख्यात्मक वृद्धि होती है, वहां गुणात्मक वृद्धि में कमी आ जाती है। इस कमी को दूर करने के लिए आवश्यक है कि कक्षा में रूचिपूर्ण शिक्षण पद्धति अपनाई जाये जैसे–भ्रमण विधि, खेल विधि, कहानी विधि, प्रदर्शन विधि, करके सीखना, प्रोजेक्ट विधि, केस स्टडी विधि तथा विभिन्न प्रकार की अन्य शैक्षिक गतिविधियां आदि। सीखने की प्रक्रिया मनुष्यों के मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक विकासक्रम का एक निर्धारक तत्त्व है। शिक्षा के ध्येय को मूलतः ज्ञात के प्रसार एवं अज्ञात के प्रति अनुसंधानात्मक अभिरुचि के विकास में समाहित किया जा सकता है। बीसवीं सदी तक के सामाजिक एवं वैज्ञानिक विकास की गति इतनी तीव्र नहीं थी कि पारम्परिक शिक्षण की प्रणालियाँ और व्यवस्थाएँ उसे संभाल न सकें परन्तु इक्कीसवीं सदी ने कुछ युगांतरकारी परिवर्तनों से अपनी यात्रा आरम्भ की है। प्रत्येक वस्तु या क्रिया में परिवर्तन, प्रकृति का नियम है। परिवर्तन से ही विकास के चरण आगे बढ़ते हैं। परिवर्तन एक जीवन्त, गतिशील और आवश्यक क्रिया है, जो समाज को वर्तमान व्यवस्था के अनुकूल बनाती है। परिवर्तन जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में होते हैं। इन्ही परिवर्तनों से व्यक्ति और समाज को स्फूर्ति, चेतना, ऊर्जा एवं नवीनता की उपलब्धि होती है।

विद्यालयों में विज्ञान सीखने का माहौल बनाने और बच्चों को प्रेरित करने में शिक्षकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अगर सरल शब्दों में कहें तो स्कूल एक ऐसी जगह है जहाँ छात्र–शिक्षक आपस में विभिन्न विज्ञान/शैक्षणिक सामग्री का उपयोग करके संवाद और बातचीत के माध्यम से सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में शामिल होते हैं। अध्यापक अपने अनुभवों को समृद्ध करता है। बच्चे पुराने अनुभवों के ज़मीन पर नए अनुभवों को जोड़ते हुए ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया से अवगत होता है कक्षा मे पढ़ाने वाला अध्यापक, प्रयोगशाला मे प्रयोग करने वाला वैज्ञानिक, इमारतों के नक्शे बनाने वाला इंजीनियर, खेतों मे काम करने वाले किसान और मज़दूर आदि–आदि सबके काम अपना–अपना महत्व रखते है। उनमें न कोई हेय है, न कोई श्रेष्ठ है। विद्यार्थियों को कक्षा–कक्ष की गतिविधियों से जोड़ने के महत्व की समझ व उनकी उपलब्धि स्तर को बढ़ाने के लिए विद्यार्थियों में विज्ञान के प्रति संवेदना और रख–रखाव को प्रोत्साहित करना है।जीवन में सबके सामने बड़े–बड़े अवसर आते रहते है। जो छात्र उन्हें पहचानकर पकड़ लेते है, वे महान काम कर डालते है। विद्यार्थियों को उनकी उपलब्धियों को बढ़ाने के लिये सीखने के लिए संबद्ध करने के महत्व को समझना। सीखने–सिखाने के नवाचारी तरीकों,पर केन्द्रित लर्निंग में – विज्ञान पाठ्यपुस्तकों से लिए गए तरीके नहीं बल्कि ऐसी तकनीकें, तरकीबें जो समयसिद्ध और कारगर रही हैं। ये एकदम व्यावहारिक हैं

और भारत की अधिकांश कक्षाओं में पाई जाने वाली साधारण से साधारण परिस्थितियों में भी इन्हें किया जा सकता है। अध्यापन की इन विधियों को आजमाने के लिए किसी विशेष उपकरण की जरूरत नहीं। विज्ञान विषय चाहे एक—दूसरे से कितने ही अलग क्यों न हों, पर इन सबको जोड़ने वाला सूत्र एक ही है — कुछ अलग करना, कुछ नया करना — जिसके चलते बच्चे सीखने की प्रक्रिया में इस कदर रम जाते हैं कि वे उम्मीद से ज्यादा करने की ठान लेते हैं। बच्चे ठोस वस्तुओं के साथ खेलने में मजा लेते हैं इसलिये कक्षा में पहले इनसे ही शुरूआत करनी चाहिये। चीजें एकत्र करके उनसे खेलने, उन्हें तरह—तरह से परखने का बच्चों को मौका दिया जाना चाहिये। इनकी मदद से छांटने', रंग पहचानने, जोडियाँ बनाने, क्रम को समझने जैसे काम करवाये जा सकते हैं। बच्चों के साथ मिलकर मिट्टी के खिलौने, रेत और मिट्टी पर आकृतियाँ बनाई जा सकती हैं। ठोस वस्तुओं के साथ खेलते या काम करते हुए बच्चों के साथ बातचीत करना या उनके अनुभव सुनना बहुत जरूरी है। अक्सर जब हम कक्षा में ठोस वस्तुओं का प्रयोग करते हैं तो एक ही तरह की ठोस वस्तु का उपयोग करते हैं, जबकि तरह—तरह की ठोस वस्तुओं के साथ काम करने से बच्चों की समझ अधिक पक्की होती है। गणित सीखने दृसिखाने का क्रम बच्चे गणित को निम्नांकित क्रम में आसानी से सीखते हैं, जो मूर्त से अमूर्त की ओर पर आधारित होंगी। कई बच्चे बचपन से गणित से खौफजदा रहते हैं। कॉलेज—विश्वविद्यालय पहुंचने तक गणित का भूत उनका पीछा नहीं छोड़ता। यद्यपि गणित पठन—पाठन को रोचक बनाने के लिए कई नवाचार हुए, पर बच्चों में भय बना हुआ है। हमारे धर्म—ग्रन्थ मे एक बड़ा सुन्दर मंत्र इन शब्दों में मिलता है— 'उठो, जागों और जब तक ध्येय की प्राप्ति न हो, प्रयत्न करते रहों।' जीवन मे सफलता की यही कुंजी है। वैसी ही निगाह और भावना हमें हर काम मे रखनी चाहिए। जिसे काम मे रस आता है, वही काम की महिमा को जानता है, वही काम को कर्तव्य मानकर करता है।

स्वास्थ्य की नई दिशाः कंप्यूटर असिस्टेड सिस्टम और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस से ग्रीवा कैंसर की पहचान

सौरभ सैनी
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, इंदौर

ग्रीवा कैंसर, जिसे गर्भाशय ग्रीवा का कैंसर भी कहा जाता है, महिलाओं में दूसरा सबसे आम कैंसर है और भारत में यह गंभीर समस्या है। GLOBOCAN 2020 के अनुसार, भारत में इसकी घटना दर 18.3% (123,907 मामले) है और मृत्यु दर 9.1% है, जो इसे महिलाओं में मृत्यु का दूसरा प्रमुख कारण बनाता है। राष्ट्रीय कैंसर रजिस्ट्री कार्यक्रम के अनुसार, स्तन और गर्भाशय ग्रीवा का कैंसर सबसे आम हैं, जहां गर्भाशय ग्रीवा कैंसर का हिस्सा 6–29% है। हाल के वर्षों में, कंप्यूटर असिस्टेड सिस्टम और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) ने ग्रीवा कैंसर की पहचान और निदान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, जिससे शुरुआती चरण में बीमारी की पहचान और उपचार संभव हुआ है।

ग्रीवा कैंसर की पहचान के लिए उपलब्ध जाँच

ग्रीवा कैंसर का इलाज तभी आसान होता है जब इसे जल्दी पहचाना जाए, लेकिन शुरुआती लक्षणों के अभाव में अक्सर देर हो जाती है। पहचान के लिए Pap Smear और HPV टेस्ट आम हैं, पर इनकी सटीकता में कभी–कभी कमी हो सकती है। कॉलपॉस्कोपी एक अधिक सटीक तरीका है, जिसमें एक विशेष उपकरण से ग्रीवा की स्थिति स्पष्ट रूप से देखी जाती है। यह टेस्ट सूक्ष्म बदलावों को पहचानने में अधिक सक्षम है और कम गलतियों के साथ डॉक्टरों को सही जानकारी प्रदान करता है।

कंप्यूटर असिस्टेड सिस्टम (CAD) क्या है? एक सटीक और मजबूत CAD बनाने में आर्टिफीसियल इंटेलिजेंस की भूमिका

कंप्यूटर असिस्टेड सिस्टम एक सॉफ्टवेयर है जो डॉक्टरों को बीमारी की पहचान और इलाज में मदद करता है, जिससे उनका काम आसान और तेज हो जाता है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस तकनीक, जो कंप्यूटर को खुद से सीखने और सही निर्णय लेने की क्षमता देती है, CAD को बहुत सटीकता से बीमारी की पहचान करने में सक्षम बनाती है। इससे डॉक्टरों को जल्दी और सही जानकारी मिलती है, जिससे मरीज का बेहतर इलाज संभव होता है। यह तकनीक विशेष रूप से ग्रीवा कैंसर जैसी बीमारियों की पहचान में उपयोगी साबित हो रही है, जिससे प्रारंभिक चरण में ही बीमारी का पता लगाया जा सकता है और समय पर उपचार शुरू किया जा सकता है।

CAD सिस्टम कैसे काम करता है?

1. **डेटा संग्रह**

   ग्रीवा कैंसर की पहचान में कोलपोस्कोपी इमेज का महत्वपूर्ण स्थान है, जिसमें गर्भाशय ग्रीवा की सूक्ष्म तस्वीरें ली जाती हैं। इन इमेज को इकट्ठा कर सामान्य और असामान्य इमेज का डेटा सेट बनाया जाता है, जो मशीन लर्निंग मॉडल को प्रशिक्षित करने में उपयोगी होता है। यह मॉडल सूक्ष्म बदलावों को पहचानकर नई इमेज की पहचान कर सकता है, जिससे CAD सिस्टम अधिक सटीक और प्रभावी बनता है और डॉक्टरों को सही निदान और उपचार में सहायता मिलती है।

2. **डेटा पूर्व–प्रसंस्करण**

   डेटा पूर्व–प्रसंस्करण में सबसे पहले इमेज की गुणवत्ता सुधारने पर ध्यान दिया जाता है, जिसमें इमेज संवर्धन से noise हटाना और contrast बढ़ाना शामिल है। इसके बाद, इमेज को सामान्यीकरण प्रक्रिया से एक समान आकार और पैमाने पर लाया जाता है। इसके अलावा, इमेज खंडन से महत्वपूर्ण हिस्सों को अलग किया जाता है, जिससे मॉडल इन पर ध्यान केंद्रित कर सटीक निदान कर सके। इन तकनीकों से इमेज की गुणवत्ता और सटीकता बढ़ती है, जिससे ग्रीवा कैंसर की पहचान में सुधार होता है।

3. मॉडल निर्माण और मॉडल प्रशिक्षण

मॉडल निर्माण में पहले कॉन्वोल्यूशनल न्यूरल नेटवर्क (CNN) का उपयोग कर इमेज से महत्वपूर्ण विशेषताएँ किनारे टेक्सचर और आकार निकाले जाते हैं। CNN लेयर्स फीचर एक्सट्रैक्शन में मदद करती हैं, जिससे मॉडल इमेज के महत्वपूर्ण हिस्सों को समझ पाता है। इसके बाद मॉडल को लेबल्ड डेटा के साथ प्रशिक्षित किया जाता है, जिससे वह सामान्य और असामान्य इमेज को पहचानना सीखता है। अंत में, टेस्ट डेटा सेट के माध्यम से सटीकता संवेदनशीलता और विशिष्टता जैसे मापदंडों पर मॉडल के प्रदर्शन का मूल्यांकन किया जाता है, ताकि उसकी प्रभावकारिता सुनिश्चित हो सके।

4. मॉडल परिनियोजन (Model Deployment)

मॉडल परिनियोजन का अर्थ है सफलतापूर्वक तैयार और मूल्यांकित एआई मॉडल को वास्तविक अस्पतालों और क्लीनिक्स में लागू करना। यह मॉडल डॉक्टरों को कोलपोस्कोपी इमेज का तेजी से और सटीक विश्लेषण करने में मदद करता है, जिससे वे रोगी की स्थिति को सही ढंग से समझकर उपचार निर्धारित कर सकते हैं। इससे चिकित्सकों की कार्यक्षमता बढ़ती है और रोगियों को शीघ्र और उचित उपचार मिलता है, विशेषकर ग्रीवा कैंसर की प्रबंधन और उपचार प्रक्रिया में।

निष्कर्ष

कंप्यूटर असिस्टेड सिस्टम और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस ग्रीवा कैंसर की पहचान में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं, जिससे डॉक्टर शुरुआती लक्षणों को तेजी से पहचानकर उचित निदान और उपचार कर सकते हैं। हालांकि, इन तकनीकों की सटीकता और प्रभावशीलता के लिए उच्च गुणवत्ता वाले डेटा और व्यापक संग्रहण की आवश्यकता होती है। तकनीकी विकास, व्यवस्थाओं का समर्थन, और मानकों का पालन इस प्रणाली को अधिक उपयोगी और सुधारित बना सकते हैं, जिससे ग्रीवा कैंसर परीक्षणों की सटीकता बढ़ेगी।

भारी धातु प्रदूषित मिट्टी और पानी का फाइटोरेमेडिएशनः प्रगति और परिप्रेक्ष्य

रिंकी यादव, मंजू देवी
पर्यावरण विज्ञान विभाग, अल्पाइन इंस्टीट्यूट ऑफ एरोनॉटिक्स, देहरादून

फाइटोरेमेडिएशन शब्द ग्रीक शब्द फाइटो (पौधा) और लैटिन शब्द रेमेडियम (संतुलन बहाल करना) से आया है। यह तकनीक बायोरेमेडिएशन (दूषित मिट्टी को साफ करने के लिए जीवों का उपयोग) का एक रूप है और यह उन सभी रासायनिक या भौतिक प्रक्रियाओं पर लागू होता है जिनमें मिट्टी और भूजल में दूषित पदार्थों को नष्ट करने या स्थिर करने के लिए पौधे शामिल होते हैं।

फाइटोरेमेडिएशन एक लागत–कुशल पौधा–आधारित दृष्टिकोण है जो पर्यावरण से तत्वों और यौगिकों को केंद्रित करने और उनके ऊतकों में विभिन्न अणुओं को चयापचय करने की पौधों की क्षमता का लाभ उठाता है। यह कुछ पौधों की मिट्टी, पानी या हवा में जैव संचय, अपघटन या हानिरहित प्रदूषकों को बनाने की प्राकृतिक क्षमता को संदर्भित करता है। फाइटोरेमेडिएशन के लिए विषाक्त भारी धातुएँ और कार्बनिक प्रदूषक लक्ष्य हैं।

फाइटोरेमेडिएशन आमतौर पर दूषित मिट्टी या पानी के वातावरण पर लागू होता है जो स्थिर होते हैं। कुछ उदाहरणों में परित्यक्त धातु खदानों के कामकाज और उन जगहों की बहाली शामिल है जहाँ निर्माण के दौरान पॉलीक्लोरीनेटेड बाइफिनाइल को डंप किया गया है और चल रही कोयला खदानों का शमन, मिट्टी, पानी या हवा में दूषित पदार्थों के प्रभाव को कम करने वाले डिस्चार्ज शामिल हैं।

सभी पौधे भारी धातुओं या कार्बनिक प्रदूषकों को इकट्ठा नहीं कर सकते हैं क्योंकि पौधे की शारीरिक संरचना में अंतर होता है। यहाँ तक कि एक ही प्रजाति के भीतर की किस्मों में भी प्रदूषक जमा करने की अलग–अलग क्षमताएँ होती हैं।

यह हाइपरएक्यूमुलेटर कहे जाने वाले कुछ पौधों की प्राकृतिक क्षमता को संदर्भित करता है, जो मिट्टी, पानी या हवा में जैव संचय, अपघटन या हानिरहित प्रदूषकों को बनाने की क्षमता रखते हैं। विषैले भारी धातु और कार्बनिक प्रदूषक फाइटोरेमेडिएशन के प्रमुख लक्ष्य हैं।

निम्नलिखित पौधे फाइटोरिमेडिएशन के लिए सर्वोत्तम हैं भारतीय सरसों, विलो, चिनार का पेड़, भारतीय घास, सूरजमुखी

दुनिया भर में फाइटोरेमेडिएशन परियोजनाओं में धातुओं, कीटनाशकों, विलायकों, विस्फोटकों और कच्चे तेल तथा उसके व्युत्पन्नों जैसे प्रदूषकों को कम किया गया है। सरसों के पौधे, अल्पाइन पेनीक्रेस, भांग और पिगवीड जैसे कई पौधे विषाक्त अपशिष्ट स्थलों पर प्रदूषकों को अत्यधिक मात्रा में एकत्रित करने में सफल साबित हुए हैं।

फाइटोरिमेडिएशन की प्रक्रियाओं पर नीचे चर्चा की गई है

फाइटोएक्स्ट्रैक्शन फाइटोरिमेडिएशन और 'फाइटोएक्स्ट्रैक्शन' की उपप्रक्रिया में पानी या मिट्टी से हानिकारक पदार्थों को हटाने के लिए पौधों का उपयोग किया जाता है। धातुओं को अवशोषक पदार्थों में घुलना चाहिए ताकि वे पौधों की जड़ों द्वारा अवशोषित हो सकें। खुद की रक्षा करने और धातु को अधिक गतिशील बनाने के लिए, पौधे को धातु को कीलेट करना चाहिए (यह धातु के अवशोषित होने से पहले भी हो सकता है)। केलेशन एक धातु को कार्बनिक अणु से घेरने और रासायनिक रूप से जोड़ने की प्रक्रिया है। फैक्ट्री, केलेटेड धातु को भंडारण के लिए सुरक्षित स्थान पर ले जाती है। अंतिम लेकिन महत्वपूर्ण बात यह है कि, भंडारण और परिवहन के दौरान धातुओं से होने वाले किसी भी नुकसान को ध्यान में रखते हुए, सुविधा को संशोधित करना होगा।

फाइटोस्टेबिलाइजेशन पौधों को स्थिर रखने के लिए मिट्टी की भारी धातु गतिशीलता को कम करना होगा।

वायुजनित धूल को कम करके, मृदा अपरदन को कम करके, तथा खाद्य श्रृंखला में संदूषकों की घुलनशीलता या जैवउपलब्धता को कम करके धातुओं को स्थिर किया जा सकता है। जब जैव ठोस, फॉस्फेट, कार्बनिक पदार्थ और क्षारीय एजेंट सहित मृदा सुधारक मिलाए जाते हैं, तो धातुएं मृदा में कम घुलनशील हो जाती हैं और भूजल पर उनका प्रभाव कम होता है। पौधों की जड़ों द्वारा प्रदूषकों का जमाव, जड़ों पर अवशोषण, या जड़ क्षेत्र के भीतर अवक्षेपण, ये सभी प्रदूषकों की गतिशीलता को कम करने का काम करते हैं।

फाइटोडिग्रेडेशन कार्बनिक प्रदूषकों का प्रत्यक्ष अपघटन, जड़ों से एंजाइम का उत्सर्जन, या पौधों के ऊतकों के अंदर चयापचय प्रक्रियाएं, ये सभी फाइटोडिग्रेडेशन के उदाहरण हैं। कार्बनिक प्रदूषक जड़ों द्वारा अवशोषित कर लिए जाते हैं तथा पादप ऊतकों में पादप अपघटन के दौरान कम खतरनाक यौगिकों में परिवर्तित हो जाते हैं।

फाइटोस्टिम्यूलेशन फाइटोस्टिम्यूलेशन नामक फाइटोरीमेडिएशन विधि का उपयोग शाकनाशी–दूषित क्षेत्रों को साफ करने के लिए किया जा सकता है। जड़ों के चारों ओर स्थित मृदा परत, या राइजोस्फीयर, वह स्थान है जहां यह क्रियाकलाप सम्पन्न होता है। पौधों द्वारा उत्सर्जित कार्बोहाइड्रेट और अम्ल के परिणामस्वरूप कार्बनिक प्रदूषक जैवनिम्नीकृत हो जाते हैं, जो सूक्ष्मजीवों की गतिविधि को प्रोत्साहित करते हैं। परिणामस्वरूप, खतरनाक यौगिकों को सूक्ष्मजीवों द्वारा विघटित कर उन्हें हानिरहित रूपों में परिवर्तित किया जा सकता है। यह प्रदर्शित किया गया है कि फाइटोस्टिम्यूलेशन पीसीबी, पीएएच और पेट्रोलियम हाइड्रोकार्बन के विघटन में कुशल है।

फाइटोवोलटिलाइजेशन फाइटोवोलटिलाइजेशन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा प्रदूषक पौधों की जड़ों द्वारा ग्रहण कर लिए जाते हैं, गैस में परिवर्तित हो जाते हैं, तथा वायुमंडल में छोड़ दिए जाते हैं। वाष्पोत्सर्जन वह प्रक्रिया है जो इसे आगे बढ़ाती है। बढ़ते पौधे पानी और कार्बनिक प्रदूषकों को अवशोषित करते हैं, जो इस प्रक्रिया को गति प्रदान करते हैं। पौधों की जड़ों से पत्तियों तक संवहनी तंत्र से गुजरते समय पानी कई परिवर्तनों और संशोधनों से गुजरता है। पत्तियों पर पहुंचने के बाद कुछ प्रदूषक वाष्पीकृत हो जाते हैं या वायुमंडल में उड़ जाते हैं। फाइटोवोलाटिलाइजेशन के दौरान मरक्यूरिक आयन को कम हानिकारक तत्व पारे में परिवर्तित कर दिया जाता है, जिसका उपयोग ऐतिहासिक रूप से पारे को खत्म करने के लिए किया जाता रहा है।

राइजोफिल्ट्रेशन राइजोफिल्ट्रेशन एक ऐसी प्रक्रिया है जो जड़ों के घने नेटवर्क के माध्यम से पानी को फिल्टर करके खतरनाक प्रदूषकों और अतिरिक्त पोषक तत्वों को हटाती है। हाइड्रोपोनिक पद्धति से प्रवर्तित फाइटोरीमेडिएशन पौधों को धीरे–धीरे उस जल की विशिष्ट विशेषताओं के अनुकूल बना दिया जाता है, जिसे साइट पर उपचारित करने की आवश्यकता होती है। परमाणु ऊर्जा संयंत्र दुर्घटना के बाद, चेर्नोबिल में पानी से रेडियोधर्मी यूरेनियम प्रदूषण को हटाने के लिए एक परीक्षण में सूरजमुखी का प्रभावी ढंग से उपयोग किया गया था।

जैविक हाइड्रोलिक रोकथाम मिट्टी के माध्यम से जड़ों में ऊपर की ओर पानी खींचकर और पौधे के माध्यम से बाहर निकालकर, कुछ पौधे, जैसे कि पोपलर, घुलनशील विषाक्त पदार्थों के नीचे की ओर, साइट में गहराई तक और भूजल में प्रवास को कम कर सकते हैं। इस प्रक्रिया को जैविक हाइड्रोलिक कारावास के रूप में जाना जाता है।

फाइटोडेसैलिनेशन फाइटोडेसेलिनेशन नामक एक पर्यावरणीय रूप से सौम्य जैविक प्रक्रिया में, सोडियम–अतिसंचित लवणोद्भिद का उपयोग सोडयुक्त मिट्टी और पानी को बहाल करने के लिए किया जाता है। लवणमृदा (लवणीय मिट्टी के लिए उपयुक्त पौधे) का उपयोग फाइटोडिसेलिनेशन में मिट्टी से नमक हटाने और इसकी उर्वरता बढ़ाने के लिए किया जाता है।

फाइटोरेमेडिएशन के लाभ फाइटोरेमेडिएशन पर्यावरण से प्रदूषकों को हटाने के लिए एक प्राकृतिक और पर्यावरण अनुकूल दृष्टिकोण है। यह एक लागत प्रभावी विधि है क्योंकि यह पौधों की प्राकृतिक क्षमताओं पर निर्भर करती है, जिसके लिए न्यूनतम रखरखाव और परिचालन व्यय की आवश्यकता होती है। फाइटोरेमेडिएशन को बड़े पैमाने पर लागू किया जा सकता है, जिससे यह व्यापक प्रदूषण के मुद्दों को संबोधित करने के लिए उपयुक्त है। भारी धातुओं को स्थिर करके, यह क्षरण या निक्षालन के माध्यम से प्रदूषकों के अन्य क्षेत्रों में फैलने के जोखिम को कम करता है। फाइटोरेमेडिएशन प्रक्रिया के दौरान कार्बनिक पदार्थ जारी

करके मिट्टी की उर्वरता में सुधार कर सकता है।यह प्रक्रिया सौर ऊर्जा द्वारा संचालित होती है और इसे बाहरी ऊर्जा स्रोतों की आवश्यकता के बिना बनाए रखा जा सकता है। यह पर्यावरण और पारिस्थितिकी तंत्र में प्रदूषकों के जोखिम को कम करता है, तथा वन्यजीवों और मानव स्वास्थ्य की रक्षा करता है। कुछ मामलों में, फाइटोरिमेडिएशन आकर्षक पौधों की प्रजातियों को शामिल करके प्रदूषित क्षेत्रों की दृश्य अपील को बढ़ा सकता है। यह प्रक्रिया अक्सर आसपास के पर्यावरण या समुदायों में महत्वपूर्ण व्यवधान के बिना संपन्न की जा सकती है। फाइटोरेमेडिएशन प्रदूषण के मूल कारण को संबोधित करके प्रदूषण की समस्याओं का दीर्घकालिक और स्थायी समाधान प्रदान कर सकता है।

मिट्टी और जल संसाधनों के साथ–साथ मानव स्वास्थ्य के लिए सबसे बड़े खतरों में से एक है भारी धातु प्रदूषण। साल दर साल, पर्यावरण में भारी धातुओं की मात्रा बढ़ती जा रही है। क्षतिग्रस्त सेटिंग्स को साफ करने या स्थिर करने के लिए पौधों का उपयोग फाइटोरेमेडिएशन के रूप में जाना जाता है, जो पर्यावरण सफाई में एक नई अवधारणा है। क्षतिग्रस्त पर्यावरण से दूषित पदार्थों को हटाने के लिए सबसे कुशल संयंत्र–आधारित तकनीक को धातुओं का फाइटोरेमेडिएशन कहा जाता है। इस पर्यावरण के अनुकूल तकनीक का उपयोग मिट्टी की संरचना को नुकसान पहुँचाए बिना गंदी मिट्टी को साफ करने के लिए किया जा सकता है। यह प्रदर्शित किया गया है कि कुछ विशेष पौधे, जैसे जड़ी–बूटियाँ और लकड़ी की प्रजातियाँ, हानिकारक धातुओं को अवशोषित करने की एक स्पष्ट क्षमता रखती हैं।

शहरी विकास और पर्यावरण संरक्षण का अंतर्संबंध

दीप्ति सिंह वशिष्ठ, अर्चना बछेती और राकेश कुमार बछेती
पर्यावरण विज्ञान विभाग, ग्राफिक एरा विश्वविद्यालय, देहरादून

शहरीकरण प्राकृतिक परिदृश्यों को निर्मित वातावरण में बदल देता है, जिससे स्थानीय पारिस्थितिकी तंत्र में भारी बदलाव आता है। इस प्रक्रिया में वनस्पति साफ़ करना, जलमार्गों को संशोधित करना और मिट्टी की संरचना को बदलना शामिल है, जो कई प्रजातियों के प्राकृतिक आवास को बाधित करता है। शहरीकरण के सबसे महत्वपूर्ण प्रभावों में से एक निवास स्थान का विखंडन है। जब बड़े निरंतर आवासों को सड़कों, इमारतों और अन्य बुनियादी ढांचे द्वारा छोटे, अलग–अलग हिस्सों में विभाजित किया जाता है, तो प्रजातियों के लिए जीवित रहना चुनौतीपूर्ण हो जाता है। खंडित आवासों से आनुवंशिक विविधता में कमी, प्रजातियों की आबादी में कमी और पर्यावरणीय परिवर्तनों के प्रति संवेदनशीलता में वृद्धि हो सकती है। उदाहरण के लिए, वन क्षेत्रों में शहरी विकास से अक्सर वृक्षों का नुकसान होता है, जो कई वन्यजीव प्रजातियों के लिए महत्वपूर्ण है। घोंसले, भोजन और आश्रय के लिए पेड़ों पर निर्भर रहने वाले पक्षियों, स्तनधारियों और कीड़ों के लिए खंडित परिदृश्यों में पनपना कठिन होता जा रहा है। इसके अतिरिक्त, जब आर्द्रभूमि सूख जाती है या जलमार्ग बदल जाते हैं तो जलीय पारिस्थितिकी तंत्र प्रभावित होते हैं, जिससे मछली और उभयचर आबादी प्रभावित होती है। शहरी क्षेत्र उच्च तापमान की विशेषता वाले अद्वितीय माइक्रोक्लाइमेट बनाते हैं, जिन्हें 'शहरी ताप द्वीप' प्रभाव के रूप में जाना जाता है। यह घटना इसलिए घटित होती है क्योंकि इमारतें, सड़कें और अन्य बुनियादी ढाँचे प्राकृतिक परिदृश्यों की तुलना में अधिक गर्मी को अवशोषित और बनाए रखते हैं। ऊंचा तापमान स्थानीय वनस्पतियों और जीवों को प्रभावित कर सकता है, विकास पैटर्न, प्रजनन चक्र और प्रजातियों के वितरण को बदल सकता है। इसके अलावा, बढ़ा हुआ तापमान वायु प्रदूषण को बढ़ा सकता है, जो पारिस्थितिकी तंत्र और मानव स्वास्थ्य दोनों पर नकारात्मक प्रभाव डालता है। नाइट्रोजन ऑक्साइड और पार्टिकुलेट मैटर जैसे प्रदूषक पौधे के जीवन को नुकसान पहुंचा सकते हैं, प्रकाश संश्लेषण को कम कर सकते हैं और पेड़ों को कमजोर कर सकते हैं, जिससे वे बीमारियों और कीटों के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाते हैं। जबकि शहरों को अक्सर जैव विविधता रेगिस्तान के रूप में देखा जाता है, वे संरक्षण के लिए अद्वितीय अवसर भी प्रदान कर सकते हैं। शहरी क्षेत्र विभिन्न प्रकार की प्रजातियों का समर्थन कर सकते हैं, जिनमें वे भी शामिल हैं जो मानव उपस्थिति के लिए अनुकूल हैं और वे जो शहरी हरे स्थानों का उपयोग करते हैं। पार्क, उद्यान, हरी छतें और अन्य शहरी हरे स्थान शहरों के भीतर जैव विविधता को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये क्षेत्र पक्षियों, कीड़ों और छोटे स्तनधारियों के लिए आवास, भोजन, आश्रय और प्रजनन स्थल प्रदान करते हैं। हरे–भरे स्थान वन्यजीवों के लिए सीढ़ी के रूप में भी काम करते हैं, जिससे प्रजातियों को खंडित आवासों के बीच स्थानांतरित होने की अनुमति मिलती है। उदाहरण के लिए, सामुदायिक उद्यान और शहरी खेत मधुमक्खियों और तितलियों जैसे परागणकों को आकर्षित कर सकते हैं, जो पौधों के प्रजनन के लिए आवश्यक हैं। ये हरे–भरे स्थान देशी पौधों की प्रजातियों का भी समर्थन कर सकते हैं, जो स्थानीय जैव विविधता को बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण हैं।

शहरीकरण से उत्पन्न चुनौतियों के बावजूद कुछ प्रजातियाँ सफलतापूर्वक शहरी वातावरण में ढल गई हैं और फल–फूल रही हैं। शहरी–अनुकूलित प्रजातियाँ अक्सर अद्वितीय व्यवहार और शारीरिक लक्षण प्रदर्शित करती हैं जो उन्हें शहरी संसाधनों का दोहन करने में सक्षम बनाती हैं। कबूतर और कौवे जैसे पक्षी शहरों में सर्वव्यापी हो गए हैं, जो भोजन की बर्बादी और इमारतों द्वारा प्रदान किए गए घोंसले के स्थानों का लाभ उठा रहे हैं। इसी तरह, रैकून और लोमड़ियों जैसे स्तनधारियों ने कचरे के डिब्बे में भोजन खोजने और शहर की सड़कों पर घूमने के द्वारा शहरी

जीवन को अपना लिया है। हालाँकि, सभी प्रजातियाँ शहरी वातावरण के अनुकूल नहीं बन पाती हैं, जिससे जैव विविधता में गिरावट आती है। जिन विशेषज्ञ प्रजातियों को विशिष्ट आवास या आहार की आवश्यकता होती है, वे विशेष रूप से शहरीकरण के प्रति संवेदनशील होती हैं, क्योंकि उनके पारिस्थितिक क्षेत्र अक्सर बाधित होते हैं।

शहरी पारिस्थितिकी और मानव स्वास्थ्य के बीच संबंध जटिल और बहुआयामी है। शहरी वातावरण मानव स्वास्थ्य पर सकारात्मक और नकारात्मक दोनों तरह से प्रभाव डाल सकता है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि उन्हें कैसे प्रबंधित और डिज़ाइन किया गया है। शहरी पारिस्थितिकी तंत्र कई पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएं प्रदान करते हैं जो मानव स्वास्थ्य और कल्याण को लाभ पहुंचाते हैं। इन सेवाओं में वायु और जल शुद्धिकरण, तापमान विनियमन और मनोरंजन के अवसर शामिल हैं। शहरी क्षेत्रों में पेड़ और वनस्पति प्रदूषकों को अवशोषित करके और ऑक्सीजन जारी करके वायु की गुणवत्ता में सुधार करते हैं। हरे स्थान शहरी ताप द्वीप प्रभाव को कम करने, तापमान कम करने और गर्मी से संबंधित बीमारियों के जोखिम को कम करने में भी मदद करते हैं। इसके अतिरिक्त, पार्कों और प्राकृतिक क्षेत्रों तक पहुंच शारीरिक गतिविधि को बढ़ावा देती है, तनाव कम करती है और मानसिक स्वास्थ्य को बढ़ाती है। इसके विपरीत, खराब प्रबंधित शहरी वातावरण महत्वपूर्ण स्वास्थ्य जोखिम पैदा कर सकता है। वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण और जल प्रदूषण शहरों में आम समस्याएं हैं जो मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती हैं। वाहनों, औद्योगिक गतिविधियों और निर्माण से होने वाले वायु प्रदूषण से श्वसन संबंधी समस्याएं, हृदय संबंधी रोग और अन्य स्वास्थ्य समस्याएं हो सकती हैं। यातायात, निर्माण और अन्य शहरी गतिविधियों से उत्पन्न ध्वनि प्रदूषण, सुनने की क्षमता में कमी, नींद में खलल और तनाव के स्तर में वृद्धि का कारण बन सकता है। शहरी अपवाह, सीवेज और औद्योगिक निर्वहन से जल प्रदूषण से जलजनित बीमारियाँ हो सकती हैं और जलीय पारिस्थितिकी तंत्र बाधित हो सकता है।

स्थानीय पारिस्थितिकी तंत्र, जैव विविधता और मानव स्वास्थ्य पर शहरीकरण के नकारात्मक प्रभावों को कम करने के लिए, शहरों को स्थायी शहरी नियोजन और प्रबंधन प्रथाओं को अपनाना चाहिए। कई रणनीतियाँ इस लक्ष्य को हासिल करने में मदद कर सकती हैं। टिकाऊ शहरी वातावरण बनाने के लिए हरित बुनियादी ढांचे को लागू करना आवश्यक है। हरित बुनियादी ढांचे में हरी छतें, पारगम्य फुटपाथ, वर्षा उद्यान और शहरी आर्द्रभूमि शामिल हैं, जो तूफानी जल प्रबंधन, बाढ़ को कम करने और पानी की गुणवत्ता में सुधार करने में मदद करते हैं। ये सुविधाएँ वन्य जीवन के लिए आवास भी प्रदान करती हैं और शहरी सौंदर्य को बढ़ाती हैं। प्रभावी शहरी नियोजन और ज़ोनिंग नियम आवास विखंडन को कम कर सकते हैं और जैव विविधता को बढ़ावा दे सकते हैं। योजनाकारों को प्राकृतिक क्षेत्रों के संरक्षण को प्राथमिकता देनी चाहिए और हरित स्थानों को शहरी डिजाइनों में एकीकृत करना चाहिए। ज़ोनिंग नियमों का उपयोग महत्वपूर्ण आवासों की रक्षा और शहरी फैलाव को सीमित करने के लिए किया जा सकता है, जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि विकास टिकाऊ तरीके से हो। शहरी पारिस्थितिकी तंत्र की सुरक्षा और सतत विकास को बढ़ावा देने के लिए मजबूत पर्यावरण नीतियां और कानून महत्वपूर्ण हैं। सभी स्तरों पर सरकारों को ऐसे नियम बनाने और लागू करने चाहिए जो प्रदूषण को सीमित करें, प्राकृतिक क्षेत्रों की रक्षा करें और हरित बुनियादी ढांचे को बढ़ावा दें।

शहरी पारिस्थितिकी का क्षेत्र तेजी से विकसित हो रहा है, जो टिकाऊ और लचीले शहर बनाने की आवश्यकता से प्रेरित है। भविष्य के अनुसंधान और नवाचार शहरीकरण और जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न चुनौतियों का समाधान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे। रिमोट सेंसिंग, भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस), और पर्यावरण निगरानी जैसी प्रौद्योगिकी में प्रगति, शहरी पारिस्थितिकी प्रणालियों का अध्ययन और प्रबंधन करने की हमारी क्षमता को बढ़ा रही है। ये उपकरण शोधकर्ताओं को बेहतर निर्णय लेने की जानकारी देते हुए शहरी जैव विविधता, आवास गुणवत्ता और पर्यावरणीय स्थितियों पर डेटा एकत्र करने और विश्लेषण करने में सक्षम बनाते हैं। उदाहरण के लिए, शहरी जंगलों की निगरानी करने, वन्यजीवों की गतिविधियों पर नज़र रखने और हरित बुनियादी ढांचे की प्रभावशीलता का आकलन करने के लिए ड्रोन और उपग्रह इमेजरी का उपयोग किया जा रहा है। ये प्रौद्योगिकियां शहरी

पारिस्थितिकी प्रणालियों की गतिशीलता में मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करती हैं और संरक्षण की आवश्यकता वाले क्षेत्रों की पहचान करने में मदद करती हैं। चूँकि शहर जलवायु परिवर्तन के बढ़ते प्रभावों का सामना कर रहे हैं, इसलिए शहरी वातावरण को अधिक लचीला बनाना आवश्यक है। शहरी पारिस्थितिकी जलवायु अनुकूलन रणनीतियों को सूचित कर सकती है, जैसे बढ़ी हुई वर्षा को प्रबंधित करने के लिए हरित बुनियादी ढांचे को डिजाइन करना, वन्यजीवों की आवाजाही को सुविधाजनक बनाने के लिए हरित गलियारे बनाना और शहरी भूदृश्य के लिए जलवायु–लचीला पौधों की प्रजातियों का चयन करना।

शहरी पारिस्थितिकी एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है जो शहरों, स्थानीय पारिस्थितिकी तंत्र, जैव विविधता और मानव स्वास्थ्य के बीच जटिल संबंधों की जांच करता है। चूंकि शहरीकरण हमारी दुनिया को आकार दे रहा है, इसलिए टिकाऊ और लचीले शहरी वातावरण बनाने के लिए शहरों के पारिस्थितिक प्रभावों को समझना और संबोधित करना महत्वपूर्ण है। स्थायी शहरी नियोजन प्रथाओं को अपनाकर, हरित बुनियादी ढांचे को लागू करके, समुदायों को शामिल करके और मजबूत पर्यावरण नीतियों को लागू करके, शहर शहरीकरण के नकारात्मक प्रभावों को कम कर सकते हैं और जैव विविधता को बढ़ावा दे सकते हैं। भविष्य के अनुसंधान और नवाचार शहरी पारिस्थितिकी तंत्र को प्रबंधित करने और जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न चुनौतियों से निपटने की हमारी क्षमता को और बढ़ाएंगे। अंततः, शहरी विकास और प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र के बीच सामंजस्यपूर्ण सह–अस्तित्व संभव है, लेकिन इसके लिए समाज के सभी क्षेत्रों से ठोस प्रयास की आवश्यकता है। शहरी पारिस्थितिकी के सिद्धांतों को अपनाकर, हम ऐसे शहर बना सकते हैं जो न केवल मानव गतिविधि के संपन्न केंद्र हों बल्कि विभिन्न प्रजातियों के लिए जीवंत आवास और सभी के लिए स्वस्थ वातावरण भी हों।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंसः आधुनिक युग के विज्ञान और प्रौद्योगिकी का एक नया अध्याय

सूर्यांश बछेती और अर्चना बछेती
पर्यावरण विज्ञान विभाग, ग्राफ़िक एरा विश्वविद्यालय, देहरादून

यह वक्त उस समय को दर्शाता है जब मानवता तकनीकी उन्नति में अग्रसर है और मशीनों को बुद्धिमत्ता और निर्णय लेने की क्षमता प्रदान करने की कोशिश कर रही है। इस समय के चरण ने संवेदनशील और स्वयं सोचने युक्ति से भरपूर प्रणालियों की उत्पत्ति की है जो कार्यक्षमता और स्वयं निर्धारण क्षमता में सुधार करने का प्रयास कर रही हैं।

उन्होंने इंटेलिजेंट बिहेवियर और समस्या समाधान में कुशल मशीनें और कंप्यूटर प्रोग्राम बनाने के लक्ष्य का वर्णन करने के लिए 'आर्टिफीसियल इंटेलिजेंस' शब्द का उपयोग किया, एक लक्ष्य जो तब से एआई के क्षेत्र में केंद्रीय रहा है। भारत में, डॉ. राज रेड्डी को अक्सर 'आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के जनक' के रूप में जाना जाता है। वह एक भारतीय–अमेरिकी कंप्यूटर वैज्ञानिक हैं और एआई के क्षेत्र में अग्रणी शख्यितों में से एक हैं। डॉ. राज रेड्डी का जन्म भारत में हुआ था और बाद में वे संयुक्त राज्य अमेरिका चले गए, जहां उन्होंने एआई के शोध में महत्वपूर्ण योगदान दिया। डॉ. रेड्डी वाक् पहचान और प्राकृतिक भाषा प्रसंस्करण के क्षेत्र में अपने काम के लिए जाने जाते हैं। एआई और कंप्यूटर विज्ञान अनुसंधान में उनके योगदान के लिए उन्हें 1994 में ट्यूरिंग पुरस्कार मिला, जो कंप्यूटर विज्ञान के क्षेत्र में सर्वोच्च सम्मान में से एक है। उनके काम का भारत और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर एआई तकनीकी और उसके अनुप्रयोगके विकास पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है।

एआई की शुरुआत कब और किसने की?

एआई का जनक अमेरिका के कम्प्यूटर साइंटिस्ट जॉन मैकार्थी को माना जाता है. मैकार्थी ने 1956 में डॉर्टमाउथ कॉन्फ्रेंस का आयोजन किया था। इसी कॉन्फ्रेंस में उन्होंने पहली बार एआई के कॉन्सेप्ट और संभावनाओं पर चर्चा की थी. जॉन मैकार्थी के मुताबिक, एआई बुद्धिमान मशीनों, विशेष रूप से बुद्धिमान कंप्यूटर प्रोग्राम को बनाने का विज्ञान और इंजीनियरिंग है। जिसका मतलब है मशीनों द्वारा प्रदर्शित किया गया इंटेलिजेंस।

एआई की शुरुआत भले ही 1950 के दशक में हुई, लेकिन इसे पहचान 1980 के दशक की शुरुआत में मिली। 1981 में जापान ने इस तकनीक का इस्तेमाल करते हुए पांचवी पीढ़ी नाम की एक योजना की शुरुआत की। इसमें सुपर–कम्प्यूटर के विकास के लिए 10–वर्षीय कार्यक्रम की रूपरेखा प्रस्तुत की गई थी।

जापान के बाद दूसरे देशों का भी ध्यान इस ओर गया. ब्रिटेन ने इसके लिये 'एल्वी' नाम का एक प्रोजेक्ट बनाया। यूरोपीय यूनियन के देशों ने भी 'एस्प्रिट' नाम से एक कार्यक्रम की शुरुआत की थी। इसके बाद 1983 में कुछ निजी संस्थाओं ने मिलकर आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस पर लागू होने वाली उन्नत तकनीकों, जैसे– बहुत बड़े पैमाने पर एकीकृत सर्किट का विकास करने के लिये एक संस्था 'माइक्रो–इलेक्ट्रॉनिक्स एण्ड कंप्यूटर टेक्नोलॉजी' की स्थापना की।

ऑर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का इस्तेमाल

स्वास्थ्य सेवा क्षेत्रः में एआई का इस्तेमाल काफी तेजी से हो रहा है। कैंसर जैसी पुरानी बीमारियों से लेकर रेडियोलॉजी तक, सटीक नतीजों के लिए एआई का इस्तेमाल किया जा रहा है, जो इन बीमारियों से पीड़ित मरीजों की देखभाल करता है और साथ ही उनका सटीक इलाज ढूंढने में मदद कर रहा है। PathAI इसका एक अच्छा उदाहरण है। इसकी मदद से कैंसर डायग्नोसिस का सटीक डेटा मिलता है और इलाज में मदद मिलती है। वहीं एआई –माइक्रोस्कोप की मदद से जानलेवा रक्त रोगों का भी सटीक डेटा मिल सकता है। एआई एल्गोरिथम का इस्तेमाल मेडिकल इमेजिंग जैसे– एक्सरे, सीटी स्कैन,

एमआरआई स्कैन में हो रहा है। इनके अलावा स्वास्थ्य से संबंधी सेवाओं में कस्टमर सर्विस चौटबोट, वर्चुअल हेल्थ असिस्टेंट, मेडिकल रिकॉर्ड के मैनेजमेंट, सर्जरी, ड्रग डिस्कवरी और डेवलपमेंट समेत कई सारी मेडिकल सेवाओं में एआई बहुत उपयोगी है।

शिक्षा क्षेत्रः में एआई ने जबरदस्त बदलाव लाए हैं, जो छात्रों और संस्थानों दोनों के लिए फायदेमंद हैं। एआई–संचालित असिस्टेंट की बदौलत छात्र अब शिक्षकों से संपर्क किए बिना शैक्षिक संसाधनों का इस्तेमाल कर सकते हैं।

वैयक्तिकृत सीखने का अनुभव उपलब्ध कराने के लिए एआई एल्गोरिथम का इस्तेमाल किया जा रहा है, जिससे हर एक स्टूडेंट के लिए कस्टमाइज पाठ्यक्रम और सीखने की गति प्रोवाइड किया जा रहा है।

कृषि उद्योगः में एआई, कृषि उद्योग में क्षमता, उत्पादकता और स्थिरता को बढ़ाकर क्रांतिकारी बदलाव ला रहा है। परिशुद्ध खेती में एआई काफी कारगर है. परिशुद्ध खेती में डिजिटल कृषि प्रौद्योगिकियों का उपयोग करके फसल की उत्पादकता में वृद्धि करने का प्रयास किया जाता है। इस तरह की खेती में एआई सेंसर, ड्रोन और उपग्रहों से डेटा का विश्लेषण करता है और किसानों को वास्तविक समय के आंकड़ों के आधार पर पानी, उर्वरक और कीटनाशकों के इस्तेमाल की सही जानकारी देता है। एआई एल्गोरिथम फसलों की कमजोरी, बीमारी के प्रकोप या पोषक तत्वों की कमी की पहचान कर सकता है, जिससे किसान समय पर कार्रवाई करके बर्बादी को कम कर सकते हैं।

वित्त क्षेत्रः में एआई, वित्तीय लेनदेन में फ्रॉड की जांच और रोकथाम, एल्गोरिथम ट्रेडिंग, क्रेडिट स्कोरिंग और जोखिम मूल्यांकन के लिए उपयोग किया जाता है। एआई से संचालित चौटबॉट कस्टमर सेवा में तेजी से और सटीक जवाब देने के लिए इस्तेमाल होते हैं।

विपणन एवं विज्ञापन क्षेत्रः में एआई, वैयक्तिकृत विज्ञापन देने के लिए यूजर की प्राथमिकताओं और व्यवहार का विश्लेषण करके टारगेटेड विज्ञापन में मदद करता है। प्राकृतिक भाषा प्रसंस्करण एल्गोरिथम ग्राहकों की पसंद–नापसंद को समझने और ब्रांड इमेज में सुधार करने के लिए सोशल मीडिया डेटा का विश्लेषण करता है।

परिवहन क्षेत्रः में एआई, ऑटोमैटिक वाहनों के साथ क्रांति ला रहा है। एआई एल्गोरिथम नेविगेशन और यातायात प्रबंधन में मदद करते हैं. ये वाहनों के रखरखाव, डाउनटाइम को कम करने और सुरक्षा बढ़ाने में भी सक्षम बनाता है।

साइबर सुरक्षाः में एआई जरूरत बन चुका है। साइबर सुरक्षा में एआई का इस्तेमाल नेटवर्क ट्रैफिक में पैटर्न और विसंगतियों की पहचान करने के लिए ज्यादा किया जा रहा है ताकि संभावित हमलों से बचा जा सके। ये प्रयोक्ता प्रमाणीकरण और धोखाधड़ी का पता लगाने में भी मदद करता है।

रक्षा क्षेत्रः में एआई बहुत तेजी से प्रासंगिक हो चुका है और इसमें सैन्य अभियानों के विभिन्न पहलुओं को बदलने की क्षमता है। सेना के अलग–अलग एक्सरसाइज में ऑटोमैटिक गाड़ियां, ड्रोन और रोबोट विकसित करने के लिए एआई का उपयोग किया जा रहा है। ये सिस्टम इंसानों के डायरेक्ट हस्तक्षेप के बिना सैन्य प्रशिक्षण, निगरानी, लक्ष्य प्राप्ति और यहां तक कि युद्ध संचालन जैसे कार्य भी कर सकता है। इनके अलावा एआई का इस्तेमाल रिटेल, मैन्युफैक्चरिंग जैसे क्षेत्रों में भी तेजी से हो रहा है।

एआई के फायदे

एआई विभिन्न क्षेत्रों में तेजी से प्रचलित हो गया है और इससे कई लाभ हुए हैं। एआई की सबसे बड़ी खासियत स्वचालन है और इसका संचार, परिवहन, उपभोक्ता उत्पादों और सेवा उद्योगों पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है। स्वचालन से न केवल इन क्षेत्रों में उत्पादकता में वृद्धि होती है, बल्कि कच्चे माल का अधिक कुशल उपयोग, बेहतर उत्पाद की गुणवत्ता, कम लीड समय और बेहतर सुरक्षा भी मिलती है। स्वचालन उन संसाधनों को मुक्त करने में मदद कर सकता है जिनका उपयोग अधिक महत्वपूर्ण चीजों के लिए किया जा सकता है।

एआई का उपयोग हमेशा बेहतर फैसले लेने के लिए किया जाता रहा है। एआई तकनीक, डेटा डिलिवरी का समन्वय कर सकती है, रुझानों का विश्लेषण कर सकती है, पूर्वानुमान प्रदान कर सकती है और सबसे बेस्ट फैसले लेने के लिए अनिश्चितताओं की संख्या बता सकती है। जब तक एआई को मानवीय भावनाओं की नकल करने के लिए प्रोग्राम नहीं किया जाता है, तब तक यह मामले पर निष्पक्ष

रहेगा और व्यावसायिक दक्षता का समर्थन करने के लिए सही फैसला लेने में मदद करेगा।

इसके अलावा अलग–अलग क्षेत्रों में नए–नए खोजों में मदद करना, रोजमर्रा के जीवन को आसान बनाने से लेकर AI कई मायनों में काफी उपयोगी है.

एआई के नुकसान

एआई के कई तरह के फायदे हैं तो इसके नुकसान भी हैं।

नौकरियां खत्म होने का खतराः एआई में पारंपरिक रूप से किए जाने वाले कार्यों को स्वचालित करने की क्षमता है, जिससे कुछ उद्योगों में लोगों की नौकरियां जा सकती हैं और बेरोजगारी पैदा हो सकती है। जैसे– कस्टमर सपोर्ट के लिए बनाए गए चौटबोट अगर 100% सफल होते हैं तो कंपनियां इसके लिए नौकरियां निकालना बंद कर देंगी। इसी तरह का खतरा दूसरी कई नौकरियों के साथ भी है। सबसे ज्यादा खतरा फिल्मिंग और ग्राफिक डिजाइनिंग से जुड़े लोगों पर होगा, क्योंकि इस फील्ड में तेजी से एआई का इस्तेमाल हो रहा है और इसके नतीजे भी आश्चर्यजनक हैं।

पूर्वाग्रह और निष्पक्षताः जिस डेटा पर एआई प्रणाली को ट्रेनिंग दी जाती है, उसमें मौजूद पूर्वाग्रह भी उसके साथ बने रह सकते हैं, जिसके भेदभावपूर्ण नतीजे हो सकते हैं। यदि सावधानीपूर्वक डिजाइन और निगरानी नहीं की गई, तो एआई एल्गोरिथम सामाजिक असमानताओं और पूर्वाग्रहों को मजबूत कर सकते हैं, जिसका असर एआई की फैसले लेने की क्षमता पर पड़ सकता है। जहां मानवीय मूल्यों और भावनाओं की बात होगी, वहां भी एआई के फैसले से नुकसान होने की आशंका ज्यादा है।

निजी सुरक्षा पर खतराः जहां एक ओर एआई निजी सुरक्षा के लिए मददगार साबित हो सकता है तो वहीं यही सिस्टम निजी सुरक्षा को नुकसान भी पहुंचा सकता है। क्योंकि पूरा एआई सिस्टम डेटा पर निर्भर होगा, इसलिए इंटरनेट का इस्तेमाल करने वाले सभी लोगों की प्राइवेसी पर इसका दुष्प्रभाव पड़ सकता है।

एआई में मानवीय संवेदनाएं नहीं होंगी, इसलिए इस तरह के मामलों में इसका इस्तेमाल करना घातक साबित हो सकता है। साथ ही इस पर बहुत ज्यादा निर्भर रहना भी नुकसानदेह हो सकता है। ये इंसान को आलसी बना सकता है, जिसका असर आने वाली पीढ़ियों पर पड़ सकता है।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस को लेकर सरकार को सतर्क रहना होगा। मशीनीकरण के माध्यम से आए बदलावों से सबसे ज्यादा प्रभावित वे लोग होते हैं जो अपनी कौशल क्षमता में तय समय के अंदर जरूरी सुधार लाने में असमर्थ होते हैं। इसलिए सरकार को चाहिये कि ऐसे लोगों को पर्याप्त ट्रेनिंग देने के लिये समय के साथ–साथ संसाधन भी उपलब्ध कराए। तकनीकों के इस बदलते दौर में ज़रूरत इस बात की है कि विशेषज्ञतापूर्ण कार्यों के लिये लोगों को कुशल बनाया जाए और इसके लिये इंफ्रास्ट्रक्चर का भी विकास किया जाए।

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार–अर्थ, महत्व और इसके स्वरूप

श्वेता त्यागी
शिमला बाईपास, देहरादून

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार एक महत्वपूर्ण आर्थिक गतिविधि है जिसमें विभिन्न देशों के बीच वस्तुओं और सेवाओं का आदान–प्रदान शामिल होता है। यह व्यापार किसी भी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को प्रगति के पथ पर ले जाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह लेख अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के अर्थ, महत्व और इसके विभिन्न स्वरूपों पर विस्तृत चर्चा करेगा।

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का अर्थ

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से विभिन्न देशों के बीच वस्तुओं, सेवाओं, पूंजी, और प्रौद्योगिकी का आदान–प्रदान होता है। यह प्रक्रिया देशों को अपनी विशेषताओं और संसाधनों के आधार पर उत्पादन करने और उन वस्तुओं एवं सेवाओं का व्यापार करने की अनुमति देती है जिनमें वे दक्ष होते हैं। इस प्रकार, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार वैश्विक बाजार को एकीकृत करता है और देशों को आर्थिक रूप से लाभान्वित करता है।

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का महत्व

1. आर्थिक विकास और समृद्धि

   अंतर्राष्ट्रीय व्यापार आर्थिक विकास का एक प्रमुख स्रोत है। यह देशों को अपने उत्पादन को बढ़ाने, नवाचार को प्रोत्साहित करने, और रोजगार के अवसर उत्पन्न करने में सहायता करता है। व्यापार के माध्यम से देशों को उच्च गुणवत्ता वाले उत्पाद और सेवाएँ प्राप्त होती हैं, जिससे उनकी जीवन स्तर में सुधार होता है।

2. संसाधनों का अनुकूल उपयोग

   प्रत्येक देश के पास विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक संसाधन होते हैं। अंतर्राष्ट्रीय व्यापार इन संसाधनों के अनुकूल और कुशल उपयोग को संभव बनाता है। यह देशों को उन उत्पादों का निर्माण करने में सक्षम बनाता है जिनमें वे विशिष्टता रखते हैं और अन्य देशों के साथ उन उत्पादों का व्यापार करते हैं जिनमें वे विशेष योग्यता नहीं रखते।

3. वैश्विक प्रतिस्पर्धा और नवाचार

   अंतर्राष्ट्रीय व्यापार वैश्विक प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देता है, जो नवाचार और गुणवत्ता में सुधार को प्रेरित करता है। कंपनियाँ अंतर्राष्ट्रीय बाजार में प्रतिस्पर्धा के लिए उच्च गुणवत्ता वाले उत्पादों का उत्पादन करती हैं, जिससे उपभोक्ताओं को बेहतर विकल्प और सस्ती कीमतें मिलती हैं।

4. सांस्कृतिक और सामाजिक प्रभाव

   अंतर्राष्ट्रीय व्यापार सांस्कृतिक आदान–प्रदान और सामाजिक संबंधों को भी बढ़ावा देता है। विभिन्न देशों के बीच व्यापारिक संबंधों के माध्यम से सांस्कृतिक धरोहर और सामाजिक मूल्यों का प्रसार होता है, जो वैश्विक समुदाय को अधिक समृद्ध और विविध बनाता है।

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के स्वरूप

1. द्विपक्षीय और बहुपक्षीय व्यापार

   अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को द्विपक्षीय और बहुपक्षीय आधार पर विभाजित किया जा सकता है। द्विपक्षीय व्यापार दो देशों के बीच होता है, जबकि बहुपक्षीय व्यापार कई देशों के बीच होता है। बहुपक्षीय व्यापार समझौतों और संगठनों जैसे विश्व व्यापार संगठन के माध्यम से संचालित होता है।

2. वस्तु व्यापार

   वस्तु व्यापार अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का एक महत्वपूर्ण स्वरूप है जिसमें कच्चे माल, अर्धनिर्मित और निर्मित वस्तुओं का आदान–प्रदान शामिल होता है। उदाहरण के लिए, तेल, धातु, कृषि उत्पाद, और औद्योगिक सामानों का व्यापार प्रमुख रूप से वस्तु व्यापार का हिस्सा है।

3. सेवा व्यापार

   सेवा व्यापार में विभिन्न प्रकार की सेवाओं का आदान–प्रदान शामिल होता है, जैसे कि वित्तीय सेवाएँ, परिवहन सेवाएँ, स्वास्थ्य सेवाएँ, और सूचना प्रौद्योगिकी

सेवाएँ। सेवा व्यापार का महत्व लगातार बढ़ रहा है और यह आधुनिक वैश्विक अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन गया है।

4. विदेशी प्रत्यक्ष निवेश

विदेशी प्रत्यक्ष निवेश अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का एक और प्रमुख स्वरूप है जिसमें एक देश की कंपनियाँ या व्यक्ति दूसरे देश में निवेश करते हैं। एफडीआई का उद्देश्य विभिन्न देशों के बीच आर्थिक संबंधों को मजबूत करना और विभिन्न परियोजनाओं के माध्यम से विकास को प्रोत्साहित करना होता है।

5. ई–कॉमर्स

ई–कॉमर्स ने अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को नई ऊंचाइयों पर पहुंचाया है। इंटरनेट और डिजिटल प्रौद्योगिकी के माध्यम से वस्तुओं और सेवाओं का अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ऑनलाइन व्यापार होता है। ई–कॉमर्स ने व्यापार को अधिक सुगम और सुलभ बना दिया है, जिससे छोटे और मध्यम उद्यमों को भी वैश्विक बाजार में प्रवेश करने का अवसर मिला है।

वैश्विक व्यापार संगठन और समझौते

1. विश्व व्यापार संगठन

विश्व व्यापार संगठन एक वैश्विक संगठन है जो अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के नियमों और विनियमों को स्थापित और प्रबंधित करता है। विश्व व्यापार संगठन का उद्देश्य सदस्य देशों के बीच व्यापारिक विवादों को सुलझाना, व्यापार में बाधाओं को कम करना और वैश्विक व्यापार को प्रोत्साहित करना है।

2. क्षेत्रीय व्यापार समझौते

क्षेत्रीय व्यापार समझौते विभिन्न क्षेत्रों के देशों के बीच व्यापारिक संबंधों को मजबूत करने के लिए बनाए जाते हैं। इनमें यूरोपीय संघ, उत्तरी अमेरिकी मुक्त व्यापार समझौता, और आसियान जैसे संगठन शामिल हैं। ये समझौते सदस्य देशों के बीच व्यापारिक शुल्कों को कम करते हैं और व्यापार को अधिक सुगम बनाते हैं।

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के लाभ और चुनौतियाँ

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के लाभ

1. अर्थव्यवस्था में वृद्धिः अंतर्राष्ट्रीय व्यापार देशों की अर्थव्यवस्था में वृद्धि करता है। यह देशों को अपने उत्पादों और सेवाओं के लिए नए बाजार खोजने का अवसर प्रदान करता है।
2. व्यापारिक अवसरः यह व्यापारिक अवसरों को बढ़ावा देता है और नए उद्यमों के लिए रास्ते खोलता है।
3. विदेशी निवेशः अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के माध्यम से देश विदेशी निवेश आकर्षित कर सकते हैं, जो आर्थिक विकास के लिए महत्वपूर्ण है।
4. नौकरी के अवसरः व्यापार के माध्यम से नई नौकरियों का सृजन होता है, जो बेरोजगारी की समस्या को कम करता है।
5. तकनीकी उन्नतिः अंतर्राष्ट्रीय व्यापार देशों को नवीनतम तकनीकी उन्नति से अवगत कराता है, जिससे उनकी उत्पादन क्षमता बढ़ती है।

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के नुकसान

1. आर्थिक असमानताः यह व्यापारिक असमानता को बढ़ावा दे सकता है, जिसमें कुछ देश अत्यधिक लाभान्वित होते हैं जबकि अन्य देश पिछड़ जाते हैं।
2. स्थानीय उद्योगों पर प्रभावः यह स्थानीय उद्योगों पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकता है, खासकर जब उन्हें सस्ती विदेशी वस्तुओं से प्रतिस्पर्धा करनी पड़ती है।
3. आयात निर्भरताः अत्यधिक आयात निर्भरता से देश की अर्थव्यवस्था पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है, खासकर जब विदेशी मुद्रा की कमी हो।
4. पर्यावरणीय प्रभावः अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के कारण होने वाले परिवहन से पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है, जिसमें प्रदूषण और प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन शामिल है।

निष्कर्ष

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार वैश्विक अर्थव्यवस्था का एक अभिन्न हिस्सा है जो देशों को आर्थिक विकास, नवाचार, और सामाजिक समृद्धि की ओर ले जाता है। इसके विभिन्न स्वरूप और समझौते देशों के बीच व्यापारिक संबंधों को मजबूत करते हैं और वैश्विक समुदाय को एकीकृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यद्यपि अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में कुछ चुनौतियाँ हैं, इसके लाभ इसके महत्व को स्पष्ट करते हैं और इसके निरंतर विकास की आवश्यकता को रेखांकित करते हैं।

पाचन स्वास्थ्य और नींद की गुणवत्ता में सुधार में योग चिकित्सा की भूमिका

पूनम पांचाल
योग विज्ञान एवं प्राकृतिक चिकित्सा
एस.जी.आर.आर. विश्वविद्यालय देहरादून

आधुनिक जीवन शैली में, कम रेशे वाले और गहरा तला हुआ भोजन पाचन में समस्याओं का कारण बनता है। इसलिए, जीवन शैली और स्वास्थ्य की गुणवत्ता में सुधार करने के लिए, या तो आवश्यक आहार में परिवर्तन या योग और व्यायाम को दैनिक दिनचर्या में शामिल करें। गैस्ट्रिक समस्याएं अल्सर, रक्तस्राव, कब्ज, पेट की तकलीफ आदि जैसी जटिल समस्याएं बढ़ती है वैसे वैसे दैनिक जीवन में योग को शामिल करना कई सामान्य पाचन तंत्र के मुद्दों के लिए सबसे प्रभावी उपचार हो सकता है। अकेला योग ही पाचन तंत्र पर अत्यधिक फायदेमंद है जो अप्रत्यक्ष रूप से पेट, आंत, यकृत और अग्न्याशय के साथ–साथ गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल (जीआई) ट्रैक को प्रोत्साहित करता है। यह आंतरिक मांसपेशियों, आंतरिक अंगों, अंग प्रणाली को मजबूत बनाता है और रक्त और ऑक्सीजन के प्रवाह को सुनिश्चित करता है।

ऐसे कई रोग हैं जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से पाचन तंत्र को प्रभावित करते हैं जैसे कि कोलैंजाइटिस, गैलस्टोन रेक्टल मुद्दे जैसे प्रोक्टिटिस, हेमरोइड, गुदा फिशर और ओसोफैगस के साथ रेक्टल प्रोलैप्ड मुद्दे, जिसमें स्ट्रिक्चर (संकुचन), पेट के मुद्दे, जैसे गैस्ट्रिटिस संक्रमण के कारण गैस्ट्रिक अल्सर, यकृत विफलता, पॉलीप और ट्यूमर, संक्रमण, लघु आंत्र सिंड्रोम आदि सहित पाचन पथ के साथ अग्नाशयी स्यूडो–सिस्ट पैदा करता हैं ।

यदि हम भारत की बुजुर्ग आबादी की बात करे तो उन्हे कई चिकित्सा मुद्दों का सामना करना पड़ता है, जिसमें संचारी और गैर–संचारी दोनों बीमारियां शामिल हैं। बुजुर्ग आबादी पर अध्ययन उच्च रक्तचाप, मधुमेह मेलिटस, गठिया, मोटापा आदि जैसी पुरानी गैर–संचारी बीमारियों में तेज वृद्धि को दर्शाता है। इसके अलावा, प्रतिरक्षा में कमी इस आबादी को संक्रामक रोगों के लिए भी अधिक संवेदनशील बनाती है। वृद्धावस्था गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल सिस्टम की कार्यक्षमता को भी प्रभावित करती है।

कब्ज और नींद में गड़बड़ी आमतौर पर बुजुर्ग आबादी को प्रभावित करती है जिसके परिणामस्वरूप शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है। मन और शरीर से संबंधित गतिविधियाँ जैसे योग अभ्यास न केवल मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य में सुधार करते हैं बल्कि स्वस्थ उम्र बढ़ने को भी बढ़ावा देते हैं। एक केस स्टडी मे बुजुर्गों के बीच नींद और कब्ज से संबंधित जीवन की गुणवत्ता पर 3 महीने के योग अभ्यास के प्रभाव का मूल्यांकन किया।

योग लोकप्रिय गैर–औषधीय हस्तक्षेपों में से एक है जिसने अपने समग्र दृष्टिकोण और चिकित्सीय क्षमता के कारण सार्वभौमिक ध्यान प्राप्त किया है। योग मन और शरीर के एकत्व को संदर्भित करता है और बड़े पैमाने पर बड़े वयस्कों को लाभान्वित करता है। इससे कार्डियो–चयापचय स्वास्थ्य, मूड, नींद में सुधार और शरीर के संतुलन और गतिशीलता में सुधार जैसे सिद्ध लाभ हुए हैं। वर्तमान अध्ययन से पता चलता है कि 3 महीने तक योग–अभ्यास से बुजुर्ग आबादी में कब्ज और नींद से संबंधित जीवन की गुणवत्ता में सुधार हो सकता है। कई अध्ययनों का दावा किया कि वृद्ध आबादी में कब्ज से संबंधित रोगों को ठीक करने के लिए योग एक प्रभावशाली प्रक्रिया है जिससे जीवन की गुणवत्ता मे सुधार आता है।

परिणाम बताते हैं कि योग कब्ज और अनिद्रा जैसे बुढ़ापे से संबंधित मुद्दों को कम कर सकता है। यह वृद्ध आबादी में कब्ज और नींद से संबंधित जीवन की गुणवत्ता में सुधार के

लिए योग को एक दैनिक अभ्यास के रूप में शामिल करने के लिए उत्साहजनक है।

पाचन तंत्र में सुधार के लिए योग आसन

लेखकों ने योग की विभिन्न मुद्राओं पर चर्चा की है जो हमारे पाचन तंत्र के लिए सीधे फायदेमंद हैं। इनमें अपानासन भी शामिल है, जो संस्कृत का एक शब्द है जिसका अर्थ 'विंड रिलीविंग पोज' है । इसके बावजूद कई ऐसे आसन हैं जो पाचन में सुधार करते हैं जैसे कि परिवृत्त त्रिकोणासन, मरिच्यासन, सेतु बांधा सर्वांगासन, पश्चिमोत्तनासन, बालासन, उत्तानासन, अधो मुख स्वनासन, उत्तानसा, मांसपेशियों को घूमते हुए फैलाता और संपीड़ित करता है । इन आसनों का एक और बहुत ही महत्वपूर्ण प्रभाव तनाव को कम करना और तंत्रिका तंत्र के स्वास्थ्य में सुधार करना है। ये आसन सीधे पेट और आंत क्षेत्रों पर क्रिया करते हैं।

योगिक उपचार

आयुर्वेद के अनुसार सभी बुराइयों की जड़ खराब पाचन है। इसलिए, हमें भोजन को ठीक से चयापचय करने के लिए एक मजबूत पाचन को बनाए रखना चाहिए। अन्यथा हमारा शरीर पोषक तत्वों को निगलने और अवशोषित करने के लिए संघर्ष करेगा। योग की मुद्रा और खिंचाव पेट की मांसपेशियों को उत्तेजित करते हैं जिसके परिणामस्वरूप पाचन चयापचय में सुधार होता है। यह पेट के मुद्दों को कम करेगा, आंत्र गति को नियंत्रित करेगा और बेहतर पाचन को त्वरित करेगा। नियमित योग अभ्यास शरीर के लचीलेपन को बढ़ाता है, वसा संचय और शरीर के मादक द्रव्य को रोकता है। एक संतुलित आहार लेने से पाचन आसान हो जाता है।

निष्कर्ष

अतः यह स्पष्ट हैं कि पुराने कब्ज और नींद विकारों के प्रबंधन में यदि योग को शामिल कर लिया जाए तो परिणाम उत्साहजनक और विचारोत्तेजक होते हैं। खासकर बुजुर्गों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार कर सकता है। अपने बहु–प्रणाली प्रभाव के कारण योग ऐसे व्यक्तियों में जो शारीरिक रूप से फिट नहीं है ऐसे बुजुर्ग आबादी के समूहों के लिए फायदेमंद हो सकता है। हालांकि, जिस गति से अनिद्रा और पाचन संबंधी बीमारियां बढ़ रही हैं, भविष्य मे नए योग प्रोटोकॉल डिजाइन करने की आवश्यकता होगी।

रोबोट को विकसित करने के तकनीकी तरीके

संजय गोस्वामी
यमुना जी/13, अणुशक्ति नगर, मुंबई

शब्द 'रोबोट' चेक शब्द 'रॉबिट' और स्लाव मूल 'रोबोटा' से आया है, जिसका अर्थ है काम और दास श्रम। रोबोटिक्स में विभिन्न प्रकार के कार्य शामिल होते हैं, जैसे नए अनुप्रयोगों को डिजाइन करना, बनाए रखना, विकसित करना और शोध करना। इस क्षेत्र में इलेक्ट्रॉनिक्स, यांत्रिकी और कंप्यूटर विज्ञान जैसे संबंधित विषयों के ज्ञान की आवश्यकता होती है। रोबोटिक्स इंजीनियरिंग कंप्यूटर विज्ञान की एक शाखा है जिसमें डिजाइनिंग, रखरखाव, नए अनुप्रयोगों को विकसित करना और रोबोटों पर शोध करना शामिल है। कंप्यूटर का उपयोग रोबोटिक्स में हेरफेर और प्रोसेसिंग के लिए किया जाता है। रोबोटिक्स इंजीनियरिंग शाखा डिजाइन निर्देश, संचालन परीक्षण, सिस्टम रखरखाव और मरम्मत सहित रोबोट को विकसित करने और उपयोग करने के लिए मौलिक इंजीनियरिंग सिद्धांतों और तकनीकी कौशल सिखाती है। एक रोबोट एक स्व–नियंत्रित री–प्रोग्रामेबल मशीन है जो विभिन्न प्रकार के कार्य कर सकता है, जिसमें गतिमान के साथ या उसके बिना औद्योगिक स्वचालन अनुप्रयोग शामिल हैं। रोबोटिक्स की शाखा के अंतर्गत आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का भी अध्ययन किया जाता है, जिसमें कंप्यूटर प्रोग्राम बनाना शामिल है जो समस्याओं को हल कर सकता है। दो मुख्य अनुसंधान धाराएँ हैंः जैविक और घटना संबंधी। जैविक धारा इस विचार पर आधारित है कि मनुष्य सबसे बुद्धिमान है, इसलिए रोबोट को मानव मनोविज्ञान या शरीर संरचना के अनुरूप बनाया जाना चाहिए। फेनोमेनोलॉजिकल स्ट्रीम दुनिया के बारे में सामान्य ज्ञान की चीजों के अध्ययन पर केंद्रित है। रोबोटिक्स कंप्यूटर विज्ञान का एक क्षेत्र है जो मशीनों को बनाने के लिए इलेक्ट्रॉनिक्स, यांत्रिकी और कंप्यूटर विज्ञान जैसे संबद्ध क्षेत्रों से ज्ञान को शामिल करता है जो मानव जैसी बुद्धि का अनुकरण कर सकता है। इस बहु–विषयक क्षेत्र में कंप्यूटर विज्ञान, तंत्रिका विज्ञान और मनोविज्ञान जैसे विषय शामिल हैं, और इसके अनुप्रयोग परमाणु विज्ञान, बायोमेडिकल उपकरण डिजाइन और सैन्य संचालन को शामिल करने के लिए विनिर्माण से परे हैं। आधुनिक रोबोट कंप्यूटर प्रोग्राम या इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों द्वारा निर्देशित इलेक्ट्रो–मैकेनिकल मशीनें हैं जो सर्जरी से लेकर स्प्रे–पेंटिंग तक के कार्य कर सकते हैं। रोबोटिक्स का संबंध रोबोट और कंप्यूटर सिस्टम के डिजाइन, निर्माण और उनके नियंत्रण, संवेदी प्रतिक्रिया और सूचना प्रसंस्करण के लिए संचालन से है। हालांकि इस बात पर कोई सहमति नहीं है कि मशीनें रोबोट के रूप में योग्य हैं या नहीं, उन्हें आम तौर पर मानव और पशु व्यवहार की नकल करने और चलने, ऑपरेटिंग मशीनरी और बुद्धिमान व्यवहार प्रदर्शित करने जैसे कार्यों को करने में सक्षम माना जाता है। रोबोट और उनके विकास का इतिहास एक लंबी अवधि तक फैला हुआ है, लेकिन 20वीं शताब्दी तक पूरी तरह से स्वायत्त मशीनों का निर्माण नहीं हुआ था। इस तरह का पहला रोबोट यूनिमेट था, जो एक डिजिटल सिस्टम पर चलता था और इसे मुद्रांकन मशीन में स्टैकिंग के लिए धातु के गर्म टुकड़ों को लेने के लिए प्रोग्राम किया गया था। आज, कम लागत, उच्च सटीकता और विश्वसनीयता के कारण रोबोट का व्यावसायिक और औद्योगिक सेटिंग्स में व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। वे ऐसे कार्य करने में सक्षम हैं जो मनुष्यों के लिए बहुत कठिन, खतरनाक, अरुचिकर, उबाऊ या थका देने वाले हैं। विनिर्माण, परिवहन, अन्वेषण, शल्य चिकित्सा, हथियार निर्माण, प्रयोगशाला अनुसंधान, और उपभोक्ता और औद्योगिक उत्पादन सहित विभिन्न उद्योगों में रोबोट का उपयोग किया जाता है। कुछ रोबोट सिर्फ ऑर्थोगोनल मूवमेंट से अधिक सक्षम हैं, जिसमें कई जोड़ होते हैं जो उन्हें मानव बाहों की तरह कार्य करने की सुविधा देते हैं। व्यक्त भागों की गति के लिए उच्च परिशुद्धता और स्थिरता की आवश्यकता होती है। शोधकर्ताओं ने हजारों सूक्ष्म रोबोट विकसित किए हैं जो खोज, सफाई और जासूसी जैसे कार्यों को करने के लिए चींटियों और

मधुमक्खियों की कॉलोनियों की तरह एक साथ काम करते हैं। यद्यपि प्रत्येक रोबोट सरल है, एक झुंड का आकस्मिक व्यवहार जटिल है और चींटियों के सुपरऑर्गेनिज्म झुंड बुद्धि के समान एक वितरण प्रणाली के रूप में सोचा जा सकता है। झुंड रोबोट तब भी काम कर सकते हैं जब कई रोबोट विफल हो जाते हैं, जिससे वे अंतरिक्ष अन्वेषण के लिए आकर्षक बन जाते हैं। इंजीनियरों ने अपनी गतिशीलता बढ़ाने के लिए पहिएदार और पैर वाले रोबोट विकसित किए हैं। पहिएदार रोबोट सरल और प्रोग्राम करने में आसान होते हैं लेकिन चट्टानी इलाके और खड़ी चढ़ाई जैसी बाधाओं से जूझते हैं। हालांकि, वे अपनी कम कीमत और अलग स्टीयरिंग के कारण लोकप्रिय हैं। सैन्य अभियानों में इस्तेमाल होने वाले मोबाइल रोबोटों को महत्वपूर्ण बाधाओं को पार करना होगा। शोधकर्ता अनिश्चित वातावरण को नेविगेट करने के लिए तंत्रिका नेटवर्क का उपयोग करके बुद्धिमान नियंत्रण रणनीतियों को विकसित करने पर ध्यान केंद्रित करते हैं क्योंकि मोबाइल रोबोट को केवल संयुक्त कोणों से नहीं पहचाना जा सकता है और स्थान अपडेट की आवश्यकता होती है। रोबोटिक्स में रोबोट का डिजाइन, निर्माण और संचालन शामिल है, जिसके लिए इलेक्ट्रॉनिक्स, यांत्रिकी, सॉफ्टवेयर और अन्य क्षेत्रों में विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है। रोबोट की विविधता के बावजूद, वे एक चल यांत्रिक संरचना और आत्म–नियंत्रण जैसी सामान्य विशेषताएं साझा करते हैं। एक रोबोट के फ्रेम की तुलना मानव कंकाल से की जा सकती है और इसे एक शुद्ध–गति श्रेणी माना जाता है, जिसमें एक्ट्यूएटर्स, मोटर्स और सेंसर शामिल होते हैं जो कार्य को सक्षम करते हैं। एक्ट्यूएटर्स रोबोट को आगे बढ़ाने के लिए जिम्मेदार हैं और इसकी तुलना इसकी मांसपेशियों से की जा सकती है। आमतौर पर, इस उद्देश्य के लिए इलेक्ट्रिक मोटर्स का उपयोग किया जाता है, लेकिन वैकल्पिक ड्राइविंग बलों को भी नियोजित किया जाता है। उदाहरण के लिए, एक सरल लेकिन शक्तिशाली रोबोटिक पैर, जो रोबोट की हड्डियों को चलाने के लिए खींचने और फैलाने के लिए गियर की तरह काम करने के लिए हवा के दबाव का उपयोग करता है। यह जैविक मांसपेशियों के व्यवहार की काफी बारीकी से नकल करता है। गियर दांतों के साथ यांत्रिक घटक होते हैं, जिन्हें अन्य दांतों के साथ जाल बनाने और शक्ति और गति संचारित करने के लिए डिज़ाइन किया गया है। उनका उपयोग रोबोटिक्स में धुरों के बीच घूर्णी बलों को स्थानांतरित करने, आवश्यकतानुसार गति और दिशा बदलने के लिए किया जा सकता है। जबकि धुरों को किसी भी तरह से उन्मुख नहीं किया जा सकता है, दो गीयर सभी संभव झुकाव प्राप्त कर सकते हैं। रोबोटिक्स में गियर का एक सामान्य उपयोग मोटर की गति को धीमा करना है। अधिकांश रोबोट में डीसी मोटर्स का उपयोग किया जाता है, जो आसानी से सुलभ होते हैं और दोनों दिशाओं में तेज़ी से गति करते हुए चल सकते हैं। दूसरी ओर, स्टेपर मोटर्स, चरणों में घूमती हैं और उनके कोणीय स्थिति को निर्धारित करने के लिए सिग्नल की आवश्यकता के बिना पूर्वानुमेय नियंत्रण होता है। अल्ट्रासोनिक या पीजो मोटर्स सूक्ष्म 'पैरों' के कंपन से संचालित होते हैं और नैनोमीटर स्तर पर नियंत्रण और गति के लिए अत्यधिक शक्तिशाली होते हैं। सेंसर का उपयोग रोबोट द्वारा उनकी आंतरिक स्थिति या उनके आसपास के वातावरण के बारे में जानकारी एकत्र करने के लिए किया जाता है। ये सेंसर आंतरिक हो सकते हैं, संयुक्त स्थिति, वेग और त्वरण का पता लगा सकते हैं, या बाहरी, रोबोट के परिवेश के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं और बदलती परिस्थितियों के अनुकूल हो सकते हैं। कुल मिलाकर, मोटर और सेंसर के उपयोग से रोबोट की सटीकता और स्वचालन में बहुत सुधार होता है। रोबोट हमारे समाज का एक तेजी से अनिवार्य हिस्सा बन गए हैं।

रोबोट को विभिन्न तरीकों से वर्गीकृत किया जा सकता है, लेकिन सामान्य तौर पर रोबोट को मोटे तौर पर 'औद्योगिक रोबोट' और 'सर्विस रोबोट' में विभाजित किया जा सकता है।

सर्विस रोबोट विभिन्न रूपों में आते हैं, यह केवल ह्यूमनॉइड रोबोट तक सीमित नहीं हैं इसका उपयोग ड्रोन में कभी– कभी सर्विस रोबोट–में होता है।

औद्योगिक रोबोट मुख्य रूप से कारखानों में मनुष्यों (एफए–फैक्ट्री ऑटोमेशन) के स्थान पर वेल्डिंग, प्रसंस्करण, असेंबली, सामग्री हैंडलिंग, पेंटिंग इत्यादि जैसे विभिन्न कार्यों को स्वचालित करने के लिए उपयोग किए जाते हैं।

औद्योगिक रोबोटों को उनकी संरचना और आकार के आधार पर लंबवत आर्टिकुलेटेड रोबोट, क्षैतिज रूप से आर्टिकुलेटेड रोबोट (SCARA रोबोट), समानांतर लिंक रोबोट और कार्टेशियन रोबोट में वर्गीकृत किया जा सकता है।

हाल के वर्षों में, आदमी के साथ मिल कर काम करने वाला रोबोट का इस्तेमाल जोरों पर है जो छोटे होते हैं,व मनुष्यों के साथ सहयोग करते हैं और अस्पताल में सुरक्षा बाड की आवश्यकता को पूरा कर सकते हैं जो लचीले ढंग से बिलकुल आदमी जैसा कार्यों को कर सकते हैं, साथ ही कारखानों के भीतर मानव रहित परिवहन के लिए एएमआर (स्वायत्त मोबाइल रोबोट) और सामान्य उपयोग में भी आता है जो रोबोट स्वचालित निर्देशित वाहन (एजीवी) भी हैं। सेवा रोबोट–जो लोगों को सहायता प्रदान करता है और इसे चिकित्सा देखभाल, नर्सिंग देखभाल, सुरक्षा, ग्राहक सेवा और दुर्घटना बचाव जैसे विभिन्न क्षेत्रों में व्यावहारिक उपयोग के लिए रखा गया है।

ह्यूमनॉइड रोबॉट के ढाँचे की उपमा मानव अस्थिपंजर से की जा सकती है और उसे शुद्ध–गति श्रेणी कहा जा सकता है। यह श्रेणी है, प्रवर्तक, मोटर और संसर जो इसकी स्नायु और जोड़, जो इसे एक या एक से अधिक स्वातंत्र्य परिमाण देते हैं।

रोबोट के घटक निम्न हैं:

प्रवर्तकः प्रवर्तक रोबॉट के स्नायु होता हैं, जो चालन क्षमता प्रदान करता है। आम तौर पर इसके लिए विद्युत मोटर का प्रयोग होता है, पर अन्य संचालन शक्तियों का भी प्रयोग किया जा रहा है। रोबॉटी पैर, जो हवाई–दाब–पेशी से चलते हैं हवा के दबाव से यह सरल, किंतु सशक्त, यंत्र, खिंचने और फैलाने की क्रियाओं से रोबॉट की भुजा को चलाने हेतु गियर्स का काम करता है। यह जीवों के पेशियों से समरूप व्यवहार को दर्शाता है।

गियर्सः संचारित या शक्ति और गति प्राप्त करने के रूप में तो दूसरे हिस्से पर दांत के साथ जाल करने के लिए डिज़ाइन कटौती दाँत के साथ यांत्रिक भागों रहे हैं। कटौती दांत को भी कभी–कभी चक्रदन्त कहा जाता है। यह रोबोटिक गियर में धुरों के बीच घूर्णी बलों स्थानांतरित करने के लिए उपयोग किया जाता है। वे गति और दिशा बदल सकते हैं। सामान्यतः गियर मोटर की गति को कम करने के लिए उपयोग किया जाता है। वे गति को कम करते हैं, उत्पादन धुरा के टॉर्क बढ़ जाती है। मुख्य यांत्रिक तत्वों (संचरण घटकों) में से एक के रूप में, रोबोट में गियर का उपयोग किया जाता है, उदाहरण के लिए, मैनिपुलेटर्स के अंदर स्पीड रिड्यूसर के रूप में सर्वोमोटर (इलेक्ट्रिक एक्चुएटर) का रोटेशन, इसके आउटपुट टॉर्क को बढ़ाने के लिए स्पीड रिड्यूसर का उपयोग करके धीमा किया जाता है, जिससे एक छोटी मोटर के साथ एक बड़ी शक्ति प्राप्त करना संभव हो जाता है। रोबोट में, प्लैनेटरी गियर मैकेनिज्म, स्ट्रेन वेव गियरिंग और साइक्लोइड रिडक्शन गियर्स को स्पीड रिड्यूसर प्रकार के रूप में नियोजित किया जाता है और एप्लिकेशन के अनुसार उपयोग किया जाता है। गियर महत्त्वपूर्ण यांत्रिक तत्व हैं जिनका उपयोग स्पीड रिड्यूसर के अलावा कई अन्य स्थानों पर किया जाता है, जहाँ उन्हें गति बढ़ाने या घटाने, टॉर्क को बढ़ाने, रोटेशन की दिशा बदलने आदि की आवश्यकता होती है। रोबोट में उपयोग किए जाने वाले गियर को आवश्यकतानुसार संसाधित किया जाता है। हेलिकल टूथ फ्लैंक्स वाले स्पर गियर्स को हेलिकल गियर्स कहा जाता है और इसका उपयोग तब किया जाता है जब उच्च शक्ति की आवश्यकता होती है। मैनिपुलेटर्स के अंदर विभिन्न स्थानों में स्पर और हेलिकल गियर्स का उपयोग किया जाता है, जैसे कि ग्रहीय गियर तंत्र में यांत्रिक तत्वों के रूप में रोबोट में शक्ति संचारित करने के लिए उपयोग किया जाता है।

रैक गियर में आयताकार गियर फ्लैट, कोई वक्रता नहीं होता है जिसके सीधे दांत पर कटे हों, व गति अक्ष के लंबवत हों। एक रैक और पिनियन ड्राइव सिस्टम में एक रैक 'लीनियर गियर' और एक पिनियन 'सर्कुलर गियर' होता है। एक रैक और पिनियन ड्राइव के दांत सीधे या पेचदार होते हैं, हालांकि पेचदार दांत अक्सर उनकी उच्च भार क्षमता और अच्छा संचालन के कारण उपयोग किए जाते हैं। एक रैक और पिनियन ड्राइव सिस्टम के लिए, प्रेषित किया जा सकने वाला अधिकतम बल काफी हद तक टूथ पिच और पिनियन के आकार से निर्धारित होता है।

ये रोबोट के सिस्टम को अच्छी तरह से स्थापित होने वाला एक लीनियर ड्राइव मैकेनिज्म हैं, जो बेहद लंबी लंबाई में हाई–स्पीड ट्रैवल प्रदान करते हैं। सामग्री हैंडलिंग, मशीनिंग, वेल्डिंग और असेंबली के लिए विशेष रूप से ऑटोमोटिव, मशीन टूल और पैकेजिंग उद्योगों में वे अक्सर बड़े गैन्ट्री सिस्टम में उपयोग किए जाते हैं।

रैक और पिनियन ड्राइव सिस्टम

रैक और पिनियन लगभग असीमित लंबाई में बनाए जा सकते हैं। रैक अनुभागों को अंतहीन रूप से जोड़ा जा सकता है, हालांकि गाइड तंत्र (उदाहरण के लिए एक प्रोफाइल रेल या कैम रोलर) अधिकतम स्ट्रोक लंबाई में सीमित कारक हो सकता है। रैक और पिनियन सिस्टम दो तरीकों में से एक में काम कर सकते हैंरू पिनियन (गियरबॉक्स और मोटर सहित) चल रहा है और रैक स्थिर है, या पिनियन असेंबली स्थिर और रैक चल रहा है।

गियर दांतों के जाल के कारण रैक और पिनियन ड्राइव सिस्टम में बैकलैश होता है। लेकिन उच्च परिशुद्धता हेलिकल रैक और पिनियन सिस्टम में सिंगल–माइक्रोन रेंज में टूथ पिच त्रुटियाँ हैं। बैकलैश को रोकने के लिए रैक और पिनियन सिस्टम को प्रीलोड करना भी संभव है। रैक–एंड–पिनियन सिस्टम के लिए स्नेहन गियर दांतों के बीच सख्त निकासी के साथ धातु–पर–धातु संपर्क के कारण महत्त्वपूर्ण है। उचित स्नेहन सुनिश्चित करने और कम प्रदर्शन या यहाँ तक कि विफलता से बचने के लिए रैक और पिनियन के साथ उपयोग के लिए स्वचालित स्नेहन प्रणाली की सिफारिश की जाती है। रैक और पंख, जो घूर्णी गति को रैखिक गति में परिवर्तित करते हैं, का उपयोग विभिन्न प्रकार के अनुप्रयोगों में किया जाता है, जैसे कि गैन्ट्री रोबोट को चलाना और रोबोट हैंड ग्रिपर को खोलना और बंद करना है।

बेवेल गियर्स का उपयोग रोबोट के अंदर बिजली संचरण की दिशा बदलने के लिए किया जाता है। एक प्रकार के बेवल गियर को "हाइपॉइड गियर" भी कहा जाता है, जिसकी कुल्हाड़ियाँ ऑर्थोगोनल या एक दूसरे के समानांतर नहीं होती हैं। आंतरिक गियर रिंग के आकार के गियर होते हैं जिनके दांत रिंग के अंदर कटे होते हैं। रोबोट में, आंतरिक गियर मुख्य रूप से ग्रहीय गियर तंत्र में स्पर गियर के साथ उपयोग किए जाते हैं।

वर्म गियर्स, जिसमें वर्म और वर्म व्हील होते हैं, एक छोटी–सी जगह में बड़े रिडक्शन रेशियो को प्राप्त करने की उनकी क्षमता और उनके सेल्फ–लॉकिंग फंक्शन की विशेषता होती है, जिससे रिवर्स रोटेशन (शर्तों के आधार पर) को रोका जा सकता है। वर्म गियर्स का उपयोग रोबोटों में किया जाता है, उदाहरण के लिए, जोड़ों में, रोबोट हैंड ग्रिपर्स को खोलने और बंद करने में। रोबॉटिक्स रोबॉट की अभिकल्पना, निर्माण और अभिप्रयोग के विज्ञान और तकनीकों को कहते हैं। इस क्षेत्र में कार्य करने के लिये इलेक्ट्रॉनिकी, यान्त्रिकी और सॉफ्टवेयर के सिवाय कई अन्य क्षेत्रों में व्यावहारिक ज्ञान की आवश्यकता होती है। हालाँकि रोबॉट के स्वरूप और क्षमताओं में काफी विविधता हैं पर इन सभी में कई समानताएँ भी हैं। उदाहरण के लिए यांत्रिक चलनशील ढाँचा और स्वनियंत्रण हेतु केणोमेटिक्स व कंप्यूटर प्रोग्रामिंग का उपयोग किया जाता है.

मोटरः दिष्ट धारा मोटरों की तुलना में चरणशः (स्टेप्पर) मोटर स्वतंत्रतापूर्वक ना चलकर, कदमों में धूमती हैं। इसका फायदा यह है कि नियंत्रण सूक्ष्म और पूर्वानुमेय होता है; संकेत की ज़रूरत नहीं पडती कोणीय स्थिति को जानने के लिये। इसलिये इनका प्रयोग अनेक रोबॉटों और सीएनसी मशीनों में होता है।

दिष्ट धारा मोटरः अधिकतम रोबॉटों में दिष्ट धारा, या डीसी, मोटरों का प्रयोग होता है। इन मोटरों की खासियत यह है कि ये बडी आसानी से मिल जातीं हैं, इनका प्रयोग आसान है, दोनों दिशा में चलती हैं और काफी जल्दी तेजी पकडतीं हैं।

पीज़ो मोटरः इन मोटरों को पारस्वनिक मोटर भी कहते हैं। इनका चालन क्षण में हजारों बार पीज़ोविद्युत के प्रभाव से रोबोट के सूक्ष्म 'पैरों' में कंपन होता है। ये मोटर सीधे या गोलाकार दिशा में चल सकती हैं। इनकी खासियत है कि ये नैनोमीटर स्तर पर रोबोट का नियंत्रण, गति सटीक होती है और माप के लिये अत्यंत सरल तरीक़े से माप कर सकते हैं।आजकल इन मोटरों का प्रयोग बहुतायत में हो रहा है और वाणिज्यिक स्तर पर निर्माण कार्य भी चल रहा है।

सेंसर: सेंसर रोबोट की आंतरिक स्थिति के बारे में जानकारी इकट्ठा करने के लिए या बाहर के वातावरण के साथ संवाद करने के लिए उपयोग किया जाता है। यह अक्सर इस तरह के वातावरण के साथ संवाद करने में मदद करता है जो एक दृष्टि प्रणाली, स्पर्श और स्पर्श सेंसर के रूप में बाहरी संवेदी उपकरणों से लैस हैं। एक संवेदक को दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है: एक ऐसी संयुक्त स्थिति के रूप में रोबोट के विभिन्न भागों की आंतरिक स्थिति का पता लगाने के लिए एक आंतरिक सूचना संवेदक है, वेग, त्वरण और एक प्रतिक्रिया संकेत के रूप में मापा जानकारी नियंत्रक, एक बंद लूप नियंत्रण करने के लिए है। एक बाहरी जानकारी सेंसर जो रोबोट प्रासंगिक काम वस्तु और बाहरी वातावरण और जानकारी के अन्य पहलुओं को प्राप्त करने के लिए प्रयोग किया जाता है।

एक्चुएटर्स: एक्चुएटर्स से रोबोट के गति और विन्यास से रोबोट के वेग की गणना करते है। एक्चुएटर्स मैनिप्युलेटर की रहे हैं। एक्चुएटर्स के आम प्रकार सर्वो मोटरों के, मोटर्स, न्यूमेटिक सिलेंडर सेंसर आदि का उपयोग किया जाता है सेंसर रोबोट की आंतरिक स्थिति के बारे में जानकारी इकट्ठा करने के लिए है बाहर के वातावरण के साथ बातचीत करने के लिए एक्चुएटर्स उपयोग किया जाता है। रोबोट अक्सर तरह–तरह के वातावरण के साथ संवाद करने में मदद, करने के लिए है। जो एक दृष्टि प्रणाली, स्पर्श और स्पर्श सेंसर के रूप में बाहरी संवेदी उपकरणों आदि से लैस हैं।

नियंत्रण: एक रोबोट के सभी चालन क्षमता के लिए माइक्रो कंप्यूटर द्वारा नियंत्रित किया जाता है केंद्रीकृत नियंत्रण अन्य ऐसे रोबोट नियंत्रण कंप्यूटर को पूरा करने के लिए एक साथ ऊपरी और निचले दो का उपयोग कर के रूप में जब रोबोट के नियंत्रण, साझा करने के लिए एक से अधिक कंप्यूटर का उपयोग करता है (स्तर) नियंत्रण, फैला हुआ है, सामान्यतः प्रबंधन में इस्तेमाल किया प्रणाली, संचार, कीनेमेटीक्स है और कम करने के लिए कंप्यूटर गतिशीलता गणना एक आदेश संदेश भेजता है, अधीनस्थ दास के रूप में, एक सीपीयू को इसी संयुक्त, प्रक्षेप संचालन और इमदादी नियंत्रण प्रसंस्करण के लिए, किसी दिए गए व्यायाम, होस्ट करने के लिए प्रतिक्रिया जानकारी प्राप्त करने के लिए. अलग काम कार्यों की आवश्यकताओं के अनुसार, रोबोट के नियंत्रण मोड बिंदु की स्थिति निर्धारित की जाती है.

रोबोटिक्स और आर्टिफीसियल इंटेलीजेंस पर वियव के कई देशों में काम चल रहा है। हम कह सकते हैं कि आज का विज्ञान इतना विकसित हो चुका है कि आज वह अपना विकल्प तैयार करने को प्रयासरत है। इसी प्रयास का परिणाम सोफिया जैसे रोबोट का विकास 2019 में हुआ इसे अक्टूबर 2017 में सऊदी अरब की नागरिकता भी मिल गयी. इसकी खासियत यह है कि यह किसी भी तरह के प्रश्न का जबाब दे सकती व आज कल न्यूज़ चौनल में भी रोबोट का इस्तेमाल न्यूज़ सुनाने यानि भारत में मीडिया में प्रवक्ता के रूप में नियुक्त हो चुका है जो आर्टिफिशल इंटेलीजेंनसी से लैस है अब शायद युद्ध में सैनिक के रूप में होगा। न्यूजीलैंड के वैज्ञानिकों ने एक ऐसा रोबोट तैयार किया है जो अब चुनाव भी लड़ेगा और नेतागिरी भी करेगा, इस रोबोट का नाम सैम है। कहा यह जा रहा है कि आने वाले चुनाव में यह रोबोट चुनाव में उतरेगा।

बेबस पहाड़

चित्रलेखा मेहता
धर्मपुर, देहरादून

दरकता, सरकता,
सिकुड़ता, सिमटता,
मेरा अपना !
जहाँ पहाड़ों, नदी, नालो को भी
नाम से बुलाते हैं !
जो ले जायेगा जाते हुए,
मेरा बचपन, कई किस्से,
कहानियाँ, गुजरे दिनों की यादें !
सहमे, सिसकते, सुबकते बिलखते
मेरे अपने, ना जाने कितने !
बीते दिनों को याद कर के,
आने वाले दिनों को रोते,
अपनों से, अपनी जमीं बिछड़ते,
कैसे समेट पाएंगे,
खुद को, गुजरे दिनों को,
महीने, सालो की यादों को,
एक वीरान जमीं पर !
नवीनीकरण की बली चढ़ता,
खामोश, खोया सा, निशब्द,
विवश मेरा पहाड़

क्या बचा रह जायेगा (पत्नी)

चित्रलेखा मेहता
धर्मपुर, देहरादून

क्या बचा रह जायेगा,
पास तुम्हारे !
अगर कभी मैं चल दूँ,
समेट कर अपनी !
खनकती सतरंगी चूड़ियाँ,
शीशे पर लगी बिंदी, सिंदूरी डिबिया !
मखमली शाल, रेशमी साड़ियाँ,
मेहदी महावर, आलथा !
छनकती घुँघरू वाली,
पायल का शोर,
झूलती कानो की बालियाँ !
वो गुलाबी पर्दे, चमेली,
चम्पा, वो गजरे की खुशबू !
वो रसोई से आते,
मसाले की महक !
कभी मिले फुर्सत,
तो सोचना,
हमारे होने से ही मुकम्मल हैं,
दुनिया तुम्हारी !

पिता की दुविधा

ऋचा कुमारी
वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान, देहरादून

सुनो, एक पिता की दुविधा सुनाती हूँ
था एक घर सजा हुआ, खुशियाँ थी छाई हुई
सजी सवरी माँ, मंद मंद मुस्काती हुई
पर पिता के माथे पर शिकन थी आई हुई
अख़बार के पन्ने पलटते हुए, आँखें डबडबाई हुईं
उठ वो पत्नी के पास गए बोले बस इतना
कठोर ह्रदय से उसे देखा, कहा, पुत्री हो तो घर मत लाना
ये सुन माँ स्तब्ध हो गई , हैरान घर के सब हो गए
घृणित होके पत्नी बोली, कितनी छोटी सोच रखते हो
पिता होके तुम, बेटा बेटी में भेदभाव करते हो
बढ़ते कदम ठिठक गए पिता के, बोले चाहता मैं भी पुत्री हूँ, प्रिये
पर क्या करूँ, देश का प्रारब्ध सोच विचलित हूँ
जहाँ एक तरफ देवी पूजी जाती है दूसरी तरफ़ कुकृत्य की ख़बरें आती हैं
सुनो प्रिये, कोई एक दिन ऐसा न होगा अखबार में बलात्कार की ख़बर न होगी
मेरी दुविधा बस इतनी है मैं रक्षक हूँ इसका, क्या हर पल इसके साथ रहूँगा
ये चिड़िया मेरी इस आंगन की, पिंजरे में तो क़ैद न करूँगा
बाहर एक धृतराष्ट्र की सभा है।
निष्ठुर निर्दयी निरंकुश अराजकता है
होगी कोई घटना दुखदाई समाज पहले जात पूछेगा, फिर ये पूरी बात पूछेगा
पाप हुआ है या नहीं, धर्म के आम पर युद्ध होगा
हाथरस की बेटी हो या दिल्ली की निर्भया
नोच खाता है ये भक्षक बना समाज
ये कलयुग है प्रिये,
द्रौपदी की लाज़ बचाने अब माधव ना आएगे
जब भीड़ निर्वस्त्र करे मणिपुर की बेटी को
तेरा ये आंचल छोटा पड़ जाएगा,
सुनो चित्कार उसकी क्या ये तू सह पाएगी?
चल इन भेड़ियों से बचा भी लू आत्मरक्षा सिखा भी दूँ,
फिर क्या, फिर ये दहेज का दानव पैर पसारेगा
था एक पिता पानीपत से, दिए करोड़ उसने दहेज में
फिर भी उस अभाग्य पिता ने बेटी पाई अर्थी की सेज में
और ना जाने कितनी कुटिल मानसिकता हैं समाज में
गलत को गलत कहने की ताकत नहीं है समाज में
तुम माँ हो हर दर्द आँसू में बता दोगी
मैं पिता हूँ तकलीफ़ चेहरे पर न आने दूँगा
मैं पिता घिरा हुआ हूँ दुविधाओं से
देख न पाऊँगा चिड़िया को बाधाओ में
सुन पिता की बातें एक घोर चुप्पी छाई थी आंगन में
माँ व्याकुल होके छिपा रही थी कोख को आंचल में
तब कहीं से रोशनी आई, प्यारी सी आवाज आई
आवाज़ कहीं से नहीं पिता के ह्रदय से आई
मैं माँ के कोख में पलती हूँ
पर पिता के ह्रदय में बसती हूँ
सिर्फ़ पुत्री नहीं हूँ आपकी
सृजन का दूसरा प्रतिरूप हूँ मैं
पिता के वात्सल्य से दूर न करें
आरंभ स्वयं से करें
नारी सम्मान जब हो घर से
दूर होगी दुविधा इससे
सुन ये बातें पिता का मन बदला ,उठ वो पत्नी के गले लगा
जो मर्म समझे इसे कविता का
तब सुलझेगी दुविधा पिता की
ये दुविधा सुलेझेगी या नहीं
यह प्रश्न आप पर छोड़ती हूँ
सुनो, एक पिता की दुविधा सुनाती हूँ

अभी बूट हैंग नहीं किए हैं!

अदम्य जीवटता, मौलिक शोध–दृष्टिकोण और अद्वितीय पुरातत्व–भूवैज्ञानिक शोधों की त्रिवेणीः डॉ. राजेन्द्र कुमार पंत

रणधीर संजीवनी
इंदिरा नगर, लखनऊ

किसी निर्जन में बहती और किन्हीं आँखों के सामने बहने वाली नदी की चंचलता में कोई अंतर नहीं होता है। नदी कल–कल की राग अलापते और बलखाते हुए तब ही नहीं बहती जब कोई उसे देखने वाला हो। कोयल अपने मधुर कंठ से केवल तब ही कुहू–कुहू नहीं करती जब कोई उसे सुनकर आनन्दित होने वाला हो। प्राकृतिक सुंदरता जैसी भव्य और स्वयंभू कृति व्यक्ति विशेष को प्रसन्न करने के लिए कभी नहीं होती है। कोई भी बड़ी कृति या बड़ा कार्य उस 'स्वान्तः सुखाय' उद्देश्य से होता है जो अनायास समष्टि के लिए भी सुखदायी बन जाता है। उदात्त व्यक्तित्व अपने–अपने कार्य क्षेत्र में कोई काम किसी पद, प्रतिष्ठा या प्रसिद्धि के लिए बिल्कुल ही नहीं करते हैं। इनमें से भी कुछ विरले व्यक्ति समष्टि को भी उतना सम्बोधित नहीं करते जितना आत्मसंतोष को लक्ष्य करते हैं। उस मलंग जोगी की तरह जो अपनी धूनी रमाता ही है चाहे कोई अनुष्ठान हो या नहीं, चाहे समष्टि को आनंद प्राप्त हो अथवा नहीं। डॉ. राजेंद्र कुमार पंत, क्वाटर्नरी–भूविज्ञानी और पुरातत्ववेत्ता ऐसे ही 'स्वान्तः सुख' की धूनी रमाने वाले मलंग जोगी थे। भूविज्ञानियों ने क्वाटर्नरी नाम उस कालखंड को दिया है, जो आज से लगभग 25–26 लाख साल पहले शुरू होकर अभी चल रहा है। इसी क्वाटर्नरी भूविज्ञान विशेषतः गुजरात क्षेत्र के क्वाटर्नरी–भूविज्ञान में राजेन्द्र कुमार पन्त जी का विपुल योगदान है। हवा के साथ उड़कर आई खड़ी ढालों में जमा हो चुकी बजरी के कणों जैसी हल्के भूरे–पीले–धूसर रंग की रेत–मिट्टी के जमाव को भूविज्ञानियों ने लोएस निक्षेप का नाम दिया है। कश्मीर के इन्हीं लोएस निक्षेपों/जमावों, कश्मीर के पुरातत्व, वहाँ के गलों (ग्लेशियरों) के मिज़ाज, कश्मीर–, मध्य–, उच्च–, तथा टैथिस–हिमालय पर मौलिक और मानक काम करके भूविज्ञानियों की कई पीढ़ियों के लिए मार्ग प्रशस्त करने वाले डॉ. पंत, सेवानिवृत्त विज्ञानी, भौतिकी अनुसंधान प्रयोगशाला (पी आर एल), अहमदाबाद का अस्वस्थता के बाद पुणे में 4 मई, 2024 को देहावसान हो गया।

निराली कार्यशैली वाले डॉ. पंत का जन्म 1 अप्रैल, 1934 को नैनीताल शहर में श्री ईश्वरी दत्त पंत और श्रीमती हरिप्रिया पंत के घर हुआ था। नैनीताल बैंक लिमिटेड के महाप्रबंधक का यह बेटा घर और नजदीकी लोगों में प्यार के साथ राजी नाम से बुलाया जाता रहा। राजी को बचपन से ही नाटक, पर्वतारोहण, घुम्मकड़ी और खोजी कामों में बहुत रुचि थी। उन्होंने तत्कालीन डी.एस.बी. राजकीय महाविद्यालय नैनीताल, आगरा विश्वविद्यालय से वर्ष 1957 में स्नातक किया। इसके बाद काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी से प्राचीन भारतीय संस्कृति और इतिहास में स्नातकोत्तर की उपाधि वर्ष 1959 में हासिल की। बाद में, साल 1962 में स्कूल ऑफ़ आर्कियोलॉजी, दिल्ली से पुरातत्व में डिप्लोमा पाठ्यक्रम पूरा किया।

डिप्लोमा में सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करने के बाद राजेन्द्र कुमार पंत ने वर्ष 1962 में ही भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण में नौकरी शुरू की, जो वर्ष 1973 तक जारी रही। यहाँ काम करने की शुरुआत उत्तरी कश्मीर घाटी के बुर्ज़वोम (प्रचलितः बुर्ज़होम) के नवपाषाण युगीन स्थल के उत्खनन अभियान से हुई। श्री टी. एन. खजांची के नेतृत्व में चला यह खुदाई अभियान 60 के दशक से शुरू हुआ और 1971 तक चला था। बुर्ज़होम के पास हरवन (प्रचलित रू हारवान) के निक्षेपों में किए अपने परागाण्विक अध्ययनों के आधार पर डॉ. पंत ने यह मत प्रतिपादित किया कि कश्मीर घाटी में कृषि आज से 6000 से 7000 वर्ष पहले यानी नवपाषाण युगीन लोगों के दौरान शुरू हो गई थी। पौधों और पशुओं को पालतू करने के मामले में आरम्भिक मानव के दृष्टिकोण को समझने में और मृदभांडों के इस्तेमाल न किए जाने के कारण को भी समझने में इस

अध्ययन के महत्वपूर्ण निहितार्थ रहे हैं। इस स्थल में चीड़ के जंगल में आई गिरावट को उन्होंने नवपाषाण कालीन मानव द्वारा घाटी में कृषि शुरू होने का संकेत माना है। आर.के. पंत की बुर्ज़होम में की गई एक महत्वपूर्ण खोज हाथ से बना और धूप में सिंका या पका बर्तन है। इस बर्तन के तले में चटाई के निशान भी मिले हैं। यह खोज इस बात का संकेत देती है कि प्रारम्भिक नवपाषाण कालीन मानव भूसी/छिलकों की चटाई बनाना तो जानते थे पर चाक या पहिये के इस्तेमाल से अनभिज्ञ थे।

महान पुरातत्ववेत्ता प्रो. हंसमुख धीरजलाल संकालिया के साथ 70 के प्रारम्भिक दौर में लिड्डर घाटी में चले उत्खनन अभियान में मानव प्रमाणों को खोजने में सक्रिय योगदान देने वालों में राजेन्द्रकुमार पंत अग्रगण्य हैं। इस खुदाई के दौरांन, मध्य प्लीस्टोसीन समय (आज से 26 लाख से लेकर 11,700 वर्ष पहले तक का कालखंड) के नदीय–हिमनदीय गाद के जमाव से विशाल शल्क और अनगढ़ हस्तकुठार खोजा गया है। पंत जी ने श्रीनगर से 15 किलोमीटर दक्षिण पूर्व में सोम्बुर पर जैस्पर, सिलिकामय चूना पत्थर (सिलीसियस लाइमस्टोन) और बेसाल्ट शैलों के पुरातात्विक पाषाण उद्योग का पता लगाया था।

इसी दौरान शिकागो विश्वविद्यालय में विल्लार्ड लिब्बी की कार्बन के नए समस्थानिक की खोज ने प्रागैतिहासिक और पुराकाल की वस्तुओं के आयु–निर्धारण का मार्ग प्रशस्त करके पुरातत्व खोजों को नई उड़ान दे डाली। रेडियोकार्बन कालानुक्रम की महत्ता को अपनी दूरदृष्टि से समझकर वर्ष 1973 में आर. के. पंत जी ने पी आर एल, अहमदाबाद की रेडियोकार्बन कालानुक्रम प्रयोगशाला में विज्ञानी का पदभार ग्रहण किया। यहाँ काम करते हुए उन्होंने भूवैज्ञानिक और पुरातात्विक जमावों/स्थलों के विपुल रेडियोकार्बन कालानुक्रम तैयार करके एक अभूतपूर्व योगदान दिया है। राजेन्द्र जी की मानव मस्तिष्क के विकास में सदैव गहरी रूचि रही। कैसे आरम्भिक मानव ने औजार बनाने सीखे, कैसे उसने कृषि प्रयोगों को प्रकृति–चक्र के साथ तारतम्य बैठते हुए शुरू किया इत्यादि प्रश्नों के उत्तरों को वह खोजते रहे। आरम्भिक मानव ने किस तरह अपने औजार बनाए होंगे इस प्रश्न पर दो वर्षों तक वह अथक काम करते रहे। फलतः उन्होंने आरम्भिक मानव द्वारा औजार बनाने के अनुरूपण का प्रयोगशाला में प्रदर्शन किया। इसी काम पर उनको वर्ष 1976–77 में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी से पी. एच.डी. की उपाधि प्राप्त हुई। इस विलक्षण प्रतिभा ने अपनी दूसरी पी.एच.डी. उपाधि क्वाटर्नरी भूविज्ञान के विषय पर मार्सैय, फ्रांस से साल 1978–79 में हासिल की।

साल 1978 के अपने एक शोध–आलेख में डॉ. पंत ने मृद्–भांड रहित नवपाषाण कालीन (नवपाषाण काल का वह खंड जिसमें मृद्–भांड यानि मिट्टी के बर्तन नहीं मिलते) सांस्कृतिक संस्तर की पूरी कश्मीर घाटी में उपस्थित होने की बात कही है। इस खुदाई अभियान मे उन्होंने मृद्–भांड रहित नवपाषाण काल से शुरू होकर मृदभांड सहित नवपाषाण काल, महापाषाण काल और ऐतिहासिक काल खंडों तक चले सांस्कृतिक अनुक्रम को स्थापित करने में सक्रिय भूमिका निभाई थी। डॉ. पंत ने ही 1980 में मृद्–भांड–रहित नवपाषाण काल के सांस्कृतिक संस्तर को बुर्ज़वोम (प्रचलितः बुर्ज़होम) में खोजा और अकादमिक/शोध जगत में उसको स्थापित भी किया। हस्तकृतियों से सम्बद्ध पुरामृदा के रेडियो–कार्बन कालानुक्रम के आधार पर उन्होंने यह बात रखी कि कश्मीर घाटी में 18,000 साल पहले का मानव 'उपकरण संविरचन' यानि औजारों को गढ़ने के लिए क्रोड तकनीक का उपयोग कर रहा था। उनके अध्ययनों से पता चलता है कि पाषाण औजार निर्माणशालाएँ पुरापाषाण काल से शुरू होकर प्रारम्भिक नवपाषाण या मृद्–भांड रहित नवपाषाण काल तक जारी रहीं। इसके साथ ही पंत ज्यू ने बड़ग्वॉम (प्रचलितः बड़गाम) जनपद में खां स्ब (प्रचलितः खान साहिब) और हब स्ब (प्रचलितः हब साहिब) से नवपाषाणकाल से जुड़े पाषाण लघु उद्योग की खोज भी की है, जिसकी विशिष्टता चक्रिक क्रोड, वेधक/रंध्रक, शल्क, रांपी/खुरचनी जैसे बहुत तरह के गंडासा/खंडक हैं।

साल 1985 में इस उद्भट अनुसंधानकर्ता के जीवन में फील्ड के दौरान एक प्राणघातक घटना घटी। उस फील्ड के दौरान आपको हृदयाघात (हार्टअटैक) का सामना करना पड़ा। इसके परिणामस्वरूप वर्ष 1990 में आपको बाईपास सर्जरी से गुजरना पड़ा था। इस स्वास्थ्य समस्या से उभरकर आप उसी जोश–ओ–ख़रोश के साथ वापस फील्ड जियोलॉजिस्ट की ज़िंदगी में आए। अपनी 90 वर्ष की वय

तक पहुँचते–पहुँचते भी आप मध्य–, टैथिस–, ट्रांस–हिमालय में मौलिक शोध कार्य और दूसरी अकादमिक गतिविधियों में भरपूर सक्रिय रहे।

आर. के. पंत जी ने जैसा अद्‌भुत योगदान पुरातत्व विधा में दिया है, वैसा ही अद्वितीय अवदान भूविज्ञान के क्षेत्र में भी दिया है। फ्रांस से लौटने के बाद इनके शोध कार्य भूविज्ञान केन्द्रित रहे। कश्मीर–हिमालय के लोएस जमावों और पुरामृदाओं पर कई वर्षों तक काम किया। पहली बार कश्मीर के लोएस निक्षेपों के स्थानिक और कालिक विभिन्नता को जमीन के पुरास्थलाकृतिक विन्यास यानि जमीन के बदल चुके भौतिक लक्षणों/स्थल की आकृति में आ चुके बदलावों से जोड़कर देखा। यह सम्बन्ध स्थापित करने वाले वह पहले व्यक्ति बने। इसको इन्होंने पीर पंजाल पर्वतमाला के ऊपर उठने के परिणाम से भी जोड़कर स्पष्ट किया है। कश्मीर की क्षेत्रीय भाषा में करेवा कहे जाने वाले विशाल पुरासरोवरी जमाव के पुराजलवायविक महत्व को भी सबसे पहले इन्होंने ही उजागर किया था। अपने साथियों के साथ पूरी कश्मीर घाटी में आज से 26 लाख से लेकर 11,700 वर्ष पहले हुए जलवायु परिवर्तन; प्राकृतिक दृश्यमान या भूदृश्य विकास; इस काल की जलवायु के रासायनिक प्रमाण; घाटी के लोएस निक्षेपों/जमावों की सूक्ष्म बनावट, उत्पत्ति, रासायनिक संघटन, कालानुक्रम और इन जमावों के पुरापारिस्थितिक निहितार्थों; पर अध्ययन करके राजेन्द्र कुमार पंत जी ने क्वाटर्नरी भूविज्ञान को समृद्धतर करने का अभूतपूर्व काम किया है। केवल कश्मीर घाटी के लोएस निक्षेपों पर ही नहीं मध्य यूरोप के लोएस जमावों पर भी इन्होंने अपने साथियों संग वरेण्य काम किये हैं। 'अथातो अन्वेषण प्रवृत्ति और घुमक्कड़ जिज्ञासा' के चलते पंत जी ने पूरी दुनिया भर के लोएस जमावों का भ्रमण किया। भूवैज्ञानिक जगत में ऐसा करने वाले वो शायद अकेले व्यक्ति रहे।

गुजरात प्रांत के क्वाटर्नरी भूविज्ञान क्षेत्र में डॉ. पंत जी के योगदान को रेखांकित करते हुए प्रतिष्ठित भूवैज्ञानिक प्रो. लक्ष्मण सिंह चम्याल लिखते हैं कि "उनके बाद आये हुए भूवैज्ञानिक उनके योगदान से कभी उऋण नहीं हो सकते क्योंकि, उनके बाद की पीढ़ी के हम लोगों ने जिन भूवैज्ञानिक अनुक्रम स्थलों पर काम करके ख्याति अर्जित की उन स्थलों की महत्ता को पंत जी ने ही सबसे पहले पहचान था। मध्य गुजरात और सौराष्ट्र के क्वाटर्नरी भूविज्ञान पर अभूतपूर्व कार्य उन्होंने किए हैं। इन कार्यों में इस अर्ध–शुष्क प्रान्त में ग्रीष्मकालीन मानसून के बदलते मिज़ाज, उस दौरान हुआ अवसादन, नए महाद्वीपीय क्वाटर्नरी स्तरिक विन्यास की स्थापना के कार्य शामिल है। पश्च–क्वाटर्नरी के दौरान स्थल–सागर सम्बन्धों पर जो समझ तैयार हुई है उसकी नींव पंत जी के इस प्रान्त के नदीय और वातोढ़ वातावरण के निक्षेपण और समुद्री फैलाव(अतिक्रमण) पर तैयार किए गए आंकड़ों ने ही बनाई है"।

पिछले सवा लाख साल में सौराष्ट्र तट में आए समुद्र तल के बदलावों पर पन्त जी का अपने साथियों के साथ किया गया शोध कार्य बहुत ही प्रतिष्ठित और मानक रहा है। ऊपर उठी वेदिकाओं, चट्टानों में लहरों से बनी खाँचों, जैसी विभिन्न तटीय भूआकृतियों का इस्तेमाल करते हुए, पर समुद्र तट बदलाव का बहुत स्पष्ट परिदृश्य उन्होंने रखा है। अपने आयामों को बढ़ाते हुए इन्होंने नीलगिरी के पीट–दलदल के अवसाद के जमावों के परागाण्विक और रासायनिक विश्लेषणों से पिछले 20 हज़ार साल के दौरान उस क्षेत्र की वनस्पति और मानसून में आए बदलावों को दर्ज किया है।

डॉ. पंत ने मध्य–हिमालय के ग्लेशियरों पर काम करते हुए तीन हिमनदीय चरण प्रतिपादित किए हैं। उन्होंने अपने मौलिक शोध से यह रोचक तथ्य भी सामने रखा कि मध्य–हिमालय क्षेत्र में सबसे प्राचीन और लंबा हिमनदीय फैलाव पिछले हिमनदन अधिकतम (लास्ट ग्लेशियल मैक्सिमम) से पहले रहा था। इसके साथ ही इस क्षेत्र में हिमनदों के फैलाव पर वर्षण से ज्यादा तापमान के नियंत्रण होने के एकदम नए तथ्य को भी उन्होंने सिद्ध किया।

आज जिन घाटियों में नदियाँ बह रही हैं, वह घटियाँ हिमनदों ने कैसे तराशी, कैसे नदियों ने उनको अपने मन मुताबिक कहीं काटा, तो कहीं पाटा, इन बातों को ज़मीनी शक्ल–ओ–सूरत से टटोलने में माहिर डॉ. आर.के.पंत जी ने कश्मीर–, मध्य–, उच्च–, टैथिस–हिमालय क्षेत्र पर भी पहले लीक में मानक काम दिए हैं। कश्मीर की पीर पंजाल श्रेणियों की वादियाँ हों या मध्य–हिमालय की उत्पत्यकाएँ,

उनमें हिमानियों के रहे स्वभाव को उन्होंने बड़ी कुशलता से पकड़ा है।

पंत जी ने कई भूवैज्ञानिक शोध–कार्यविधियों को भारत में पहली बार प्रयुक्त करके हिमालयी हिमनदन शोध क्षेत्र में एक नए मत या एक नई शाखा का प्रारम्भ किया है। भूविज्ञानियों की नई पीढ़ियों में एक बड़ा अनुयायी वर्ग इस शोध पंथ का खड़ा हुआ है जिसने अपने शोधों से क्वाटर्नरी युग के हिमालयी हिमनदन की तस्वीर को बहुत स्पष्ट किया है और कर रहा है। हिमालय के क्वाटर्नरी हिमनदन पर उन्होंने काम करने की शुरुआत करके पहली दफा पुरासाम्य रेखा उन्नतांश ज्ञात किया। हिमनदों में एक ऐसी ऊँचाई होती है, जहाँ पर बर्फ के संचयन/जमाव और उसके अपक्षरण/गलन में संतुलन हो जाता है उसे साम्य रेखा उन्नतांश (इक्युलीब्रियम लाइन एल्टीट्युड = ई एल ए) कहा जाता है। यह ई एल ए, हिमनदों की तबीयत पर मौसम–जलवायु के मिज़ाज का जो असर पड़ता है, उसको जानने के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। इसी पुरा–ई एल ए की गणना क्वाटर्नरी युग के हिमालयी हिमनदन के संदर्भ में पंत जी ने सबसे पहले की है। उन्होंने हिमनदों पर वर्षण का कितना प्रभाव है इस बात पर शोध करने के साथ ही हिमालय के गल (ग्लेशियरों) पर तापमान के अधिक नियंत्रण होने के मौलिक तथ्य को उजागर करके एक नई शोध दिशा प्रदान की है।

डॉ. पंत वर्ष 1994 में पी आर एल, अहमदाबाद से सेवानिवृत्त हुए। बाद के वर्षों में वाडिया हिमालयी भूविज्ञान संस्थान में भी वो अपने पूरे जुझारुपन के साथ नई परियोजनाओं के संचालन करते रहे हैं। इसके साथ ही एक सच्चे विज्ञानी की तरह अद्यतन विधियों से अपने पूर्वकृत शोधों को परिष्कृत भी करते रहे हैं। समुद्री सीपियों पर आधारित कालानुक्रम और रासायनिक विश्लेषणों का इस्तेमाल करते हुए सौराष्ट्र तट के समुद्र स्तर में आए बदलावों पर, दक्षिण भारत के पीट–दलदल के गाद के जमावों से पिछले 40 हज़ार साल के वानस्पतिक और जलवायवी बदलावों पर किया गया कार्य इस दिशा में ही प्रकाश में आया।

50 की वय में एक हृदयाघात का सामना कर चुके आर.के. पंत अपनी उम्र के 70–80 के दशक में भी जीवटता और शोध समर्पण के प्रतिमान बने रहे। मध्य–हिमालय से लेकर टैथिस–हिमालय के तुंग शिखरों और दुर्गम दर्रों को नापते हुए वहाँ के हिमनदीय, पुरासरोवरी, नदीय, लोएस और अन्य निक्षेपों को एक समग्र दृष्टिकोण के साथ टटोलते रहे। इन ऊँचे हिमालयी अंचलों की किसी हिमनदीय झील या किसी भी स्थिर जलराशि में गाद जमा होने के वार्षिक चक्र के फलस्वरूप सूक्ष्म और स्थूल कणों वाली बजरी या चिकनी मिट्टी की एकान्तरित जोड़ीदार परतें बनती रहती हैं। सूक्ष्म और स्थूल कणों की परतों की एक जोड़ी एक वर्ष को दर्शाती है। इन जमाव को अनुवर्षस्तरी (वार्व) का नाम दिया गया है। मध्य– और टैथिस–हिमालय के अनुवर्षस्तरी/वार्व जमावों के अध्ययन से इन संवेदनशील इलाकों में पिछले 50–60 हज़ार साल के दौरान हुए जलवायु परिवर्तन के बारे में सटीक जानकारी भी पंत जी ने भूवैज्ञानिक जगत को दी है। इसी तरह, उच्चतर मध्य हिमालय में स्थित गोटिंग घाटी, गर्ब्यांग द्रोणी के अनुवर्षस्तरी व सरोवरी गाद के जमावों, कुमाऊँ अंचल की पिंडर घाटी के पीट–दलदल निक्षेपों और लोएस निक्षेपों पर विभिन्न प्रकार के विश्लेषणों के आधार पर पिछले 50–60 हज़ार साल के दौरान इस हिमालयी इलाके में रही जलवायु की चंचलता और भूकम्पीय हरकतों पर उनके सर्वसमादृत शोध–पत्र रहे हैं।

डॉ. आर.के.पंत सर हम भूविज्ञानियों को और हिमालय को समझने की ललक और उससे प्यार रखने वालों को एक पुरखे की तरह अपनी थाती सौंपकर महाविश्राम में चले गए हैं। आर. के. पंत सर को मैंने उनके लिखे एक शोध पत्र के माध्यम से साल 2004 में जाना था। वह शोध पत्र ऊँचे हिमाद्रि अंचल की गर्ब्यांग घाटी में आज से 20–10 हज़ार साल पहले हुई जलवायवी फेरबदलों और भूकम्पीय हलचलों पर है। अगले साल 2005 की अपनी दूसरी लदाख यात्रा के दौरान मैं अपने साथ पंत जी और उनके साथियों द्वारा लद्दाख के हिमनदों, नदियों और सरोवरों के 'तमाम तरह के निक्षेपों के खजाने' पर लिखे हुए एक परिचयात्मक लेख को तो किसी ताबीज़ की तरह लेकर गया था।

वर्ष 2012 में लद्दाख में हुई एक फील्ड–वर्कशॉप में उनसे भेंट होने का सौभाग्य मिला था। उस पूरी कार्यशाला में उनसे लद्दाख की घाटियों की भूआकृति, हिमालयी और

पराहिमालयी हिमनदन के बारे में जानने–सीखने को बहुत मिला था। साथ ही मेरा सौभाग्य बना कि पंत ज्यू उसी नैनीताल में जन्मे थे जहाँ मैंने भी पहली साँसे भरी हैं। इस नाते उनसे मुझे एकदम घर के बूबू (दादा) जैसा आत्मीय प्यार मिला। वो उतने ही दिन में अपनी–मेरी दुदबोली कुमाउँनी के 'ले हो भाव (भौ)' जैसे सम्बोधन से मुझे बुलाने लगे थे। फिर आगे कभी उनसे यह सम्बोधन सुनने का, बातचीत करने का, मुलाक़ात होने का सुयोग नहीं बना। हर किसी नए के प्रति उनका बरताव बहुत दोस्ताना था। उनमें एक सहजात अदम्य जिजीविषा और उत्कट मौलिकता थी।

उनके देहावसान के कुछ महीने पहले ही उनके पट शिष्य और शोध–यात्रा के साथी प्रतिष्ठित भूविज्ञानी नवीन जुयाल ने उनका संक्षिप्त साक्षात्कार लिया था। उस बातचीत को सुनने से पंत जी का जीवन के प्रति, काम करते रहने की ललक के प्रति जो दृष्टिकोण रहा, उसको बहुत अच्छी तरह समझा जा सकता है। "मैं कभी नहीं डरा"; "मैंने बस काम किया"; "मैंने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा", जैसे गुरुमंत्रों की दीक्षा उस साक्षात्कार में मिलती रहती है। जब उस बातचीत के एक आखिरी प्रश्न को रखते हुए डॉ. नवीन जुयाल "आप जब बूट हैंग करते हैं...." ऐसे वाक्य को कहते ही हैं तो डॉ. पंत सर लगभग टोकते हुए कहते हैं "अभी बूट हैंग नहीं किए हैं......"। शारीरिक परिस्थितियाँ जो भी हों पर मनोस्थिति उनकी आखिरी क्षणों तक जीवटता और कर्मशीलता से लबरेज़ रही। मनोस्थिति ही व्यक्तित्व की सच्ची अभिव्यक्ति होती है। डॉ. आर. के. पन्त अनजान मृत्यु को भी दोस्त सा मान देते हुए उसके साथ चले गए। उनके जाने की खबर से ऐसा ही लगा जैसा कुड़ी (परिवार) का कोई बड़ा चला गया हो, कोई अपना पुरखा सो गया हो। डॉ. आर.के.पंत सर की धर्मपत्नी, जो उनकी प्रेरणा शक्ति रहीं, श्रीमती विमला पन्त, सेवानिवृत्त अध्यापिका, दोनों पुत्रों (श्री अमिताभ पन्त और श्री अमित पन्त) और पूरे परिवार के साथ पूरे भूवैज्ञानिक जगत और शुभचिंतकों की सहानुभूति है। डॉ. राजेन्द्र कुमार पन्त जी के किए गए शोध कार्यों और शोध दृष्टिकोण को आगे बढ़ाते रहना ही है उनके प्रति सार्थक श्रद्धांजलि होगी। आप सबके साथ उनको बहुत नराई, प्यार और सम्मान के साथ याद करता हूँ।

संदर्भ एवं आभारः

1. 'लेख शीर्षक साभारः साक्षात्कार डॉ. राजेंद्र कुमार पंत, द्वारा डॉ नवीन जुयाल, यू ट्यूब चैनलः नवीन विस्परिंग हिमालया। https://www.youtube.com/watch?v=IFrMMNOTcWA
2. डॉ. विजय कुमार जोशी, प्रख्यात स्तम्भकार और लेखक, भूतपूर्व निदेशक, भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण से बातचीत।
3. आर.एस. फ़ोनिया, एक्सकेवेशन्स एट बुर्ज़होम (1960–71), मेमोइर्स ऑफ़ दि आर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑफ़ इंडिया,118. 2022।
4. प्रो. लक्ष्मण चम्याल, प्रख्यात भूविज्ञानी से बातचीत।
5. लक्ष्मण चम्याल, ओबिच्युरी राजेन्द्र कुमार पंत (1934–2024), जर्नल ऑफ़ जियोलॉजिकल सोसाइटी ऑफ़ इंडिया, 100 (7). 2024।
6. श्री अमिताभ पंत (डॉ. आर. के. पंत जी के ज्येष्ठ पुत्र; बिज़नेस कंसलटेंट, बी बी डी इंडिया प्राइवेट लिमिटेड) से बातचीत।
7. श्री संतोष कुमार पंत (डॉ. आर. के. पंत जी के कनिष्ठ भ्राता; सेवानिवृत्त अधिकारी, कॉपोरेट अफेयर्स, भोपाल मंडल, आदित्य बिड़ला समूह) से बातचीत।
8. डॉ. बी.के.रैना, सेवानिवृत्त, भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण।
9. डॉ. शेख नवाज़ अली, विज्ञानी–डी एवं सुश्री प्राचिता अरोड़ा, सी एस आइ आर–एस आर ऍफ़, बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ।
10. डॉ. पी. मोर्थेकई, विज्ञानी–डी, बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ एवं सहयोगकर्ता।

कुमाऊँनी लोक त्यौहारः हरेला की वर्तमान परिदृश्य में यथार्थता

छवि पंत पांडेय
वाडिया हिमालय भू–विज्ञान संस्थान, देहरादून

जी रया, जागि रया,
यो दिन, यो महैंण कैं नित–नित भ्यटनै रया।।
दुब जस पगुर जया,
धरती जस चाकव, आकाश जस उच्च है जया ।
स्यूं जस तराण ऐ जौ, स्याव जसि बुद्धि है जौ ।
हिमालय में ह्यू छन तक,
गंगा में पाणी छन तक, जी रया, जागि रया।।

कुमाऊँनी आशीर्वचन जिसका अर्थ है कि (तुम दीर्घायु के साथ–साथ विवेकवान और जागरूक बने रहो, हरेला पर्व का यह शुभ दिन और यह शुभ महीना तुम्हारे जीवन में सदा आता रहे। तुम्हें माँ धरती के सामान विस्तार और आकाश की तरह ऊंचाई प्राप्त हो। सिंह के सामान शक्ति और सियार जैसी तीक्ष्ण बुद्धि हो प्राप्त करो। तुम्हारा वंश–परिवार दूब की तरह पनपे। जब तक हिमालय में हिम और गंगा में पानी हो तब तक तुम संसार में रहो अर्थात तुम्हारी कीर्ति अनंत काल तक रहे।) यह ह्दय स्पर्शी परंपरागत आशीर्वचन न केवल हमारे पूर्वजों की ज्ञान, दूरदृष्टि, और परम्परागत समृद्धि का एक अद्भुत उदाहरण है, अपितु यह सदियों से चली आर रही कुमाऊँनी लोक संस्कृति के महत्व को दर्शाते ध्येय वाक्य भी है।

भारतवर्ष का सीमावर्ती हिमालयी राज्य "उत्तराखंड" तीर्थ स्थलों के साथ ही साथ अपनी परंपरा व लोक पर्वो के लिए भी विश्वविख्यात है। प्रकृति के प्रति प्रेम, समर्पण, सद्भाव, धन्य–भाव, समृद्धि व प्रसन्नता, पारस्परिक सौहार्द, नवऋतु के स्वागत का प्रतीक लोकपर्व "हरेला" देवभूमि उत्तराखंड की एक पहचान है। लोकप्रसिद्ध "हरेला'' शब्द का उद्गम हरियाली शब्द से होता है जो समृद्धि का प्रतीक है।

इस पर्व एक अनूठी विशिष्टता है कि यह पर्व वर्ष में एक नहीं वरन तीन बार मनाया जाता है। हिन्दू पंचांग के अनुसार पहला हरेला हिंदू नव वर्ष चैत्र माह के वासंतिक नवरात्रों में प्रतिपदा के दिन बोकर दशमी के दिन काटा जाता है। दूसरा हरेला सावन माह में बड़े धूमधाम से मनाया जाता है। तीसरा हरेला अश्विन माह में शारदीय नवरात्रों के प्रतिपदा को बोकर दशहरा के दिन काटा जाता है। हरेला उत्तराखंड के समूचे कुमाऊँ मण्डल और गढ़वाल के कुछ क्षेत्रों में मनाया जाता है। उत्तराखंड राज्य के अतिरिक्त अन्य हिमालयी राज्यों में हरेला के त्यौहार मनाया जाता है। कांगड़ा, शिमला और सिरमौर क्षेत्रों में हरियाली / रिहयाली, हिमाचल प्रदेश के जुब्बल और किन्नौर क्षेत्रों में दखरैन के रूप में इस त्यौहार को मानते हैं।

हरेला बोने की परंपरागत विधि कुछ इस प्रकार हैः घर के आँगन की क्यारी या खेत से साफ व शुद्ध मिट्टी का चयन किया जाता है फिर उस मिट्टी को निकल कर सुखाया जाता है तत्पश्चात उसे छानकर एक टोकरी में जमा कर लिया जाता है। फिर 5 या 7 अनाज जैसे– मक्का, धान, तिल, भट्ट, उड़द, गहत और जौ डालकर उसे सींचा जाता है। हरेला को घर या मंदिर में भी बोया जाता है। घर में इसे मंदिर के पास अच्छी फसल की कामना के साथ देवी–देवताओं को समर्पित किया जाता है। एक विशेषता यह भी है कि टोकरियों को सूर्य की सीधी रोशनी से दूर रखा जाता है और प्रतिदिन सुबह पानी का छिड़काव किया जाता है। नवें दिन संध्या समय 'पाती (*आर्टिमिशिया वलगेरिस*)' की टहनी से हरेला की गुड़ाई की जाती है और विधिवत पूजन किया जाता है। दसवें दिन अर्थात् हरेला के दिन सुबह स्नान कर, परंपरागत पहाड़ी पकवान बनाये जाते हैं और सर्वप्रथम घर के मंदिर में ईष्ट देव को समर्पित किया जाता है। घर के बुजुर्ग सुबह विधि विधान से पूजा–पाठ करके हरेला देवताओं को चढ़ाते हैं। उसके बाद घर के सभी सदस्यों के सिर पर दीर्घ आयु, उत्तम स्वस्थ्य, सुख समृद्धि के आशीर्वचन के साथ चढ़ाया जाता है।

अतीत में पहाड़ केलोग खेती पर ही निर्भर रहते थे अतः किसान ईष्टदेवों व प्रकृति मां से बेहतर फसल की कामना व पहाड़ों की रक्षा करने का आशीर्वाद मांगते थे सावन मास के हरेले को शिव–शक्ति की विशेष आराधना होती है और मिट्टी से शिव परिवार को बनाया और सजाया जाता है जिसका पूजन होता है लोक बोली में इसे 'डिकारे' कहते हैं।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी हरेला अपना एक अनूठा महत्व रखता है। यह एक ऋतु आधारित पर्व तथा सम्पूर्ण वर्ष खेती को जीवंत बनाए रखने का प्रतीक है। हरेला पर्व नई ऋतु के शुरू होने की सूचना देता है, उत्तराखण्ड में मुख्यतः तीन ऋतुयें होती हैंः शीत, ग्रीष्म और वर्षा। शीत ऋतु की शुरूआत अश्विन मास से होती है, इसी प्रकार ग्रीष्म ऋतु की शुरूआत चैत्र मास से होती है और वर्षा ऋतु की शुरूआत श्रावण मास से होती है। हरेला को पहाड़ को लोक विज्ञान से जोड़ता है। इसे 'बीज परीक्षण त्योहार' भी कहें तो अतिश्योक्ति न होगी। प्रदेश में मुख्यतया तीन फ़सलें रबी, ख़रीफ़ और जायद उगाई जाती हैं और यह त्योहार बुवाई से ठीक पहले मनाया जाता है। इस तरह इस त्योहार से बीज की गुणवत्ता और बीज के अंकुरण क्षमता और प्रतिशतता का अनुमान लगाया जाता है। हरेला के तिनके को देखकर घर के अनुभवी बड़े बुज़ुर्ग पूर्वानुमान लगा लेते हैं कि इस बार की फ़सल होने की संभावतना कैसी होगी। हमारे पूर्वजों ने किस सरलता और सहजता से त्योहारों के माध्यम से जनसाधारण को खेती से सम्बंधित महत्वपूर्ण जानकारी को जोड़ दिया यह सोचकर ह्दय विस्मित हो जाता है। हरेला मिश्रित फ़सल (मिक्स्ड क्रॉपिंग) को बढ़ावा देता है। मिश्रित फ़सल सतत कृषि (सस्टेनेबल एग्रीकल्चर) के लिए आवश्यक प्रतीत होता है।

हरेला सुख, समृद्धि और हरियाली का प्रतीक तो है ही साथ ही साथ इस पर्व का सामाजिक पक्ष बहुत गहरा है। यह समाज में एकजुटता, समरसता और सामंजस्य स्थापित करता है। नवविवाहित स्त्रियां इस पर्व में अपने मायके आती हैं। शिक्षा, रोजगार या अन्य प्रयोजन से पहाड़ से दूर रहने वाले कई प्रवासी हरेला के दिन अपने घर आते हैं। जो लोग किन्हीं कारणों से घर नहीं जा पाते उनके परिवार के सदस्य उन्हें डाक अथवा अन्य परिचित द्वारा हरेला भेजते हैं। संयुक्त परिवार कितना भी बड़ा हो पर परंपरागत रूप से हरेला एक ही जगह पर बोया जाता है चाहे परिवार के सदस्य अलग–अलग स्थानों में रहते हों, हरेला उनके पैतृक घर में ही बोया जाता है। जहां वर्तमान में संयुक्त परिवार की परंपरा ख़त्म होती जा रहे है और एकल परिवारों का चलन अधिक हो गया है यह पर्व हरेला हमको एक साथ रहने की शिक्षा देता है और अपने अपनों से जोड़ता है। हरेला का अपना एक गहन सांस्कृतिक महत्त्व भी है। इस त्यौहार के उपलक्ष्य में कई स्थानों पर मेलों का आयोजन किया जाता है जिसमें भीमताल का हरेला मेला बहुत प्रसिद्ध है। कई गाँवों में हरेला सामूहिक रूप से गाँव के मंदिर में बोया जाता है और हरेला के दिन सभी ग्रामवासी मंदिर में एकत्रित होकर इस त्यौहार को मानते हैं तथा एक दूसरे को शुभकामनाएँ व आशीर्वचन देते हैं।

वर्तमान कालखंड में तापमान वृद्धि व जलवायु परिवर्तन के कारण प्रकृति का संतुलन बिगड़ने से पृथ्वी का कोई भी कोना अछूता नहीं है। हिमालयी राज्य भी त्रासदी से दूर नहीं हैं। विकास के नाम पर मानव की लालसा, अतिमहत्वाकांक्षा और असंवेदनशीलता के कारण जंगल समाप्त हो गए हैं या समाप्त होने के कगार पर हैं। वन्य जीवों का अस्तित्व खतरे में है न जाने कितनी प्रजातियां विलुप्त हो गयी हैं या होने की कगार में हैं। मनुष्य प्रकृति से दूर होता जा रहा हैऐसे समय में हरेला जैसे त्योहारों की प्रासंगिकता बढ़ जाती है। यह सत्य है कि वास्तव में समृद्ध प्रकृति के बिना ख़ुशहाल मानव जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती।

वैसे पर्यावरण के प्रति जागरूकता और संवेदनशीलता भारतीय समाज में आदिकाल से रही है। भारतीय ऋषि मुनियों ने हज़ारों वर्ष पूर्व प्राकृतिक व्यवस्था को आत्मसात करने का मार्ग अपनाया, क्योंकि प्रकृति के साथ छेड़–छाड़ पूरे जीवमण्डल के लिए ख़तरा है, जिसके उद्धरण वेदों पुराण, उपनिषद्, श्रीमद्भागवत गीता, रामायण, महाभारत आदि में मिलते हैं। इस त्योहार का उद्देश्य भी प्रकृति संरक्षण व संवर्धन है। कुमाऊँ में ऐसी मान्यता है कि हरेला के दिन मात्र टहनी रोपण से एक नया पौधा तैयार हो जाता है। इसीलिए इस दिन प्रत्येक परिवार द्वारा अनिवार्य रूप से फलदार वृक्ष लगाए जाते हैं। फलदार वृक्ष न सिर्फ मनुष्यों

के लिए लाभदायक हैं बल्कि जैविक खाद्य शृंखला को जीवंत बनाए रखने के लिए नितांत ज़रूरी है। हरेला लोगों को अपनी ज़मीन से जुड़ रहने और एक कर्मठ जीवन जीने का संदेश देता है ताकि जीवन में निरन्तरता बनी रहे।

हरेला त्यौहार के दिन पर्यावरण दिवस की तर्ज पर वृक्षारोपण कार्यक्रमों के आयोजनों द्वारा प्रकृति और संस्कृति दोनों के एकीकृत संरक्षण का संदेश जनमानस में प्रसारित होगा। पर्यावरण और हरियाली के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के लिए हरेला एक सामासिक संस्कृति के चिह्न के रूप में भी अपनी भूमिका दे सकता है।

आज के वर्तमान परिदृश्य में हरेला जैसे सांस्कृतिक लोक त्यौहारों का महत्व संस्कृति के संरक्षण में भी काफी अहम है। पलायन और रोजगार की तलाश में कुमाऊं का युवा दिल्ली, नोएडा, गुड़गांव की ओर पलायन कर रहा है। ऐसे में इन शहरों के अपार्टमेंट कल्चर में जाकर भी वह अपनी संस्कृति को भुलते जा रहे हैं। ऐसे में सांस्कृतिक चेतना जागृत कर युवा पीढ़ी को अपनी भाषा, संस्कृति और लोक त्यौहारों के प्रति आत्मीय भाव जागृत करने की आवश्यकता है, जिससे न केवल वर्तमान युवा पीढ़ी अपितु आने वाली भावी पीढ़ी भी अपनी संस्कृति से जुड़ी रह सके। पुरानी पीढ़ी व नई पीढ़ी के मध्य इस सांस्कृतिक सेतु के निर्माण में माता–पिता, क्षेत्र के लोक कलाकार, प्रबुद्ध जन, बुर्जुग आदि नवचेतना के प्रसार में अहम भूमिका निभा सकते हैं।

भारतीय शास्त्रों में जल के महत्व का वर्णन

भवतोष शर्मा
उत्तराखंड विज्ञान शिक्षा एवं अनुसन्धान केंद्र (यूसर्क), देहरादून

यह जगत पांच तत्वों क्षिति, जल, अग्नि, गगन और समीर से मिलाकर बना है। इस सृष्टि का आधार हमारी पृथ्वी है और सभी पांच तत्व भूमि से समबद्ध हैं। पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति जल में हुई। वर्तमान में जीवों के जीवन का आधार भी जल है। वर्तमान वैज्ञानिक युग में जल से संबंधित बहुत से शोध, अनुसन्धान और नवाचारी कार्य किये गए हैं। भारतीय संस्कृति एवं ज्ञान परम्परा में हमारे ऋषियों और मुनियों ने विभिन्न वेदों एवं पुराणों आदि में जल तत्व को पूजनीय मानते हुए वर्णित किया है। अथर्ववेद में धरती को पूजनीय मानते कहा गया है कि

''माता भूमिः, पुत्रो अहं पृथिव्या''

अर्थात् धरती मेरी माता है और मैं उसका पुत्र हूँ।

प्रकृतिः पंचभूतानि ग्रहलोकस्वरास्तथा,
दिशः कालश्च सर्वेषां सदा कुर्वंतु मंगलम्।

प्रकृति, पञ्चभूत (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश), ग्रह (मंगल, बुध, शुक्र आदि), संगीत के सातों सुर, दसों दिशाएं और भूत, वर्तमान और भविष्य समस्त कालों में सदैव कल्याणकारी हों।

हमारे ऋषि मुनि जानते थे कि पृथ्वी का आधार जल और जंगल है इसलिए उन्होंने पृथ्वी की रक्षा के लिए वृक्ष और जल को महत्व देने को कहा कि

''वृक्षाद् वर्षति पर्जन्यः पर्जन्यादन्न सम्भवः''

अर्थात् वृक्ष जल है, जल अन्न है, अन्न जीवन है ।

ऋगवेद के प्रथम मण्डल के पांचवें अध्याय में जल की महत्ता एवं उसकी उपासना कुछ इस प्रकार की गयी है—

अप्सु अन्तः अमृतम् अप्सु भेशजम् अपाम् उत प्रशस्तये, देवाः भवत वाजिनः।

अर्थात् जल में अमृत है, जल में औषधि है, हे ऋत्विज्जनों, ऐसे श्रेष्ठ जल की प्रशंसा अर्थात् स्तुति करने में शीघ्रता बरतें।

भारतीय वेदों एवं उपनिषदों में जल विषयक अनेक श्लोक हैं। अथर्ववेद में कहा गया है कि वह भूमि जिसमें समुद्र, नदियां एवं अन्य जल स्रोत हैं, जिस पर सभी मिलाकर खेती करते करते हैं, अन्न का उत्पादन होता है, भूमि जो पीने का जल प्रदान करती है वह हमको धारण करे।

यस्यां समुद्र उत सिंधु रापो,
यस्य मन्नम कृष्टयः संब भवु,
यस्यामिदम जिन्वति प्राण देजत,
सा नो भूमिः पूर्वपेये दधातु।।
(अथर्ववेद 12/1/3)

ऋग्वेद में वर्णन किया गया है कि आकाश से वर्षा द्वारा मिलने वाला जल, खोदकर लाया गया जल, जो जल स्वयं झरनों आदि में बह रहा है, इस प्रकार इन सभी प्रकार का समुद्र की ओर जाने वाला जल मेरे सुख को बढ़ाये।

या आपो दिव्या उत वां स्रवन्ति,
खनित्रिमाउत वा याः स्वयंजाः,
समुद्रार्थाः याः शुचयः पावकास्ता,
आपो देवीरिह मामवन्तु।।

(ऋग्वेद 7/49/2)

गंगा सरस्वती सिंधु ब्रह्मपुत्राश्च गण्डकी
कावेरी यमुना रेवा कृष्णा गोदा महानदी।।

पवित्र नदियोंः गंगा, सरस्वती, सिंधु, ब्रह्मपुत्र, गण्डकी, कावेरी, यमुना, रेवा (नर्मदा), कृष्णा, गोदावरी और महानदी को हम सर्वदा हृदय में धारण करें।

भारतीय शास्त्रों में शुद्धजल को रोगनाशक बताते हुए जल की स्तुति की गयी है :

आप इद्धा उ भेषजीरापो
अमीवचातनीः आपः सर्वस्य
भेषजीस्ता स्तकृण्वन्तु भेषजम्।।

(ऋग्वेद – 10/139/6)

अर्थात् शुद्ध जल में सभी प्रकार के रोगों को नष्ट करने की शक्ति होती है। जल में रोगों के कारणों को निष्क्रिय करने की सामर्थ्य भी विद्यमान होती है अतः यह सभी प्राणियों के लिए एक अचूक औषधि के रूप में काम आता है।

हमारी भारतीय संस्कृति में जल स्रोतों को दूषित न करने का स्पष्ट रूप से कहा गया हैः

नाप्सु मूत्रम् पुरीषं वाष्टो वनं समुत्सृजेत्
अभेध्यलिप्तमन्यद्वा लोहितं वा विषाणि वा।।

(मनुस्मृति 4–56)

अर्थात जल में मलमूत्र का त्याग करना, थूकना, खून, विष या अन्य प्रकार के प्रदुषण नहीं करना चाहिए।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद्दुःखभाग्भवेत।।

गणितज्ञ नील्स हेनरिक एबेल

सुभाष चंद्र लखेड़ा
नई दिल्ली

नील्स हेनरिक एबेल (5 अगस्त 1802–6 अप्रैल 1829) एक नॉर्वेजियन गणितज्ञ थे जिन्होंने विभिन्न क्षेत्रों में अग्रणी योगदान दिया। गौरतलब है कि उन्होंने गरीबी में रहते हुए अपने गणितीय शोध किए और 26 साल की उम्र में तपेदिक से उनकी मृत्यु हो गई।

उनका अधिकांश कार्य उनके कामकाजी जीवन के छह या सात वर्षों से ताल्लुक रखता है। एबेल के बारे में, फ्रांसीसी गणितज्ञ चार्ल्स हर्मिट (24 दिसंबर, 1822–14 जनवरी, 1901) ने कहा था, 'एबेल ने गणितज्ञों को पांच सौ वर्षों तक व्यस्त रखने के लिए पर्याप्त काम छोड़ दिया है।'

नील्स हेनरिक एबेल का जन्म नॉर्वे के नेस्ट्रैंड में पादरी सोरेन जॉर्ज एबेल और ऐनी मैरी सिमोंसेन की दूसरी संतान के रूप में हुआ था। उनके पिता, सोरेन जॉर्ज एबेल के पास धर्मशास्त्र और दर्शनशास्त्र में डिग्री थी और उन्होंने फिन्नॉय में पादरी के रूप में कार्य किया था। सोरेन के पिता, नील्स के दादा, हांज माथियास एबेल भी रिसोर शहर के पास गेस्टेड चर्च में एक पादरी थे। सोरेन ने अपना बचपन गेस्टेड में बिताया था, और वहां पादरी के रूप में भी काम किया था; और 1804 में अपने पिता की मृत्यु के बाद, सोरेन को गेस्टेड में पादरी नियुक्त किया गया और परिवार वहां चला गया। एबेल परिवार की उत्पत्ति श्लेस्विग, जर्मनी में हुई और वे 17वीं शताब्दी में नॉर्वे आए थे।

नील्स एबेल की माँ ऐनी मैरी सिमोंसेन के पिता, नील्स हेनरिक सैक्सिल्ड सिमोंसेन, एक व्यापारी जहाज–मालिक थे। कहा जाता है कि वह अपने क्षेत्र के सबसे अमीर व्यक्ति थे। ऐनी मैरी अपनी दो सौतेली माताओं के साथ अपेक्षाकृत विलासितापूर्ण वातावरण में पली–बढ़ी थी। उपलब्ध जानकारी के अनुसार उन्हें पार्टियों और सामाजिक समारोहों की व्यवस्था करने में मज़ा आता था और वह बच्चों के पालन – पोषण में बहुत कम रुचि लेती थी। नील्स हेनरिक और उनके भाइयों को उनके पिता ने शुरुआती दौर में हस्तलिखित किताबें देकर स्कूली शिक्षा दी।

चित्र 1: नील्स हेनरिक एबेल (5 अगस्त 1802–6 अप्रैल 1829)

वर्ष 1814 में उनके पिता सोरेन एबेल नॉर्वे की संसद के लिए चुने गए। उल्लेखनीय है कि नॉर्वे की संसद को ' स्टॉर्टिंग (नार्वेजियनः स्टॉर्टिंगेट [शाब्दिक अर्थ 'महान चीज़']) कहते हैं। इसे वर्ष 1814 में नॉर्वे के संविधान द्वारा स्थापित किया गया था। गौरतलब है कि स्टॉर्टिंग की बैठकें वर्ष 1866 तक क्रिश्चियनिया (जो अब ओस्लो के नाम से जाना जाता है) के कैथेड्रल स्कूल के मुख्य हॉल में आयोजित की जाती थी। सोरेन को यह स्कूल बेहतरीन लगा और उन्होंने फैसला किया कि उनके सबसे बड़े बेटे, हांज एबेल को अगले वर्ष वहां पढ़ाई शुरू करनी चाहिए। बहरहाल, जब हांज को वहां भेजने का समय करीब आया तो हांज घर छोड़ने से इतना दुखी और उदास था कि उसके पिता ने उसे दूर भेजने की हिम्मत नहीं की। उन्होंने उसके स्थान पर नील्स को भेजने का निर्णय लिया।

वर्ष 1815 में, नील्स एबेल ने 13 साल की उम्र में कैथेड्रल स्कूल में प्रवेश लिया। उनके बड़े भाई हांज एक साल बाद वहां उनके साथ शामिल हुए। वे कमरा साझा करते थे और एक साथ कक्षाएं लेते थे। वर्ष 1818 में स्कूल में एक नए गणित शिक्षक, बर्न्ट मिकाइल होंबो नियुक्त हुए।

उन्होंने गणित में नील्स हेनरिक की प्रतिभा देखी और उन्हें इस विषय का उन्नत स्तर तक अध्ययन करने के लिए प्रोत्साहित किया। उन्होंने नील्स को स्कूल के बाद निजी शिक्षा भी दी।

सब कुछ ठीक चल रहा था कि वर्ष 1818 में सोरेन एबेल को नॉर्वेजियन संविधान सभा के मेजबान कार्स्टन एंकर का अपमान करने के लिए महाभियोग का सामना करना पड़ा और सितंबर 1818 में वह अपने बर्बाद राजनीतिक करियर के साथ नेस्ट्रैंड लौट आए। उन्होंने अत्यधिक शराब पीना शुरू कर दिया और केवल दो साल बाद वर्ष 1820 में 48 वर्ष की आयु में उनकी मृत्यु हो गई।

बर्न्ट मिकाइल होंबो ने नील्स हेनरिक एबेल को स्कूल में बने रहने के लिए छात्रवृत्ति प्रदान की और रॉयल फ्रेडरिक विश्वविद्यालय में उनके अध्ययन हेतु अपने दोस्तों से धन जुटाया। जब एबेल ने वर्ष 1821 में विश्वविद्यालय में प्रवेश किया, तो वह पहले से ही नॉर्वे में सबसे जानकार गणितज्ञ थे। एबेल ने विश्वविद्यालय पुस्तकालय में उपलब्ध सभी नवीनतम गणितीय साहित्य का अध्ययन किया था।

उस दौरान एबेल ने गणित की एक ऐसी समस्या को सुलझाने पर अपना ध्यान लगाया जिसका 250 वर्षों से अधिक समय से गणितज्ञ समाधान ढूंढ रहे थे। वर्ष 1821 में, एबेल ने सोचा कि उसे समाधान मिल गया है। क्रिश्चियनिया (ओस्लो) में गणित के दो प्रोफेसरों, सोरेन रसमुसिन और क्रिस्टोफर हेंस्टीन ने एबेल के सूत्रों में कोई त्रुटि नहीं पाई, और इस काम को कोपेनहेगन में प्रमुख गणितज्ञ कार्ल फर्डिनेंड डीजन के पास भेजा। उन्हें भी कोई दोष नहीं मिला लेकिन फिर भी उन्हें संदेह था कि जिस समस्या का समाधान दुनिया के इतने सारे उत्कृष्ट गणितज्ञ नहीं खोज पाए थे, उसे क्रिश्चियनिया के एक अज्ञात छात्र ने कैसे खोजा। इसके बावजूद डीजन ने एबेल के असामान्य रूप से तेज दिमाग का उल्लेख किया और माना कि ऐसे प्रतिभाशाली युवा को अपनी क्षमताओं को पांचवीं डिग्री समीकरण जैसी मामूली और अनुपयोगी समस्याओं को सुलझाने पर बर्बाद नहीं करना चाहिए। डीजन का कहना था कि एबेल भविष्य में गणित में अत्यधिक महत्वपूर्ण कार्य करेगा। डीजन ने एबेल से अपने द्वारा खोजे समाधान का एक संख्यात्मक उदाहरण देने को कहा। डीजन को ऐसा एक उदाहरण प्रदान करने के प्रयास करते समय एबेल को अपने पेपर में एक गलती मिली। इससे वर्ष 1823 में यह मालूम हुआ कि पांचवें या उच्चतर डिग्री के समीकरणों का समाधान असंभव था।

एबेल ने वर्ष 1822 में स्नातक की उपाधि प्राप्त की। उनका प्रदर्शन गणित में असाधारण रूप से उच्च और अन्य विषयों में औसत था। स्नातक होने के बाद, विश्वविद्यालय के प्रोफेसरों ने एबेल की आर्थिक रूप से सहायता की और प्रोफेसर क्रिस्टोफर हेंस्टीन ने उसे अपने घर में रहने के लिए एक कमरा दिया। एबेल ने बाद में सुश्री हेंस्टीन को अपनी दूसरी माँ के रूप में देखा। यहां रहते हुए, नील्स एबेल ने अपने छोटे भाई पेडर एबेल की यूनिवर्सिटी में दाखिला लेने के लिए होने वाली प्रवेश परीक्षा की तैयारी में मदद की। उन्होंने अपनी बहन एलिज़ाबेथ को भी शहर में काम ढूंढने में भी मदद की।

वर्ष 1823 की शुरुआत में नील्स एबेल ने अपना पहला लेख नॉर्वे की पहली वैज्ञानिक पत्रिका 'मैगज़ीन फॉर द नेचुरल साइंसेज' में प्रकाशित किया जिसकी सह– स्थापना प्रोफेसर हेंस्टीन ने की थी। एबेल के कई लेख इस मैगज़ीन में प्रकाशित हुए, लेकिन पत्रिका को जल्द ही एहसास हुआ कि उनके लेख आम पाठकों के लिए उपयुक्त नहीं थे। वर्ष 1823 में एबेल ने फ्रेंच में 'अ जनरल रिप्रजेंटेशन ऑफ द पॉसिबिलिटी टू इंटीग्रेट ऑल डिफरेंशियल फार्मूलॉज' शीर्षक से एक पेपर लिखा। उनका लेख समीक्षा के दौरान कहीं खो गया और उसके बाद कभी नहीं मिला।

वर्ष 1823 के मध्य में प्रोफेसर रसमुसिन ने एबेल की आर्थिक मदद की ताकि वह कोपेनहेगन की यात्रा कर सके और वहां फर्डिनेंड डीजन और अन्य गणितज्ञों से मिल सके। कोपेनहेगन में रहते हुए एबेल ने फर्मेट की अंतिम प्रमेय पर कुछ काम किया। एबेल के चाचा पेडर मैंड्रप टक्सन कोपेनहेगन के क्रिश्चियनशैवन में एक नौसैनिक अड्डे पर रहते थे और वहां एक पार्टी के दौरान नील्स एबेल की मुलाकात अपनी भावी मंगेतर क्रिस्टीन केम्प (25 जनवरी, 1804 – 03 जुलाई, 1862) से हुई। वर्ष 1824 में क्रिस्टीन गवर्नेस के रूप में काम करने के लिए सोन, नॉर्वे चली गईं और क्रिसमस पर दोनों की सगाई हो गई।

चित्र 2: क्रिस्टीन केम्प (25 जनवरी, 1804–03 जुलाई, 1862)

कोपेनहेगन से लौटने के बाद, एबेल ने जर्मनी और फ्रांस में शीर्ष गणितज्ञों से मिलने के लिए सरकारी छात्रवृत्ति के लिए आवेदन किया लेकिन इसके बदले उन्हें क्रिश्चियनिया में रहने तथा जर्मन और फ्रेंच का अध्ययन करने के लिए दो साल के लिए कुछ धन राशि दी गई। इन भाषाओं का अध्ययन करते हुए एबेल ने 1824 में अपना पहला उल्लेखनीय शोध पत्र 'मैमरी ऑन एल्जेब्रिक इक्वेशंस व्हेयर वी डिमांस्ट्रेट द इमपॉसिबिलिटी ऑफ सॉल्विंग द जनरल इक्वेशन ऑफ द फिफ्थ डिग्री (बीजगणितीय समीकरणों पर संस्मरण जिसमें पाँचवीं डिग्री के सामान्य समीकरण को हल करने की असंभवता सिद्ध है)' शीर्षक से प्रकाशित किया। इसका अधिक विस्तृत प्रमाण वर्ष 1826 में क्रेल्स जर्नल के पहले खंड में प्रकाशित हुआ था।

वर्ष 1825 में एबेल ने नॉर्वे–स्वीडन के राजा कार्ल योहान को एक व्यक्तिगत पत्र लिखकर विदेश यात्रा की अनुमति देने का अनुरोध किया। उन्हें यह अनुमति दे दी गई और सितंबर 1825 में उन्होंने विश्वविद्यालय के अपने चार दोस्तों क्रिश्चियन पी.बी. बोएक, बल्थाजार एम. केइलहाऊ, निकोले बी. मोलर और ओटो टैंक के साथ क्रिश्चियनिया छोड़ दिया। एबेल के ये चार दोस्त भूविज्ञान का अध्ययन करने के लिए बर्लिन और आल्प्स की यात्रा कर रहे थे। एबेल उनका पीछा करते हुए पहले कोपेनहेगन और वहां से गौटिंगेन की ओर जाना चाहता था। उनकी छात्रवृत्ति की शर्तों में यह निर्धारित किया गया था कि उन्हें गौटिंगेन में गॉस से मिलना था और फिर पेरिस जाना था।

बहरहाल, जब वह कोपेनहेगन तक पहुंचे तो उन्होंने अपना कार्यक्रम बदल दिया। अब वह पहले अपने दोस्तों के साथ बर्लिन और उसके बाद गौटिंगेन और पेरिस जाना चाहते थे। रास्ते में उन्होंने अल्टोना में (अब हैम्बर्ग का एक जिला) खगोलशास्त्री हेनरिक क्रिश्चियन शूमाकर से मुलाकात की। इसके बाद उन्होंने बर्लिन में चार महीने बिताए जहां वे ऑगस्ट लिओपोल्ड क्रेल से अच्छी तरह परिचित हो गए जो उस समय अपनी गणितीय पत्रिका 'जर्नल फॉर प्योर एंड अप्लायड मैथेमैटिक्स' प्रकाशित करने वाले थे। इस परियोजना को एबेल ने गर्मजोशी से प्रोत्साहित किया। एबेल ने इसके पहले वर्ष में इसमें अपने सात लेखों का योगदान दिया।

बर्लिन से एबेल भी अपने दोस्तों के साथ आल्प्स तक गए। वह जॉर्ज अमाडेस कार्ल फ्रेडरिक नौमान और उनके भाई गणितज्ञ ऑगस्ट नौमान से मिलने लीपज़िग और फ़्रीबर्ग गए। फ़्रीबर्ग में एबेल ने गणित की अनेक समस्याओं पर शोध किया। फ़्रीबर्ग से वे ड्रेसडेन, प्राग, वियना, ट्राइस्टे, वेनिस, वेरोना, बोल्ज़ानो, इंसब्रुक, लुज़र्न और बेसल गए। जुलाई 1826 से एबेल ने अकेले ही बेसल से पेरिस तक की यात्रा की। एबेल ने अपना अधिकांश शोध कार्य क्रेल्स जर्नल में प्रकाशित होने के लिए बर्लिन भेजा था, लेकिन उन्होंने फ्रेंच एकेडमी ऑफ साइंसेज के लिए अपने सबसे महत्वपूर्ण शोध कार्य को बचा लिया था जो कि बीजगणितीय अंतरों के योग पर एक प्रमेय थी। एक चित्रकार योहान गोर्बिट्ज की मदद से उन्हें पेरिस में एक अपार्टमेंट मिला और उन्होंने प्रमेय पर अपना काम जारी रखा। उन्होंने अक्टूबर 1826 में इसे पूरा किया और इसे अकादमी को सौंप दिया। इसकी समीक्षा ऑगस्टिन–लुई कॉची द्वारा की जानी थी। एबेल के काम को पेरिस में शायद ही जाना जाता था, और विनम्रता ने उन्हें अपने शोध की घोषणा करने से रोक दिया था। बहरहाल, उनकी इस प्रमेय को अकादमी ने एक तरफ रख दिया और फिर इसको पूरी तरह से भुला दिया गया।

एबेल की सीमित वित्तीय स्थिति ने अंततः उन्हें जनवरी 1827 में अपना दौरा छोड़ने के लिए मजबूर कर दिया। वह बर्लिन लौट आये और उन्हें वहां क्रेल्स जर्नल के संपादक के रूप में एक पद की पेशकश की गई लेकिन उन्होंने उसे स्वीकार करने से इनकार कर दिया। मई 1827 तक वह नॉर्वे वापस आ गये। उनके विदेश दौरे को विफलता के रूप में देखा गया था। वह गौटिंगेन में गॉस से मिलने नहीं गए और न उन्होंने पेरिस में कुछ प्रकाशित किया था। फलस्वरूप, उनकी छात्रवृत्ति का नवीनीकरण नहीं किया गया और उन्हें नॉर्जेस बैंक से कुछ निजी ऋण लेना पड़ा। उन्होंने ट्यूशन भी पढ़ाना शुरू कर दिया। उन्होंने अपना अधिकांश कार्य क्रेल्स जर्नल को भेजना जारी रखा। लेकिन 1828 के मध्य में, कार्ल जैकोबी के साथ प्रतिद्वंद्विता में, उनका अल्टोना में खगोल के प्रथम अंतरराष्ट्रीय जर्नल 'एस्ट्रोनॉमिकल नोट्स में 'इलिप्टिक फंक्शंस पर एक महत्वपूर्ण शोध कार्य प्रकाशित हुआ।

अपने पेरिस प्रवास के दौरान एबेल को तपेदिक हो गया था। क्रिसमस 1828 में वह अपनी मंगेतर से मिलने के लिए स्लेज से फ्रोलेंड नॉर्वे गए। यात्रा के दौरान वह गंभीर रूप से बीमार हो गये। बहरहाल, अपनी तबीयत में एक अस्थायी सुधार से वे अपनी मंगेतर के साथ कुछ अच्छा वक्त बिता पाए। वापस आने पर 6 अप्रैल 1829 को उनकी मृत्यु हो गई। मृत्यु के दो दिन बाद जर्मन गणितज्ञ ऑगस्ट लिओपोल्ड क्रेल से उनके नाम वह पत्र पहुंचा जिसमें यह सूचित किया गया था कि क्रेल ने उन्हें बर्लिन विश्वविद्यालय में प्रोफेसर के रूप में नियुक्ति दिलाई है।

चित्र 3: अगस्त लिओपोल्ड क्रेल (11 मार्च, 1780–6 अक्टूबर, 1855)

संस्थान समाचार

संस्थान, भारत सरकार की राजभाषा नीति का अनुपालन करते हुये राजभाषा के प्रयोग में उत्तरोत्तर प्रगति के लिये प्रतिबद्ध है तथा नियमित अंतराल पर राजभाषा क्रियान्वयन के प्रगति विवरण राजभाषा विभाग, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय को भेज रहा है। राजभाषा कार्यान्वयन समिति संस्थान में राजभाषा प्रयोग की नियमित अंतराल पर समीक्षा करती है तथा राजभाषा के दैनिक प्रयोग में अभिवृद्धि के लिये निरन्तर प्रयासरत् रहती है ।

स्वतंत्रता दिवस 2023: संस्थान द्वारा इस वर्ष स्वतंत्रता दिवस समारोह अत्यन्त हर्षोल्लास के साथ मनाया। संस्थान के निदेशक डॉ. कालाचाँद साँइ ने ध्वजारोहण कर अपने वक्तव्य में स्वतंत्रता का महत्व बताया। अपने स्वतंत्रता दिवस के वक्तव्य में उन्होंने कहा कि हम अपने कार्यों के प्रति ईमानदारी तथा पूर्ण समर्पित होकर राष्ट्र की सेवा कर सकते हैं। हमारा शोध समाज हित में आम जनमानस के लिये उपयोगी होना चाहिये। इस अवसर पर उन्होंने संस्थान की प्रगति का विवरण भी दिया। स्वतंत्रता दिवस पर कला प्रतियोगिता व विभिन्न खेल प्रतियोगिताओं का भी आयोजन किया गया। संस्थान के सभी कर्मचारियों ने विभिन्न वर्गों की प्रतियोगिताओं में रुचि अनुसार उत्साहपूर्वक प्रतिभाग किया।

गणतंत्र दिवस समारोह 2024: हर वर्ष की भांति इस वर्ष भी गणतंत्र दिवस समारोह हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। डॉ. कालाचाँद साँइ, निदेशक वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान द्वारा ध्वजारोहण किया गया। उन्होंने अपने वक्तव्य में राष्ट्रीय विकास हेतु अपनी अपनी जिम्मेदारी का ईमानदारी से निर्वहन करने पर जोर दिया। गणतंत्र दिवस के उपलक्ष में सांस्कृतिक कार्यक्रम के साथ साथ संस्थान में कार्यरत सभी कर्मचारी, अधिकारी, शोध छात्र तथा उनके परिवार जनों की रचनात्मक गतिविधियों को प्रदर्शित करने के लिये "दर्पण" नाम से एक प्रदर्शनी आयोजित की गयी ।

हिन्दी पखवाड़ा 2023: राजभाषा कार्यान्वयन समिति के तत्वावधान में संस्थान में दि. 14 सितम्बर से 28 सितम्बर 2023 तक हिन्दी पखवाडा मनाया गया। इस वर्ष संस्थान में हिंदी पखवाड़े का शुभारंभ माननीय गृह मंत्री श्री अमित शाह द्वारा पूणे, महाराष्ट्र में हिंदी दिवस कार्यक्रम के उद्घाटन के साथ हुआ। संस्थान में हिंदी पखवाड़े की सभी गतिविधियां 15 सितंबर 2023 से प्रारंभ की गई। पखवाड़ा कार्यक्रम में विभिन्न प्रतियोगिताएं आयोजित की गई।

पखवाड़ा कार्यक्रम में संस्थान से बाहर अन्य कार्यक्षेत्रों के सम्मानित व्यक्तित्वों की एक व्याख्यान श्रृंखला आयोजित की गयी। इस श्रृंखला में पहला व्याख्यान बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ से सेवानिवृत्त तथा प्रसिद्ध वैज्ञानिक एवं विज्ञान संचारक डॉ. चन्द्रमोहन नौटियाल द्वारा दिया गया। उनके व्याख्यान का शीर्षक था 'चन्द्रमा तथा सूरज की ओर भारत की उड़ान'। अपने व्याख्यान में उन्होंने भारत के अंतरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में उठाये गये सफल कार्यक्रमों की जानकारी व उनके महत्व पर प्रकाश डाला। श्रृंखला का दूसरा व्याख्यान सुप्रसिद्ध विज्ञान लेखक श्री देवेन्द्र मेवाड़ी द्वारा दिया गया। उन्होंने अपना व्याख्यान हिन्दी में विज्ञान लेखन की परंपरा व प्रयोग पर केंद्रित किया। श्रृंखला का तीसरा व्याख्यान लोक संस्कृति में साहित्य लिखने वाली श्रीमती शांति अमोली बिंजोला द्वारा लोकगीत व लोकाचार पर दिया गया । उनके द्वारा पर्वतीय समाज की संस्कृति व उनके लोकगीतों पर प्रकाश डाला गया। पखवाडे में श्रृंखला का अंतिम व्याख्यान उत्तराखण्ड की विश्वप्रसिद्ध जागर गायिका पद्मश्री श्रीमती बंसती बिष्ट द्वारा दिया गया। अपने व्याख्यान में उन्होंने उत्तराखण्ड की जागर गायन प्रथा के महत्व को समझाया।

पखवाड़ा कार्यक्रम का मुख्य आकर्षण दो वर्गों में आयोजित फोटोग्राफी प्रतियोगिता थी। प्रथम वर्ग में अपने–अपने भू–वैज्ञानिक क्षेत्रीय भ्रमण के दौरान स्वयं द्वारा खींचे गए फोटोग्राफों के मध्य थी। इस वर्ग के विजेता डॉ एन. प्रेमजीत रहे। द्वितीय वर्ग में भूविज्ञान विषय से इतर फोटोग्राफ्स प्रदर्शित किये जाने थे। इस वर्ग के विजेता संस्थान के शोध–छात्र श्री पवन पाटीदार रहे। पखवाड़े में संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा भी व्याख्यान दिए गए। इनमें डॉ

अजय पॉल, डॉ गौतम रावत, डॉ प्रेमजीत व श्री तेजेन्द्र आहूजा के व्याख्यान प्रमुख रहे। संस्थान के कर्मचारियों के लिए आयोजित निबंध प्रतियोगिता में भी सभी ने उत्साह पूर्वक भाग लिया। संस्थान में आयोजित निबंध तथा वाद विवाद प्रतियोगिता में देहरादून शहर के विभिन्न स्कूलों के विद्यार्थियों ने उत्साह पूर्वक भाग लिया।

हिन्दी पखवाड़ा समापन समारोह में मुख्य अतिथि के रुप में डॉ हरेन्द्र सिंह बिष्ट, निदेशक, सी.एस.आई.आर. भारतीय पैट्रोलियम संस्थान, देहरादून ने कार्यक्रम को संबोधित किया। अपने उद्बोधन में उन्होंने विज्ञान के विकास में मातृभाषा की भूमिका के विषय पर चर्चा की। हिन्दी पखवाड़ा समारोह का समापन मुख्य अतिथि द्वारा विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कार वितरण कर किया गया

इस वर्ष संस्थान की हिन्दी गृह पत्रिका अश्मिका का उन्नतीसवाँ अंक प्रकाशित हुआ। जिसमें संस्थान से तथा विभिन्न संस्थानों से लेखकों ने ज्ञानवर्धक वैज्ञानिक लेखों को सरल सहज भाषा में लिख कर अपना योगदान दिया। अश्मिका का यह अंक पाठकों द्वारा काफी सराहा गया।

स्वतंत्रता दिवस - 2023

हिन्दी पखवाड़ा -2023

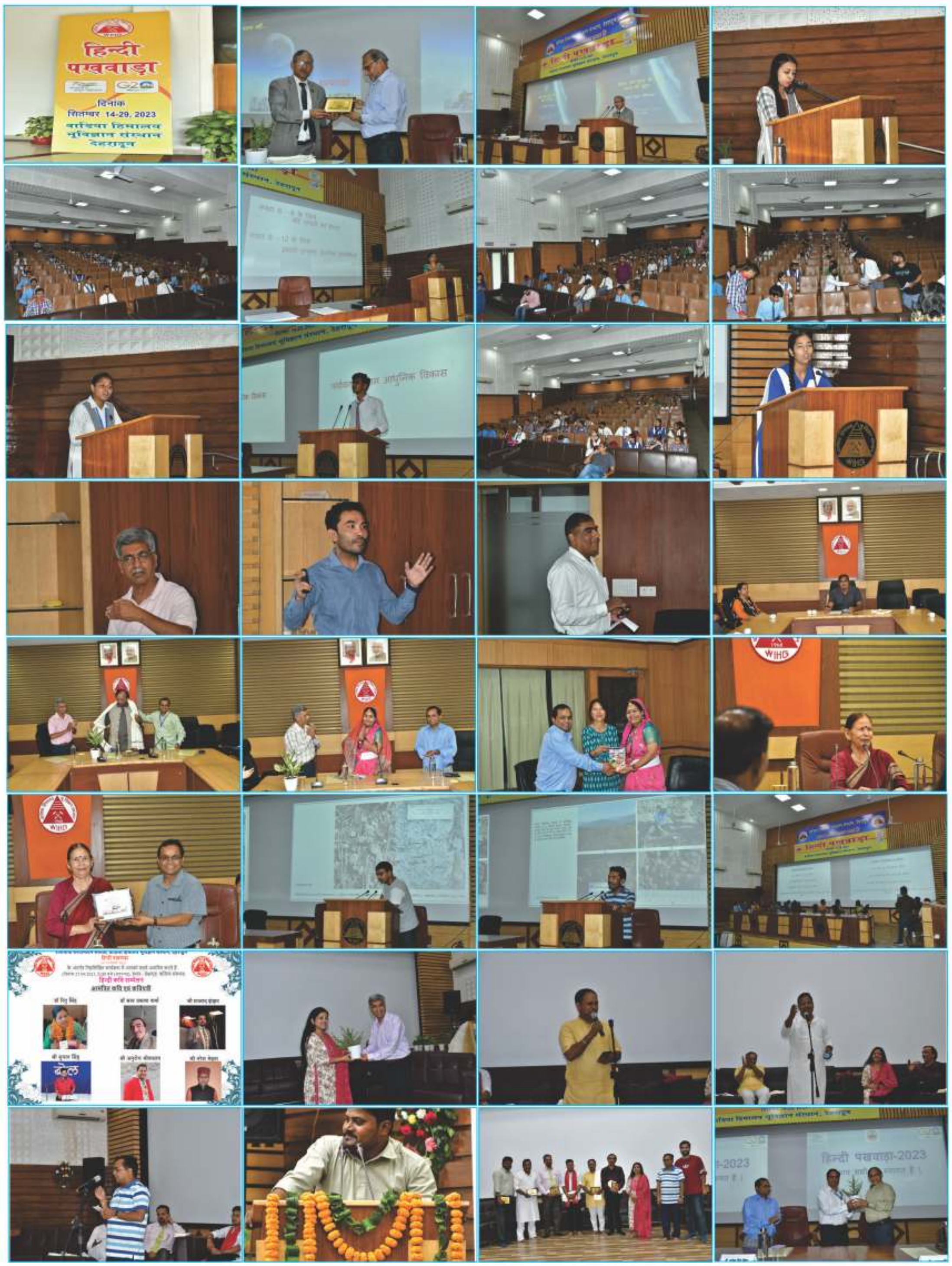

गणतंत्र दिवस -2024

WADIA INSTITUTE OF HIMALAYAN GEOLOGY, DEHRA DUN
PUBLICATIONS AVAILABLE FOR SALE

HIMALAYAN GEOLOGY
(These volumes are the Proceedings of the Annual Seminars on Himalayan Geology organizsed by the Institute)

		(in Rs)	(in US $)
Volume 1	(1971)	130.00	26.00
Volume 2*	(1972)	50.00	
Volume 3*	(1973)	70.00	
Volume 4*	(1974)	115.00	50.00
Volume 5	(1975)	90.00	50.00
Volume 6	(1976)	110.00	50.00
Volume 7	(1977)	110.00	50.00
Volume 8(1)	(1978)	180.00	50.00
Volume 8(2)	(1978)	150.00	45.00
Volume 9(1)	(1979)	125.00	35.00
Volume 9(2)	(1979)	140.00	45.00
Volume 10	(1980)	160.00	35.00
Volume 11	(1981)	300.00	60.00
Volume 12	(1982)	235.00	47.00
Volume 13*	(1989)	1000.00	100.00
Volume 14* (in Hindi)	(1993)	600.00	-
Volume 15*	(1994)	750.00	

(Available from M/s Oxford & IBH Publishing Co. Pvt. Ltd., New Delhi, Bombay, Kolkata)

Volume 16*	(1999)	1000.00	100.00

Journal of Himalayan Geology
(A bi-annual Journal : published from 1990 to 1995)

Annual Subscription	(in Rs)	(in US $)
Institutional	500.00	50.00
Individual	100.00	25.00

Volume 1 (1990) to Volume 6 (1995)*

HIMALAYAN GEOLOGY
(A bi-annual Journal incorporating Journal of Himalayan Geology)

Annual Subscription:	(in Rs)	(in US $)
Institutional	500.00	50.00
Individual	100.00	25.00

Volume 17 (1996)*

HIMALAYAN GEOLOGY

Revised Annual Subscription (w.e.f. 1997):	(in Rs)	(in US$)
Institutional	750.00	50.00
Individual (incl. postage)	100.00	25.00

Volume 18 (1997) to Volume 26 (2005)*
Volume 27 (2006) to Volume 32 (2011)*
Volume 33 (2012)
Volume 34 (2013) to Volume 36 (2016)*
Volume 37 (2015) to Volume 38 (2017)
Volume 39 (2018) to Volume 43 (2022)

Revised Annual Subscription (w.e.f. 2018):	(in Rs)	(in US$)
Institutional	2000.00	150.00
Individual (incl. postage)	600.00	50.00

Volume 44 (2023)

Revised Annual Subscription (w.e.f. 2018):	(in Rs)	(in US$)
Institutional	3000.00	225.00
Individual (incl. postage)	1000.00	100.00

OTHER PUBLICATIONS

Geology of Kumaun Lesser Himalaya, 1980 (by K.S. Valdiya)	Rs. 180.00 US $ 50.00
Geology of Indus Suture Zone of Ladakh, 1983 (by V.C.Thakur & K.K. Sharma)	Rs. 205.00 US $ 40.00
Bibliography on Himalayan Geology, 1975-85	Rs. 100.00 US $ 30.00
Geological Map of Western Himalaya, 1992 (by V.C. Thakur & B.S. Rawat)	Rs. 200.00 US $ 15.00
Excursion Guide :The Siwalik Foreland Basin (Dehra Dun-Nahan Sector), (WIHG Spl. Publ. 1,1991) (by Rohtash Kumar and Others)	Rs. 45.00 US $ 8.00
Excursion Guide : The Himalayan Foreland Basin (Jammu -Kalakot-Udhampur Sector) (WIHG Spl Publ. 2, 1999) (by A.C. Nanda & Kishor Kumar)	Rs. 180.00 US $ 15.00
Glacier Lake Inventory of Uttarakhand (by Rakesh Bhambri et al. 2015)	Rs. 500.00 US $ 50.00
Siwalik Mammalian Faunas of the Himalayan Foothills With reference to biochronology, linkages and migration (by Avinash C. Nanda, 2015)	Rs. 1200.00 US $ 100.00
Lithostratigraphy, Biostratigraphy and Palaeogeography of the Eastern Karakoram, India (by K.P. Juyal, 2018)	Rs. 600.00 US $ 50.00

Note: 'Journal of Himalayan Geology' & 'Himalayan Geology' have been merged and are being published as Himalayan Geology' after 1996.
*** Out of Stock**

Life Time Subscription of Himalayan Geology (Individuals only)
Fee for Print copy : India: 7500.00 Abroad: US$ 750.00
Fee for Soft copy : India: 4000.00 Abroad: US$ 250.00

Trade Discount (In India only)
1-10 copies: 10%, 11-15 copies: 15% and >15 copies: 20%

Offer (for a limited period): A free set of old print volumes (1971 to 2012, subject to availability) of 'Himalayan Geology' will be provided to the new registered Life Time Subscribers (Postage to be borne by the subscriber).

Publications: *may be purchased from Publication & Documentation Section and Draft/Cheque may be drawn in the name of The Director, Wadia Institute of Himalayan Geology, 33- General Mahadeo Singh Road, Dehra Dun – 248 001*

Phone: 0135-2525430 Fax: (91) 0135-625212 Website: http://www.himgeology.com E-mail: himgeol@wihg.res.in